दर्से अख़लाक़

अलहसनैन इस्लामी नैटवर्क

बिस्मिल्ला हिर्रहमा निर्रहीम

ये किताब अलग अलग अखलाकी दरसो को जमा कर के बनाई गई है लेहाज़ा क़ारेईन से गुज़ारिश है कि मुख्तलिफ हैडिंग देख कर ये न समझे कि किताब पूरी नही है।

सिफ़ाते मोमिन(१)

हदीस-

रुविया इन्ना रसूलल्लाहि (सल्लल्लाहु अलैहि व आलिहि) क़ाला “यकमलु अलमोमिनु ईमानहु हत्ता यहतविया अला माइता व सलासा ख़िसालिन फेलिन व अमलिन व नियतिन व बातिनिन व ज़ाहिरिन फ़क़ाला अमिरुल मुमिनीना(अलैहिस्सलाम) या रसूलल्लाह (सलल्ललाहु अलैहि व आलिहि) मा अलमाअतु व सलासा ख़िसालिन ? फ़क़ाला (सलल्ललाहु अलैहि व आलिहि) या अली मिन सिफ़ातिल मुमिनि अन यकूना जव्वालुल फ़िक्र, जौहरियुज़्ज़िक्र, कसीरन इल्मुहु, अज़ीमन हिल्मुहु, जमीलुल मनाज़िअतुन..... ”[१]

तर्जमा-

पैग़म्बरे अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व आलिहि) ने अमीरल मोमेनीन अली (अलाहिस्सलाम) से फ़रमाया कि मोमिने कामिल में १०३ सिफ़तें होती हैं और यह तमाम सिफ़ात पाँच हिस्सों में तक़सीम होती हैं, सिफ़ाते फेली, सिफ़ाते अमली, सिफ़ाते नियती और सिफ़ाते ज़ाहिरी व बातिनी इसके बाद अमीरुल

मोमेनीन(अलैहिस्सलाम) ने अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह के रसूल वह यह १०३ सिफ़ात क्या हैं ?हज़रत ने फ़रमाया कि ऐ अली मोमिन के सिफ़ात यह हैं कि वह हमेशा फ़िक्र करता है और खुलेआम अल्लाह का ज़िक्र करता है, उसका इल्म, होसला और तहम्मुल ज़्यादा होता है और दुश्मन के साथ भी अच्छा बर्ताव करता है.....।

हदीस की शरह

यह हदीस हक़ीक़त में इस्लामी अख़लाक़ का एक दौरा है, जिसको रसूले अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व आलिहि वसल्लम) हज़रत अली (अलैहिस्सलाम) से ख़िताब करते हुए बयान फ़रमा रहे हैं। जिसका ख़ुलासा पाँच हिस्सों होता है जो यह हैं फ़ेल, अमल, नियत,ज़ाहिर और बातिन।

फ़ेल व अमल में क्या फ़र्क़ है ? फ़ेल एक गुज़रने वाली चीज़ है, जिसको इंसान कभी कभी अंजाम देता है, इसके मिक़ाबले में अमल है जिसमें इस्तमरार(निरन्तरता) पाया जाता है।

पैगम्बरे अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व आलिहि वसल्लम) फ़रमाते हैं किः

मोमिन की पहली सिफ़त “जवालुल फ़िक्र ” है यानी मोमिन की फ़िक्र कभी जामिद व राकिद(रुकना) नही होती बल्कि वह हमेशा फ़िक्र करता रहता है और नये मक़ामात पर पहुँचता रहता है और थोड़े से इल्म से क़ाने नही होता। यहाँ पर हज़रत ने पहली सिफ़त फ़िक्र को क़रार दिया है जो फ़िक्र की अहमियत को वाज़ेह करती है।मोमिन का सबसे बेहतरीन अमल तफ़क्कुर (फ़िक्र करना) है और अबुज़र की बेशतर इबादात तफ़क्कुर थी। अगर हम कामों के नतीजे के बारे में फ़िक्र करें, तो उन मुश्किलात में न घिरें जिन में आज घिरे हुए हैं।

मोमिन की दूसरी सिफ़त “जवहरियु अज़्ज़िक्र” है कुछ जगहों पर जहवरियु अज़्ज़िक्र भी आया है हमारी नज़र में दोनों ज़िक्र को ज़ाहिर करने के माआना में हैं। ज़िक्र को ज़ाहिरी तौर पर अंजाम देना क़सदे क़ुरबत के मुनाफ़ी नही है, क्योंकि इस्लामी अहकामात में ज़िक्र जली (ज़ाहिर) और ज़िक्र ख़फ़ी(पोशीदा) दोनो हैं या सदक़ा व ज़कात मख़फ़ी भी है और ज़ाहिरी भी। इनमें से हर एक का अपना ख़ास फ़ायदा है जहाँ पर ज़ाहिरी हैं वहाँ तबलीग़ है और जहाँ पर मख़फ़ी है वह अपना मख़सूस असर रखती है।

मोमिन की तीसरी सिफ़त “कसीरन इल्मुहु ” यानी मोमिन के पास इल्म ज़्यादा होता है। हदीस में है कि सवाब अक़्ल और इल्म के मुताबिक़ है।यानी मुमकिन है कि एक इंसान दो रकत नमाज़ पढ़े और उसके मुक़ाबिल दूसरा इंसान सौ रकत मगर इन दो रकत का सवाब उससे ज़्यादा हो, वाकियत यह है कि इबादत के लिए ज़रीब है और इबादत की इस ज़रीब का नाम इल्म और अक़्ल है।

मोमिन की चौथी सिफ़त “ अज़ीमन हिल्मुहु ” है यानी मोमिन का इल्म जितना ज़्यादा होता जाता है उतना ही उसका हिल्म ज़्यादा होता जाता है। एक आलिम इंसान को समाज में मुख़तलिफ़ लोगों से रूबरू होना पड़ता है अगर उसके पास हिल्म नही होगा तो मुश्किलात में घिर जायेगा। मिसाल के तौर पर हज़रत इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) के हिल्म की तरफ़ इशारा किया जा सकता है। गुज़िश्ता अक़वाम में क़ौमे लूत से ज़्यादा ख़राब कोई क़ौम नही मिलती। और उनका अज़ाब भी सबसे ज़ायादा दर्दनाक था। “ फलम्मा जाआ अमरुना जअलना आलियाहा साफ़िलहा व अमतरना अलैहा हिजारतन मिन सिज्जीलिन मनज़ूद। ”[२] इस तरह के उनके शहर ऊपर नीचे हो गये और बाद में उन पर पत्थरों की बारिश हुई। इस सब के बावजूद जब फ़रिश्ते इस क़ौम पर अज़ाब नाज़िल करने के लिए आये तो पहले हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की ख़िदमत में पहुँचे और उनको बेटे की पैदाइश की खुश ख़बरी दी जिससे वह ख़ुश हो गये, बाद में क़ौमें लूत की

शिफ़ाअत की। “फ़लम्मा ज़हबा अन इब्राहीमा अर्रवउ व जाअतहु अलबुशरा युजादिलुना फ़ी क़ौमि लूतिन० इन्ना इब्राहीमा लहलीमुन अव्वाहुन मुनीब” [४] ऐसी क़ौम की शिफ़ाअत के लिए इंसान को बहुत ज़्यादा हिल्म की ज़रूरत है। यह हज़रत इब्राहीम की बुज़ुर्गी, हिल्म और उनके दिल के बड़े होने की निशानी है। बस आलिम को चाहिए कि अपने हिल्म को बढ़ाये और जहाँ तक हो सके इस्लाह करे न यह कि उसको छोड़ दे।

मोमिन की पाँचवी सिफ़त “जमीलुल मनाज़िअतुन” है यानी अगर किसी से कोई बहस या बात-चीत करनी होती है तो उसको अच्छे अन्दाज में करता है जंगो जिदाल नही करता। आज हमारे समाज की हालत बहुत हस्सास है। ख़तरा हम से सिर्फ़ एक क़दम के फ़ासले पर है इन हालात में अक़्ल क्या कहती है ? क्या अक़्ल यह कहती है कि हम किसी भी मोज़ू को बहाना बना कर, जंग के एक नये मैदान की बुनियाद डाल दें या यह कि यह वक़्त एक दूसरे की मदद करने और आपस में मुत्तहिद होने का “वक़्त” है ?

अगर हम ख़बरों पर ग़ौर करते हैं तो सुनते हैं कि एक तरफ़ तो तहक़ीक़ी टीम इराक़ में तहक़ीक़ में मशग़ूल है दूसरी तरफ़ अमरीका ने अपने आपको हमले के लिए तैयार कर लिया है और अपने जाल को इराक़ के चारो तरफ़ फैलाकर हमले

की तारीख़ मुऐय्यन कर दी है। दूसरी ख़बर यह है कि जिनायत कार इस्राईली हुकुमत का एक आदमी कह रहा है कि हमें तीन मरकज़ों (मक्का, मदीना, क़ुम) को अटम बम्ब के ज़रिये तहस नहस कर देना चाहिए। क्या यह मुमकिन नही है कि यह बात वाक़ियत रखती हो? एक और ख़बर यह कि अमरीकियों का इरादा यह है कि इराक़ में दाखिल होने के बाद वहाँ पर अपने एक फ़ौजी अफसर को ताऐय्युन करें। इसका मतलब यह है कि अगर वह हम पर भी मुसल्लत हो गये तो किसी भी गिरोह पर रहम नही करेगें और किसी को भी कोई हिस्सा नहीं देगें। एक ख़बर यह कि जब मजलिस (पार्लियामैन्ट) में कोई टकराव पैदा हो जाता है या स्टूडैन्टस का एक गिरोह जलसा करता है तो दुश्मन का माडिया ऐसे मामलात की तशवीक़ करता है और चाहता है कि यह सिलसिला जारी रहे। क्या यह सब कुछ हमारे बेदार होने के लिए काफ़ी नही है? क्या आज का दिन “व आतसिमू बिहबलिल्लाहि जमीअन वला तफ़र्रिक़ू” व रोज़े वहदते मिल्ली नही है ? अक़्ल क्या कहती है ? ऐ मुसन्निफ़ो, मोल्लिफ़ो, ओहदेदारो, मजलिस के नुमाइन्दो व दानिशमन्दों ख़ुदा के लिए बेदार हो जाओ। क्या अक़्ल इस बात की इजाज़त देती है कि हम किसी भी मोज़ू को बहाना बना कर जलसे करें और उनको यूनिवर्सिटी से लेकर मजलिस तक और दूसरे मक़ामात इस तरह फैलायें कि दुश्मन उससे ग़लत फ़ायदा उठाये ? मैं उम्मीदवार हूँ कि अगर कोई ऐतराज़ भी है तो उसको “जमीलुल मनाज़िअतुन” की सूरत में बयान करना चाहिए कि यह मोमिन की

सिफ़त है। हमें चाहिए कि क़ानून को अपना मेयार बनायें और वहदत के मेयारों को बाक़ी रखें।

अक्सर लोग मुतदय्यन हैं, जब माहे रमज़ान या मोहर्रम आता है तो पूरे मुल्क का नक़्शा ही बदल जाता है, इसका मतलब यह है कि लोगों को दीन से मुहब्बत है। आगे बढ़ो और दीन के नाम पर जमा हो जाओ और इससे फ़ायदा उठाओ यह एक ज़बर्दस्त ताक़त और सरमाया है।

सिफ़ाते मोमिन(२)

गुज़िश्ता अखलाक़ी बहस में पैगम्बरे इस्लाम (स.) की एक हदीस नक़्ल की जिसमें आप हज़रत अली (अ.) को खिताब करते हुए फ़रमाते बैं कि कोई भी उस वक़्त तक मोमिन नही बन सकता जब तक उसमें १०३ सिफ़ात जमा न हो जायें, यह सिफ़ात पाँच हिस्सो में तक़सीम होती है। पाँच सिफ़ात कल के जलसे में बयान हो चुकी हैं और पाँच सिफ़ात की तरफ़ आज इशारा करना है।

हदीस-

“..... करीमुल मुराजिअः, औसाउ अन्नासि सदरन, अज़ल्लाहुम नफ़सन, सहकाहु तबस्सुमन, व इजतमाअहु ताल्लुमन.....”[४]

तर्जमा-

.... वह करीमाना अन्दाज़ में मिलता है, उसका सीना सबसे ज़्यादा कुशादा होता है, वह बहुत ज़्यादा मुतवाज़े होता है, वह ऊँची आवाज़ में नही हसता और जब वह लोगों के दरमियान होता है तो तालीम व ताल्लुम करता.....।

मोमिन की छटी सिफ़त “करीमुल मुराजिअः ” है यानी वह करीमाना अनदाज़ में मिलता जुलता है। इस में दो एहतेमाल पाये जाते हैं।

1- जब लोग उससे मिलने आते हैं तो वह उन के साथ करीमाना बर्ताव करता है। यानी अगर वह उन कामों पर क़ादिर होता है जिन की वह फ़रमाइश करते हैं तो या उसी वक़्त उसको अंजाम दे देता है या यह कि उसको आइंदा अंजाम देने का वादा कर लेता है और अगर क़ादिर नही होता तो माअज़ेरत कर लेता है। क़ुरआन कहता है कि “क़ौलुन माअरूफ़ुन व मग़िफ़िरतुन ख़ैरुन मिन सदक़तिन यतबउहा अज़न” [५]

2- या यह कि जब वह लोगों से मिलने जाता है तो उसका अन्दाज़ करीमाना होता है। यानी अगर किसी से कोई चीज़ चाहता है तो उसका अन्दाज़ मोद्देबाना होता है, उस चीज़ को हासिल करने के लिए इसरार नही करता, और सामने वाले को शरमिन्दा नही करता।

मोमिन की सातवी सिफ़त “औसाउ अन्नासि सदरन ” है यानी उसका सीना सबसे ज़्यादा कुशादा होता है। क़ुरआन सीने की कुशादगी के बारे में फ़रमाता है कि “फ़मन युरिदि अल्लाहु अन यहदियाहु यशरह सदरहु लिल इस्लामि व मन युरिद अन युज़िल्लाहुयजअल सदरहु ज़य्यिक़न हरजन...। ”[६] अल्लाह जिसकी हिदायत करना चाहता है(यानी जिसको क़ाबिले हिदायत समझता है) इस्लाम क़बूल करने के लिए उसके सीने को कुशादा कर देता है और जिसको गुमराह करना चाहता है(यानी जिसको क़ाबिले हिदायत नही समझता) उसके सीने को तंग कर देता है।

“सीने की कुशादगी” के क्या माअना है ? जिन लोगों का सीना कुशादा होता है वह सब बातों को(नामुवाफ़िक़ हालात, मुश्किलात, सख़्त हादसात..) बर्दाश्त करते हैं। बुराई उन में असर अन्दाज़ नही होती है,वह जल्दी नाउम्मीद नही होते, इल्म, हवादिस, व माअरेफ़त को अपने अन्दर समा लेते हैं, अगर कोई उनके साथ कोई

बुराई करता है तो वह उसको अपने ज़हन के एक गोशे में रख लेते हैं और उसको उपने पूरे वजूद पर हावी नही होने देते। लेकिन जिन लोगों के सीने तंग हैं अगर उनके सामने कोई छोटीसी भी नामुवाफ़िक़ बात हो जाती है तो उनका होसला और तहम्मुल जवाब दे जाते है।

मोमिन का आठवी सिफ़त “अज़ल्लाहुम नफ़्सन” है अर्बी ज़बान में “ज़िल्लत” के माअना फ़रोतनी व “ज़लूल” के माअना राम व मुतीअ के हैं। लेकिन फ़ारसी में ज़िल्लत के माअना रुसवाई के हैं बस यहाँ पर यह सिफ़त फ़रोतनी के माअना में है। यानी मोमिन के यहाँ फ़रोतनी बहुत ज़्यादा पाई जाती है और वह लोगों से फ़रोतनी के साथ मिलता है। सब छोटों बड़ो का एहतेराम करता है और दूसरों से यह उम्मीद नही रख़ता कि वह उसका एहतेराम करें।

मोमिन की नौवी सिफ़त “ज़हकाहु तबस्सुमन” है। मोमिन बलन्द आवाज़ में नही हँसता है। रिवायात में मिलता है कि पैग़म्बरे इस्लाम(स.) कभी भी बलन्द आवाज़ में नही हँसे। बस मोमिन का हँसना भी मोद्देबाना होता है।

मोमिन की दसवी सिफ़त “इजतमाउहु तल्लुमन ” है। यानी मोमिन जब लोगों के दरमियान बैठता है तो कोशिश करता है कि तालाम व ताल्लुम में मशग़ूल रहे और

वह ग़ीबत व बेहूदा बात चीत से जिसमें उसके लिए कोई फ़ायदा नही होता परहेज़ करता है।

सिफ़ाते मोमिन (३)

इस से पहले जलसे में पैग़म्बर (स.) की एक हदीस बयान की जिसमें आपने मोमिन के १०३ सिफ़ात बयान फ़माये है, उनमें से दस साफ़ात बयान हो चुके हैं और इस वक़्त छः सिफ़ात और बयान करने हैं।

हदीस- " ..... मुज़क्किरु अलग़ाफ़िल, मुअल्लिमु अलजाहिल, ला यूज़ी मन यूज़ीहु वला यखूज़ु फ़ी मा ला युअनीहु व ला युशमितु बिमुसीबतिन व ला युज़क्किरु अहदन बिग़ैबतिन.....।[७]"

तर्जमा-

मोमिन वह इंसान है जो ग़ाफ़िल लोगों को आगाह() करता है, जाहिलों को तालीम देता है, जो लोग उसे अज़ीयत पहुँचाते हैं वह उनको नुक़्सान नही पहुँचाता, जो चीज़ उससे मरबूत नही होती उसमें दख़ल नही देता, अगर उसको नुक़्सान

पहुँचाने वाला किसी मुसिबत में घिर जाता है तो वह उसके दुख से खुश नही होता और ग़ीबत नही करता।

मोमिन की ग्यारहवी सिफ़त "मुज़क्किरु अलग़ाफ़िल" है। यानी मोमिन ग़ाफ़िल (अचेत) लोगों को मतवज्जेह करता है। ग़ाफ़िल उसे कहा जाता है जो किसी बात को जानता हो मगर उसकी तरफ़ मुतवज्जह न हो। जैसे जानता हो कि शराब हराम है मगर उसकी तरफ़ मुतवज्जेह न हो।

मोमिन की बारहवी सिफ़त "मुअल्लिमु अलजाहिलि " है। यानी मोमिन जाहिलों को तालीम देता है। जाहिल, ना जानने वाले को कहा जाता है।

ग़ाफिल को मुतवज्जेह करने, जाहिल को तालीम देने और अम्र बिल मारूफ़ व नही अनिल मुनकर में क्या फ़र्क़ है ?

इन तीनों वाजिबों को एक नही समझना चाहिए। "ग़ाफ़िल" उसको कहते हैं जो हुक्म को जानता है मगर मुतवज्जेह नही है(मोज़ू को भूल गया है) मसलन जानता है कि ग़ीबत करना गुनाह है लेकिन इससे ग़ाफ़िल हो कर ग़ीबत में मशग़ूल हो गया है। "जाहिल" वह है जो हुक्म को ही नही जानता और हम

चाहते हैं कि उसे हुक्म के बारे में बतायें। जैसे - वह यह ही नही जानता कि ग़ीबत हराम है। अम्र बिल मारूफ़ नही अनिल मुनकर वहाँ पर है जहाँ मोज़ू और हुक्म के बारे में जानता हो यानी न ग़ाफ़िल हो न जाहिल। इन सब का हुक्म क्या है ?

“ग़ाफ़िल” यानी अगर कोई मोज़ू से ग़ाफ़िल हो और वह मोज़ू मुहिम न हो तो वाजिब नही है कि हम उसको मुतवज्जेह करें। जैसे- नजिस चीज़ का खाना। लेकिन अगर मोज़ू मुहिम हो तो मुतवज्जेह करना वाजिब है जैसे- अगर कोई किसी बेगुनाह इंसान का खून उसको गुनाहगार समझते हुए बहा रहा हो तो इस मक़ाम पर मुतवज्जेह करना वाजिब है।

“जाहिल” जो अहकाम से जाहिल हो उसको तालीम देनी चाहिए और यह वाजिब काम है।

“अम्र बिल मारूफ़ व नही अनिल मुनकर” अगर कोई इंसान किसी हुक्म के बारे में जानता हो व ग़ाफिल भी न हो और फिर भी गुनाह अंजाम दे तो हमें चाहिए कि उसको नर्म ज़बान में अम्र व नही करें।

यह तीनों वाजिब हैं मगर तीनों के दायरों में फ़र्क़ पाया जाता है। और अवाम में जो यह कहने की रस्म हो गई है कि “मूसा अपने दीन पर, ईसा अपने दीन पर” या यह कि “ मुझे और तुझे एक कब्र में नही दफ़नाया जायेगा” बेबुनियाद बात है। हमें चाहिए कि आपस में एक दूसरे को मुतवज्जेह करें और अम्र बिल मारूफ़ व नही अनिल मुनकर से ग़ाफ़िल न रहें। यह दूसरों का काम नही है। रिवायात में मिलता है कि समाज में गुनाहगार इंसान की मिसाल ऐसी है जैसे कोई किश्ती में बैठ कर अपने बैठने की जगह पर सुराख करे और जब उसके इस काम पर एतराज़ किया जाये तो कहे कि मैं तो अपनी जगह पर सुराख कर रहा हूँ। तो उसके जवाब में कहा जाता है कि इसके नतीजे में हम सब मुश्तरक (सम्मिलित) हैं अगर किश्ति में सुराख़ होगा तो हम सब डूब जायेंगे। रिवायात में इसकी दूसरी मिसाल यह है कि अगर बाज़ार में एक दुकान में आग लग जाये और बाज़ार के तमाम लोग उसको बुझाने के लिए इक़दाम करें तो वह दुकानदार यह नही कह सकता कि तुम्हे क्या मतलब यह मेरी अपनी दुकान है, क्योंकि उसको फौरन सुन ने को मिलेगा कि हमारी दुकानें भी इसी बाज़ार में हैं मुमकिन है कि आग हमारी दुकान तक भी पहुँच जाये। यह दोनों मिसालें अम्र बिल मारूफ व नही अनिल मुनकर के फ़लसफ़े की सही ताबीर हैं। और इस बात की दलील, कि यह सब का फ़रीज़ा है यह है कि समाज में हम सबकी सरनविश्त मुश्तरक है।

मोमिन की तेरहवी सिफ़त- “ला युज़ी मन युज़ीहु” है। यानी जो उसको अज़ीयत देते हैं वह उनको अज़ीयत नही देता। दीनी मफ़ाहीम में दो मफ़हूम पाये जाते हैं जो आपस में एक दूसरे से जुदा है।।

1- अदालत- अदालत के माअना यह हैं कि “मन ऐतदा अलैकुम फ़अतदू अलैहि बिमिसलिन मा ऐतदा अलैकुम” यानी तुम पर जितना ज़ुल्म किया है तुम उससे उसी मिक़दार में तलाफ़ी करो।

2- फ़ज़ीलत- यह अदल से अलग एक चीज़ है जो वाक़ियत में माफ़ी है। यानी बुराई के बदले भलाई और यह एक बेहतरीन सिफ़त है जिसके बारे में पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने फ़रमाया कि “युअती मन हरूमहु व यअफ़ु मन ज़लमहु युसिल मन क़तअहु ” जो उसे किसी चीज़ के देने में दरेग़ करता है उसको अता करता है, जो उस पर ज़ुल्म करता है उसे माफ़ करता है, जो उससे क़तअ ताल्लुक़ करता है उससे मिलता है। यानी जो मोमिने कामिल है वह अदालत को नही बल्कि फ़ज़ीलत को इख़्तियार करता है। (अपनाता है।)

मोमिन की चौदहवी सिफ़त- “वला यख़ुज़ु फ़ी मा ला युअनीहु ”है यानी मोमिने वाक़ई उस चीज़ में दख़ालत नही करता जो उससे मरबूत न हो। “मा ला युअनीहु ” “मा ला युक़सिदुहु” के माअना में है यानी वह चीज़ आप से मरबूत नही है। एक

अहम मुश्किल यह है कि लोग उन कामों में दख़ालत करते हैं जो उनसे मरबूत नही है।हुकुमती सतह पर भी ऐसा ही है। कुछ हुकुमतें दूसरों के मामलात में दख़ालत करती हैं।

मोमिन की पन्दरहवी सिफ़त- “व ला युश्मितु बिमुसिबतिन ” है। ज़िन्दगी में अच्छे और बुरे सभी तरह के दिन आते हैं। मोमिन किसी को परेशानी में घिरा देख कर उसको शमातत नही करता यानी यह नही कहता कि “ देखा अल्लाह ने तुझ को किस तरह मुसिबत में फसाया मैं पहले ही नही कहता था कि ऐसा न कर” क्योंकि इस तरह बातें जहाँ इंसान की शुजाअत के ख़िलाफ़ हैं वहीँ ज़ख्म पर नमक छिड़कने के मुतरादिफ़ भी। अगरचे मुमकिन है कि वह मुसिबत उसके उन बुरे आमाल का नतीजा ही हों जो उसने अंजाम दिये हैं लेकिन फिर भी शमातत नही करनी चाहिए, क्योंकि हर इंसान की ज़िन्दगी में सख़्त दिन आते हैं क्या पता आप खुद ही कल किसी मुसीबत में घिर जाओ।

मोमिन की सौलहवी सिफ़त- “ व ला युज़करु अहदन बिग़िबतिन” है। यानी वह किसी का ज़िक्र भी ग़िबत के साथ नही करता। ग़ीबत की अहमियत के बारे में इतना ही काफ़ी है कि मरहूम शेख मकासिब में फ़रमाते हैं कि अगर ग़ीबत करने वाला तौबा न करे तो दोज़ख में जाने वाला पहला नफ़र होगा, और अगर तौबा

करले और तौबा क़बूल हो जाये तब भी सबसे आख़िर में जन्नत में वारिद होगा। ग़ीबत मुसलमान की आबरू रेज़ी करती है और इंसान की आबरू उसके खून की तरह मोहतरम है और कभी कभी आबरू खून से भी ज़्यादा अहम होती है।

.....

हवाले

[1] बिहारुल अनवार जिल्द ६४ बाब अलामातुल मोमिन हदीस ४५पेज न. ३१०

[2] सूरए हूद /८२

[3] सूरए हूद/ ७४-७५

[4] बिहारूल अनवार जिल्द ६४/३१०

[5] सूरए बक़रः/२६३

[6] सूरए अनआम/१२५

[7] बिहारुल अनवार जिल्द ४६/३१०

सिफ़ाते मोमिन (४)

मुक़द्दमा-

पिछले जलसों में हमने पैग़म्बरे अकरम (स.) की एक हदीस जो आपने हज़रत अली (अ.) से खिताब फ़रमाई बयान की, यह हदीस मोमिने कामिल के(१०३) सिफ़ात के बारे में थी। इस हदीस से १६ सिफ़ात बयान हो चुकी हैं और अब छः सिफात की तरफ़ और इशारा करना है।

हदीस-

“.....बरीअन मिन मुहर्रिमात, वाक़िफन इन्दा अश्शुबहात, कसीरुल अता, क़लीलुल अज़ा, औनन लिल ग़रीब, व अबन लिल यतीम.....।” [१]

तर्जमा-

मोमिन हराम चीज़ों से बेज़ार रहता है, शुबहात की मंज़िल पर तवक़्क़ुफ़ करता है और उनका मुरतकिब नही होता, उसकी अता बहुत ज़्यादा होती है, वह लोगों को

बहुत कम अज़ीयत देता है, मुसाफ़िरों की मदद करता है और यतीमों का बाप होता है।

हदीस की शरह-

मोमिन की सतरहवी सिफ़त- “ बरीअन मिन अलमुहर्रिमात” है, यानी मोमिन वह है जो हराम से बरी और गुनाहसे बेज़ार है। गुनाह अंजाम न देना और गुनाह से बेज़ार रहना इन दोनों बातों में फ़र्क़ पाया जाता है। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो गुनाह में लज़्ज़त तो महसूस करते हैं मगर अल्लाह की वजह से गुनाह को अंजाम नही देते। यह हुआ गुनाह अंजाम न देना, मगर कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो तहज़ीबे नफ़्स के ज़रिये इस मक़ाम पर पहुँच जाते हैं कि उनको गुनाह से नफ़रत हो जाती है और वह गुनाह से हरगिज़ लज़्ज़त नही लेते बस यही गुनाह से बेज़ारी है। और इंसान को उस मक़ाम पर पहुँचने के लिए जहाँ पर अल्लाह की इताअत से लज़्ज़त और गुनाह से तनफ़्फ़ुर पैदा हो बहुत ज़्यादा जहमतों का सामना करना पड़ता है।

मोमिन की अठ्ठारहवी सिफ़त- “ वाक़िफ़न इन्दा अश्शुबहात” है। यानी मोमिन वह है जो शुबहात के सामने तवक़्क़ुफ़ करता है। शुबहात मुहर्रेमात का दालान है

और जो भी शुबहात का मुर्तकिब हो जाता है वह मुहर्रेमात में फ़स जाता है। शुबहात बचना चाहिए क्योंकि शुबहात उस ठलान मानिन्द है जो किसी दर्रे के किनारे वाक़ेअ हो। दर वाक़ेअ शुबहात मुहर्रेमात का हरीम (किसी इमारत के अतराफ़ का हिस्सा) हैं लिहाज़ा उनसे इसी तरह बचना चाहिए जिस तरह ज़्यादा वोल्टेज़ वाली बिजली से क्योंकि अगर इंसान मुऐय्यन फ़ासले की हद से आगे बढ़ जाये तो वह अपनी तरफ़ खैंच कर जला डालती है इसी लिए उसके लिए हरीम(अतराफ़ के फासले) के क़ाइल हैं। कुछ रिवायतों में बहुत अच्छी ताबीर मिलती है जो बताती हैं कि लोगों के हरीम में दाखिल न हो ताकि उनके ग़ज़ब का शिकार न बन सको। बहुत से लोग ऐसे हैं जो मंशियात का शिकार हो गये हैं शुरू में उन्होंने तफ़रीह में नशा किया लेकिन बाद में बात यहाँ तक पहुँची कि वह उसके बहुत ज़्यादा आदि हो गये।

मोमिन की उन्नीसवी सिफ़त- “कसीरुल अता ” है। यानी मोमिन वह है जो कसरत से अता करता है यहाँ पर कसरत निस्बी है(यानी अपने माल के मुताबिक़ देना) मसलन अगर एक बड़ा अस्पताल बनवाने के लिए कोई बहुत मालदार आदमी एक लाख रुपिये दे तो यह रक़म उसके माल की निस्बत कम है लेकिन अगर एक मामूली सा मुंशी एक हज़ार रूपिये दे तो सब उसकी तारीफ़ करते हैं क्योकि यह रक़म उसके माल की निस्बत ज़्यादा है। जंगे तबूक के मौक़े पर पैगम्बरे इस्लाम

(स.) ने इस्लामी फ़ौज की तैय्यारी के लिए लोगों से मदद चाही लोगों ने बहुत मदद की इसी दौरान एक कारीगर ने इस्लामी फ़ौज की मदद करने के लिए रात में इज़ाफ़ी काम किया और उससे जो पैसा मिला वह पैग़म्बर (स.) की खिदमत में पेश किया उस कम रक़म को देख कर मुनाफ़ेक़ीन ने मज़ाक़ करना शुरू कर दिया फौरन आयत नाज़िल हुई

“अल्लज़ीना यलमिज़ूना अलमुत्तव्विईना मिनल मुमिनीना फ़ी अस्सदक़ाति व अल्लज़ीना ला यजिदूना इल्ला जुहदा हुम फ़यसख़रूना मिन हुम सख़िरा अल्लाहु मिन हुम व लहुम अज़ाबुन अलीमुन।” [२] जो लोग उन पाक दिल मोमेनीन का मज़ाक़ उड़ाते है जो अपनी हैसियत के मुताबिक़ कुमक करते हैं, तो अल्लाह उन का मज़ाक़ उड़ाने वालों का मज़ाक़ उड़ाता है। पैग़म्बर (स.) ने फरमाया अबु अक़ील अपनी खजूर इन खजूरों पर डाल दो ताकि तुम्हारी खजूरों की वजह से इन खजूकरों में बरकत हो जाये।

मोमिन की बीसवी सिफ़त- “ क़लीलुल अज़ा ” है यानी मोमिन कामिलुल ईमान की तरफ़ से अज़ीयत कम होती है इस मस्अले को वाज़ेह करने के लिए एक मिसाल अर्ज़ करता हूँ । हमारी समाजी ज़िन्दगीं ऐसी है अज़यतों से भरी हुई है। नमूने के तौर पर घर की तामीर जिसकी सबको ज़रूरत पड़ती है, मकान की

तामीर के वक़्त लोग तामीर के सामान (जैसे ईंट, पत्थर, रेत, सरिया...) को रास्तों में फैला कर रास्तों को घेर लेते हैं जिससे आने जाने वालों को अज़ियत होती है। और यह सभी के साथ पेश आता है लेकिन अहम बात यह है कि समाजी ज़िन्दगी में जो यह अज़ियतें पायी जाती हैं इन को जहाँ तक मुमकिन हो कम करना चाहिए। बस मोमिन की तरफ़ से नोगों को बहुत कम अज़ियत होती है।

मोमिन की इक्कीसवी सिफ़त- “औनन लिल ग़रीब” है। यानी मोमिन मुसाफ़िरों की मदद करता है। अपने पड़ौसियों और रिश्तेदारों की मदद करना बहुत अच्छा है लेकिन दर वाक़ेअ यह एक बदला है यानी आज मैं अपने पड़ौसी की मदद करता हूँ कल वह पड़ौसी मेरी मेरी मदद करेगा। अहम बात यह है कि उसकी मदद की जाये जिससे बदले की उम्मीद न हो लिहाज़ा मुसाफ़िर की मदद करना सबसे अच्छा है।

मोमिन की बाइसवी सिफ़त- “अबन लिल यतीम” है। यानी मोमिन यतीम के लिए बाप की तरह होता है। पैग़म्बर ने यहाँ पर यह नही फरमाया कि मोमिन यतीमों को खाना खिलाता है, उनसे मुहब्बत करता है बल्कि परमाया मोमिन यतीम के लिए बाप होता है। यानी वह तमाम काम जो एक बाप अपने बच्चे के लिए अंजाम देता है, मोमिन यतीम के लिए अंजाम देता है।

यह तमाम अख़लाक़ी दस्तूर सख़्त मैहौल में बयान हुए और इन्होंने अपना असर दिखाया। हम उम्मीदवार हैं कि अल्लाह हम सबको अमल करने की तौफ़ाक़ दे और हम इन सिफ़ात पर तवज्जुह देते हुए कामिलुल ईमान बन जायें।

सिफ़ाते मोमिन (५)

मुक़द्दमा-

गुज़िश्ता जलसों में पैग़म्बरे इस्लाम (स.) की एक हदीस बयान की जो आपने हज़रत अली अलैहिस्सलाम से खिताब फ़रमायी थी इसमें मोमिन के १०३ सिफ़ात बयान फ़रमाये गये हैं जिनमें से बाईस सिफ़ात बयान हो चुके हैं और आज हम इस जलसे में चार सिफ़ात और बयान करेगें।

हदीस-

“.....अहला मिन अश्शहदि व असलद मिन अस्सलद, ला यकशफ़ु सर्रन व ला यहतकु सितरन..... ” [३]

तर्जमा-

मोमिन शहद से ज़्यादा मीठा औक पत्थर से ज़यादा सख़्त होता है, जो लोग उसको अपने राज़ बता देते हैं वह उन राज़ो को आशकार नही करता और अगर ख़ुद से किसी के राज़ को जान लेता है तो उसे भी ज़ाहिर नही करता है।

हदीस की शरह-

मोमिन की तेइसवी सिफ़त- “अहला मिन अश्शहद” है। मोमिन शहद से ज़्यादा मीठा होता है यानी दूसरों के साथ उसका सलूक बहुत अच्छा होता है। आइम्मा-ए-मासूमीन अलैहिमुस्सलाम और ख़ास तौर पर हज़रत अली अलैहिस्सलाम के बारे में मशहूर है कि आपकी नशिस्त और मुलाक़ातें बहुत शीरीन हुआ करती थीं, आप अहले मीज़ाह और लतीफ़ बातें करने वाले थे। कुछ लोग यह ख़्याल हैं कि इंसान जितना ज़्यादा मुक़द्दस हो उसे उतना ही ज़्यादा तुर्शरू होना चाहिए। जबकि वाक़ियत यह है कि इंसान के समाजी, सियासी, तहज़ीबी व दिगर पहलुओं में तरक़्क़ी के लिए जो चीज़ सबसे ज़्यादा असर अंदाज़ है वह नेक सलूक ही है। कभी-कभी सख्त से सख्त मुश्किल को भी नेक सलूक, मुहब्बत भरी बातों और ख़न्दा पेशानी के ज़रिये हल किया जासकता है। नेक सलूक के ज़रिये जहाँ उक़्दों

को हल और कदूरत को पाक किया जासकता है, वहीँ गुस्से की आग को ठंडा कर आपसी तनाज़ों को भी ख़त्म किया जासकता है।

पैग़म्बर (स.) फ़रमाते हैं कि “अक्सरु मा तलिजु बिहि उम्मती अलजन्नति तक़वा अल्लाहि व हुसनुल ख़ुल्क़ि।” [४] मेरी उम्मत के बहुत से लोग जिसके ज़रिये जन्नत में जायेंगे वह तक़वा और अच्छा अखलाक़ है।

मोमिन की चौबीसवी सिफ़त- “अस्लदा मिन अस्सलदि ”है यानी मोमिन पत्थर से ज़्यादा सख़्त होता है। कुछ लोग “अहला मिन अश्शहद” मंज़िल में हद से बढ़ गये हैं और ख़्याल करते हैं कि खुश अखलाक़ होने का मतलब यह है कि इंसान दुश्मन के मुक़ाबले में भी सख़्ती न बरते। लेकिन पैग़म्बर (स.) फ़रमाते हैं कि मोमिन शदह से ज़्यादा शीरीन तो होता है लेकिन सुस्त नही होता, वह दुश्मन के मुक़ाबले में पहाड़ से ज़्यादा सख़्त होता है। रिवायत में मिलता है कि मोमिन दोस्तों में रहमाउ बैनाहुम और दुश्मन के सामने अशद्दाउ अलल कुफ़्फ़ार का मिसदाक़ होता है। मोमिन लोहे से भी ज़्यादा सख़्त होता है (अशद्दु मिन ज़बरिल हदीद व अशद्दु मिनल जबलि) चूँकि लोहे और पहाड़ को तराशा जा सकता है लेकिन मोमिन को तराशा नही जा सकता। जिस तरह हज़रत अली (अ.) थे,लेकिन एक गिरोह ने यह बहाना बनाया कि क्योंकि वह शौख़ मिज़ाज है इस लिए ख़लीफ़ा

नही बन सकते जबकि वह मज़बूत और सख़्त थे। लेकिन जहाँ पर हालात इजाज़त दें इंसान को ख़ुश्क और सख़्त नही होना चाहिए, क्यों कि जो दुनिया में सख़्ती करेगा अल्लाह उस पर आख़िरत में सख़्ती करेगा।

मोमिन की पच्चीसवी सिफ़त- “ ला यकशिफ़ु सिर्रन ” है। यानी मोमिन राज़ों को फ़ाश नही करता , राज़ों को फ़ाश करने के क्या माअना हैं ?

हर इंसान की ख़सूसी ज़िन्दगी में कुछ राज़ पाये जाते हैं जिनके बारे में वह यह चाहता है कि वह खुलने न पाये होते हैं । क्योंकि अगर वह राज़ खुल जायेगें तो उसको ज़िन्दगी में बहुत सी मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा। अगर कोई इंसान अपने राज़ को किसी दूसरे से बयान करदे तो और कहे कि “अल मजालिसु अमानात” यानी यह बाते जो यहाँ पर हुई हैं अपके पास अमानत हैं, तो यह राज़ है और इसको किसी दूसरे के सामने बयान नही करना चाहिए। रिवायात में तो यहाँ तक आया है कि अगर कोई आप से बात करते हुए इधर उधर इस वजह से देखता रहे कि कोई दूसरा न सुन ले, तो यह राज़ की मिस्ल है चाहे वह न कहे कि यह राज़ है। मोमिन का राज़ मोमिन के खून की तरह मोहतरम है लिहाज़ा किसी मोमिन के राज़ को ज़ाहिर नही करना चाहिए।

मोमिन की छब्बीसवी सिफ़त- “ला युहतकु सितरन ” है। यानी मोमिन राज़ों को फ़ाश नही करता। हतके सित्र (राज़ो का फ़ाश करना) कहाँ पर इस्तेमाल होता है इसकी वज़ाहत इस तरह की जासकती है कि अगर कोई इंसान अपना राज़ मुझ से न कहे बल्कि मैं खुद किसी तरह उसके राज़ के बारे में पता लगालूँ तो यह हतके सित्र है। लिहाज़ा ऐसे राज़ को फ़ाश नही करना चाहिए, क्यों कि हतके सित्र और उसका ज़ाहिर करना ग़ीबत की एक क़िस्म है। और आज कल ऐसे राज़ों को फ़ाश करना एक मामूलसा बन गया है। लेकिन हमको इस से होशियार रहना चाहिए अगर वह राज़ दूसरों के लिए नुक़्सान देह न हो और ख़ुद उसकी ज़ात से वाबस्ता हो तो उसको ज़ाहिर नही करना चाहिए। लेकिन अगर किसी ने निज़ाम, समाज, नामूस, जवानो, लोगों के ईमान... के लिए ख़तरा पैदा कर दिया है तो उस राज़ को ज़ाहिर करने में कोई इशकाल नही है। जिस तरह अगर ग़ीबत मोमिन के राज़ की हिफ़ाज़ से अहम है तो विला मानेअ है इसी तरह हतके सित्र में भी अहम और मुहिम का लिहाज़ ज़रूरी है।

अल्लाह हम सबको अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये।

सिफ़ाते मोमिन (६)

मुक़द्दमा- इस हफ़्ते की अख़लाक़ी बहस में पैग़म्बर अकरम(स.) की एक हदीस बयान की जो आपने हज़रत अली अलैहिस्सलाम से बयान फरमाई थी। इस हदीस में मोमिन की १०३ सिफ़तें बयान की गईं हैं जिनमें से छब्बीस सिफ़ते बयान हो चुकी हैं और इस जलसे में पाँच सिफते और बयान करनी है।

हदीस-

“.....लतीफ़ुल हरकात, हलवुल मुशाहिदति, कसीरुल इबादति, हुस्नुल वक़ारि, लय्यिनुल जानिबि.....।” [५]

तर्जमा-

मोमिन की हरकतें लतीफ़, उसका दीदार शीरीन और उसकी इबादत ज़्यादा होती हैं, उससे सुबुक हरकतें सरज़द नहीं होती और उसमें मोहब्बत व आतिफ़त पायी जाती है।

हदीस की शरह-

मोमिन की सत्ताइसवी सिफ़त-“लतीफ़ुल हरकात” होना है। यानी मोमिन के हरकातो सकनात बहुत लतीफ़ होते हैं और वह अल्लाह की मख़लूक़ के साथ मुहब्बत आमेज़ सलूक करता है।

मोमिन की अठ्ठाइसवी सिफ़त- “हुलुवुल मुशाहिदह ” होना है। यानी मोमिन हमेशा शाद होता है वह कभी भी तुर्श रू नही होता।

मोमिन की उनत्तीसवी सिफ़त- “कसीरुल इबादत ” है। यानी मोमिन बहुत ज़्यादा इबादत करता है। यहाँ पर एक सवाल पैदा होता है और वह यह कि इबादत से रोज़ा नमाज़ मुराद है या इसके कोई और माअना हैं?

इबादत की दो क़िस्में हैं- इबादत अपने खास माअना में-

यह वह इबादत है कि अगर इसमें क़स्द क़ुरबत न किया जाये तो बातिल हो जाती है।

इबादत अपने आम माअना में-

हर वह काम कि अगर उसको क़स्द क़ुरबत के साथ किया जाये तो सवाब रखता हो मगर क़स्दे क़ुरबत उसके सही होने के लिए शर्त न हो। इस सूरत में तमाम

कामों को इबादत का लिबास पहनाया जा सकता है। इबादत रिवायत में इसी माअना में हो सकती है।

मोमिन की तीसवीं सिफ़त- "हुस्नुल वक़ार" है। यानी मोमिन छोटी और नीची हरकतें अंजाम नही देता। विक़ार या वक़ार का माद्दा वक़र है जिसके माअना संगीनी के हैं।

मोमिन की इकत्तीसवीं सिफ़त- "लय्यिनुल जानिब " है। यानी मोमिन में मुहब्बत व आतेफ़त पायी जाती है।

ऊपर ज़िक्र की गईं पाँच सिफ़तों में से चार सिफ़तें लोगों के साथ मिलने जुलने से मरबूत हैं।लोगों से अच्छी तरह मिलना और उनसे नेक सलूक करना बहुत ज़्यादा अहमियत का हामिल है। इससे मुख़ातेबीन मुतास्सिर होते हैं चाहे दीनी अफ़राद हों या दुनियावी।

दुश्मन हमारे माथे पर तुन्द ख़ुई का कलंक लगाने के लिए कोशा है लिहाज़ा हमें यह साबित करना चाहिए कि हम जहाँ " अशद्दाउ अलल कुफ़्फ़ार है "वहीँ "रहमाउ बैनाहुम" भी हैं। आइम्मा-ए- मासूमान अलैहिमुस्सलाम की सीरत में मिलता है

कि वह उन ग़ैर मुस्लिम अफ़राद से भी मुहब्बत के साथ मिलते थे जो दर पैये क़िताल नही थे। नमूने के तौर पर, तारीख़ में मिलता है कि एक मर्तबा हज़रत अली अलैहिस्सलाम एक यहूदी के हम सफ़र थे। और आपने उससे फ़रमा दिया था कि दो राहे पर पहुँच कर तुझ से जुदा हो जाऊँगा। लेकिन दो राहे पर पहुँच कर भी जब हज़रत उसके साथ चलते रहे तो उस यहूदी ने कहा कि आप ग़लत रास्ते पर चल रहे हैं, हज़रत ने उसके जवाब में फ़रमाया कि अपने दीन के हुक्म के मुताबिक हमसफ़र के हक़ को अदा करने के लिए थोड़ी दूर तेरे साथ चल रहा हूँ। आपका यह अमल देख कर उसने ताज्जुब किया और मुस्लमान हो गया। इस्लाम के एक सादे से हुक्म पर अमल करना बहुत से लोगों के मुसलमान बनने इस बात का सबब बनता है। (यदख़ुलु फ़ी दीनि अल्लाहि अफ़वाजन) लेकिन अफ़सोस है कि कुछ मुक़द्दस लोग बहुत ख़ुश्क इंसान हैं और वह अपने इस अमल से दुश्मन को बोलने का मौक़ा देते हैं जबकि हमारे दीन की बुनियाद तुन्दखुई पर नही है। क़ुरआने करीम में ११४ सूरेह हैं जिनमें से ११३ सूरेह अर्रहमान अर्रहीम से शुरू होते हैं। यानी १/११४ तुन्दी और ११३में रहमत है।

दुनिया में दो ततरीक़े के अच्छे अखलाक़ पाये जाते हैं।

रियाकाराना अखलाक़ (दुनियावी फ़ायदे हासिल करने के लिए)

मुख़लेसाना अखलाक़ (जो दिल की गहराईयों से होता है)

पहली क़िस्म का अख़लाक यूरोप में पाया जाता है जैसे वह लोग हवाई जहाज़ में अपने गाहकों को खुश करने के लिए उनसे बहुत मुहब्बत के साथ पेश आते हैं, क्योंकि यह काम आमदनी का ज़रिया है। वह जानते हैं कि अच्छा सलूक गाहकों को मुतास्सिर करता है।

दूसरी क़िस्म का अख़लाक़ मोमिन की सिफ़त है। जब हम कहते हैं कि मोमिन का अखलाक बहुत अच्छा है तो इसका मतलब यह है कि मोमिन दुनयावी फ़ायदे हासिल करने के लिए नही बल्कि आपस में मेल मुहब्बत बढ़ाने के लिए अख़लाक़ के साथ पेश आता है। क़ुरआने करीम में हकीम लुक़मान के क़िस्से में उनकी नसीहतों के तहत ज़िक्र हुआ है "व ला तुसाअइर ख़द्दका लिन्नासि व ला तमशि फ़िल अरज़े मरहन..."[६] "तुसाअइर" का माद्दा "सअर" है और यह एक बीमारी है जो ऊँटों में पाई जाती है । इस बीमारी की वजह से ऊँटो की गर्दन दाहिनी या बाईं तरफ़ मुड़ जाती है। आयत फ़रमा रही है कि गर्दन मुड़े बीमार ऊँट की तरह न रहो और लोगों की तरफ़ से अपने चेहरे को न मोड़ो । इस ताबीर से मालूम होता है कि बद अख़लाक़ अफ़राद एक क़िस्म की बीमारी में मुबतला हैं। आयत के आख़िर में बयान हुआ है कि तकब्बुर के साथ राह न चलो।

****

[1] बिहारूल अनवार जिल्द ६४/३१०

[2] सूरए तौबा आयत न. ७९

[3] बिहारूल अनवार जिल्द ६४ पोज न. ३१०

[4] बिहारूल अनवार जिल्द ६८ बाब हुस्नुल ख़ुल्क़ पोज न. ३७५

[5]बिहारुल अनवार जिल्द ६४ पेज न. ३१०

[6] सूरए लुक़मान आयत न. १८

सिफ़ाते मोमिन (७)

कुछ अहादीस के मुताबिक़ २५ ज़ीक़ादह रोज़े " दहुल अर्ज़ " और इमाम रिज़ा अलैहिस्सलाम के मदीने से तूस की तरफ़ सफ़र की तारीख़ है। "दह्व" के माअना फैलाने के हैं। कुरआन की आयत " व अलअर्ज़ा बअदा ज़ालिका दहाहा "[१] इसी क़बील से है।

ज़मीन के फैलाव से क्या मुराद हैं ? और इल्मे रोज़ से किस तरह साज़गार है जिसमें यह अक़ीदह पाया जाता है कि ज़मीन निज़ामे शम्सी का जुज़ है और सूरज से जुदा हुई है?

जब ज़मीन सूरज से जुदा हुई थी तो आग का एक दहकता हुआ गोला थी, बाद में इसकी भाप से इसके चारों तरफ़ पानी वजूद में आया जिससे सैलाबी बारिशों का सिलसिला शुरू हुआ और नतीजे में ज़मीन की पूरी सतह पानी में पौशीदा हो गई। फिर आहिस्ता आहिस्ता यह पानी ज़मीन में समा ने लगा और ज़मीन पर जगह जगह खुशकी नज़र आने लगी। बस " दहुल अर्ज़ " पानी के नीचे से ज़मीन के ज़ाहिर होने का दिन है। कुछ रिवायतों की बिना पर सबसे पहले खाना-ए- काबा का हिस्सा जाहिर हुआ। आज का जदीद इल्म भी इसके ख़िलाफ़ कोई बात साबित नही

हुई है। यह दिन हक़ीक़त में अल्लाह की एक बड़ी नेअमत हासिल होने का दिन है कि इस दिन अल्लाह ने ज़मीन को पानी के नीचे से ज़ाहिर कर के इंसान की ज़िंदगी के लिए आमादह किया।

कुछ तवारीख़ के मुताबिक़ इस दिन इमाम रिज़ा अलैहिस्सलाम ने मदीने से तूस की तरफ़ सफर शुरू किया और यह भी हम ईरानियों के लिए अल्लाह एक बड़ी नेअमत है। क्योंकि आपके क़दमों की बरकत से यह मुल्क आबादी, मानवियत, रूहानियत और अल्लाह की बरकतों के सर चशमे में तबदील हो गया। अगर हमारे मुल्क में इमाम की बारगाह न होती तो शियों के लिए कोई पनाहगाह न थी। हर साल तक़रीबन १,५०००००० अफ़राद अहले बैत अलैहिमुस्सलाम से तजदीदे बैअत के लिए आपके रोज़े पर जाकर ज़ियारत से शरफयाब होते हैं। आप की मानवियत हमारे पूरे मुल्क पर साया फ़िगन है और हम से बलाओं को दूर करती है। बहर हाल आज का दिन कई वजहों से एक मुबारक दिन है। मैं अल्लाह से दुआ करता हूँ कि वह हमको इस दिन की बरकतों से फ़ायदा उठाने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये।

मुक़द्दमा-

इस हफ़्ते की अख़लाक़ी बहस में रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व आलिहि वसल्लम की एक हदीस नक़्ल की जो आपने हज़रत अली अलैहिस्सलाम से खिताब फ़रमाई। इस हदीस में मोमिने कामिल की १०३ सिफ़तें बयान की गयीं हैं, हम पिछले जलसे तक इनमें से ३१ सिफ़तें बयान कर चुके हैं और आज के इस जलसें में चार सिफ़ात और बयान करेंगे।

हदीस-

".....हलीमन इज़ा जहला इलैह, सबूरन अला मन असा इलैह, युबज्जिलुल कबीरा व युराह्हिमु अस्सग़ीरा.....।" [२]

तर्जमा-

मोमिने कामिलुल ईमान जाहिलों के जहल के मुक़ाबिल बुरदुबार और बुराईयों के मुक़ाबिल बहुत ज़्यादा सब्र करने वाला होता है, वह बुज़ुर्गों का एहतराम करता है और छोटों के साथ मुहब्बत से पेश आता है।

हदीस की शरह-

मोमिन की बत्तीसवीं सिफ़त-“हलीमन इज़ा जहला इलैह” है। यानी वह जाहिलों के जहल के सामने बुरदुबारी से काम लेता है अगर कोई उसके साथ बुराई करता है तो वह उसकी बुराई का जवाब बुराई से नही देता।

मोमिन की तैंतीससवीं सिफ़त- “सबूरन अला मन असा इलैह ” है। यानी अगर कोई मोमिन के साथ अमदन बुरा सलूक करता है तो वह उस पर सब्र करता है। पहली सिफ़त में और इस सिफ़त में यह फ़र्क़ पाया जाता है कि पहली सिफ़त में ज़बान की बुराई मुराद है और इस सिफ़त में अमली बुराई मुराद है।

इस्लाम में एक क़ानून पाया जाता है और एक अखलाक़, क़ानून यह है कि अगर कोई आपके साथ बुराई करे तो आप उसके साथ उसी अन्दाज़े में बुराई करो। क़ुरआन में इरशाद होता है कि “फ़मन एतदा अलैकुम फ़आतदू अलैहि बिमिसलि मा आतदा अलैकुम..।” [३] यानी जो तुम पर ज़्यादती करे तुम उस पर उतनी ही ज़्यादती करो जितनी उसने तुम पर की है। यह क़ानून इस लिए है ताकि बुरे लोग बुरे काम अंजाम न दें। लेकिन अख़लाक़ यह है कि न सिर्फ़ यह कि बुराई के बदले में बुराई न करो बल्कि बुराई का बदला भलाई से दो। क़ुरआन फ़रमाता है कि “इज़ा मर्रु बिल लग़वि मर्रु किरामन” [४] या “इदफ़अ बिल्लति हिया अहसनु सय्यिअता” [५] यानी आप बुराई को अच्छाई के ज़रिये ख़त्म कीजिये। या “व इज़ा

ख़ातबा हुम अल जाहिलूना क़ालू सलामन" [६] जब जाहल उन से ख़िताब करते हैं तो वह उन्हें सलामती की दुआ देते हैं।

मोमिन की चौंतीसवीं सिफ़त-"युबज्जिलुल कबीरा" है। यानी मोमिन बुज़ुर्गों की ताज़ीम करता है। बुज़ुर्गों के एहतराम के मस्अले को बहुतसी रिवायात में बयान किया गया है। मरहूम शेख़ अब्बासे क़ुम्मी ने अपनी किताब "सफ़ीनतुल बिहार" में एक रिवायत नक़्ल की है कि "मन वक़्क़रा शैबतिन लि शैबतिहि आमनुहु अल्लाहु तआला मन फ़ज़ाअ यौमिल क़ियामति "[७] जो किसी बुज़ुर्ग का एहतराम उसकी बुज़ुर्गी की वजह से करे तो अल्लाह उसे रोज़े क़ियामत के अज़ाब से महफ़ूज़ करेगा। एक दूसरी रिवायत में मिलता है कि "इन्ना मिन इजलालि अल्लाहि तआला इकरामु ज़ी शीबतिल मुस्लिम "[८] यानी अल्लाह तआला की ताअज़ीम में से एक यह है कि बुज़ुर्गों का एहतराम करो।

मोमिन की पैंतीसवीं सिफ़त- "युराहिमु अस्सग़ीरा " है। यानी मोमिन छोटों पर रहम करता है। यानी मुहब्बत के साथ पेश आता है।

मशहूर है कि जब बुज़ुर्गों के पास जाओ तो उनकी बुज़ुर्गी की वजह से उनका एहतराम करो और जब बच्चो के पास जाओ तो उनका एहतराम इस वजह से करो कि उन्होंने कम गुनाह अंजाम दिये हैं।

अल्लाह के अच्छे बन्दों के सिफ़ात

हदीस-

अन इब्ने उमर क़ाला "ख़तबना रसूलुल्लाहि ख़ुतबतन ज़रफ़त मिनहा अलअयूनु व वजिलत मिनहा अलक़ुलूबु फ़काना मिम्मा ज़बत्तु मिन्हा:अय्युहन्नासु,इन्ना अफ़ज़ला अन्नास अब्दा मन तवाज़अ अन रफ़अति ,व ज़हिदा अन रग़बति, व अनसफ़ा अन क़ुव्वति व हलुमा अन क़ुदरति·····।" [९]

तर्जमा-

इब्ने उमर से रिवायत है कि पैगम्बर (स.) ने हमारे लिए एक ख़ुत्बा दिया उस ख़ुत्बे से आँखों मे आँसू आगये और दिल लरज़ गये। उस ख़ुत्बे का कुछ हिस्सा मैंने याद कर लिया जो यह है "ऐ लोगो अल्लाह का बोहतरीन बन्दा वह है जो बलन्दी पर होते हुए इन्केसारी बरते, दुनिया से लगाव होते हुए भी ज़ोहज

इख़्तियार करे, क़ुवत के होते हुए इंसाफ़ करे और क़ुदरत के होते हुए हिल्मो बुरदुबारी से काम ले।

तशरीह-

हदीस के इस हिस्से से जो अहम मस्ला उभर कर सामने आता है वह यह है कि तर्के गुनाह कभी क़ुदरत न होने की बिना पर होता है और कभी गुनाह में दिलचस्पी न होने की वजह से। जैसे- किसी को शराब असलन पसंद न हो या पसंद तो करता हो मगर उसके पीने पर क़ादिर न हो या शराब नोशी के मुक़द्दमात उसे मुहय्या न हो या उसके नुक़्सानात की वजह से न पीता हो। जिस चीज़ को क़ुदरत न होने की बिना पर छोड़ दिया जाये उसकी कोई अहमियत नही है बल्कि अहमियत इस बात की है कि इंसान क़ुदरत के होते हुए गुनाह न करे। और पैगम्बर (स.) के फ़रमान के मुताबिक़ समाज में उँचे मक़ाम पर होते हुए भी इन्केसार हो।[१०]

तर्के गुनाह के सिलसिले में लोगों की कई क़िस्में हैं। लोगों का एक गिरोह ऐसा हैं जो कुछ गुनाहों से ज़ाती तौर पर नफ़रत करता हैं और उनको अंजाम नही देता। लिहाज़ा हर इंसान को अपने मक़ाम पर ख़ुद सोचना चाहिए की वह किस हराम की तरफ़ मायल है ताकि उसको तर्क कर सके। अलबत्ता अपने आप को पहचानना

कोई आसान काम नही है। कभी कभी ऐसा होता है कि इंसान में कुछ सिफ़ात पाये जाते हैं मगर साठ साल का सिन हो जाने पर भी इंसान उनसे बेख़बर रहता है क्योंकि कोई भी अपने आप को तनक़ीद की निगाह से नही देखता। अगर कोई यह चाहता है कि मानवी कामों के मैदान में तरक़्क़ी करे और ऊँचे मक़ाम पर पहुँचे तो उसे चाहिए कि अपने आप को तनक़ीद की निगाह से देखे ताकि अपनी कमज़ोरियों को जान सके।इसी वजह से कहा जाता है कि अपनी कमज़ोरियों को जान ने के लिए दुश्मन और तनक़ीद करने वाले (न कि ऐबों को छुपाने वाले) दिल सोज़ दोस्त का सहारा लो। और इन सबसे बेहतर यह है कि इंसान अपनी ऊपर ख़ुद तनक़ीद करे। अगर इंसान यह जान ले कि वह किन गुनाहों की तरफ़ मायल होता है, उसमें कहाँ लग़ज़िश पायी जाती है और शैतान किन वसाइल व जज़बात के ज़रिये उसके वजूद से फ़ायदा उठाता है तो वह कभी भी शैतान के जाल में नही फस सकता।

इसी वजह से पैगम्बर (स) ने फरमाया है कि “सबसे बरतर वह इंसान है जो रग़बत रखते हुए भी ज़ाहिद हो, क़ुदरत के होते हुए भी मुंसिफ़ हो और अज़मत के साथ मुतावाज़ेअ हो।”

यह पैग़ाम सब के लिए, खास तौर पर अहले इल्म अफ़राद के लिए, इस लिए कि आलिम अफ़राद अवाम के पेशवा होते हैं और पेशवा को चाहिए कि दूसरों लोगों को तालीम देने से पहले अपनी तरबीयत आप करे। इंसान का मक़ाम जितना ज़्यादा बलन्द होता है उसकी लग़ज़िशें भी उतनी ही बड़ी होती हैं। और जो काम जितना ज़्यादा हस्सास होता है उसमें ख़तरे भी उतने ही ज़्यादा होता है। “अलमुख़लिसूना फ़ी ख़तरिन अज़ीमिन।” मुख़लिस अफ़राद के लिए बहुत बड़े ख़तरे हैं। इंसान जब तक जवान रहता है हर गुनाह करता रहता है और कहता है कि बुढ़ापे में तौबा कर लेंगे। यह तौबा का टालना और तौबा में देर करना नफ़्स और शैतान का बहाना है। या यह कि इंसान अपने नफ़ेस से वादा करता है कि जब रमज़ान आयेगा तो तौबा कर लूगाँ। जबकि बेहतर यह है कि अगर कोई अल्लाह का मेहमान बनना चाहे तो उसे चाहिए कि पहले अपने आप को (बुराईयों) से धो डाले और बदन पर (तक़वे) का लिबास पहने और फिर मेहमान बनने के लिए क़दम बढ़ाये, न यह कि अपने गंदे लिबास(बुराईयों) के साथ शरीक हो।[११]

पाँच नेक सिफ़तें

हदीस-

अन अनस बिन मालिक क़ाला “समिति रसूलल्लाहि(स) फ़ी बाअज़ि ख़ुतबिहि व मवाइज़िहि..... रहिमल्लाहु अमराअनक़द्दमा ख़ैरन,व अनफ़क़ा क़सदन, व क़ाला सिदक़न व मलका दवाइया शहवतिहि व लम तमलिकहु, व असा अमरा नफ़्सिहि फ़लम तमलिकहु।[१२] ”

तर्जमा-

अनस इब्ने मालिक से रिवायत है कि उन्होंने कहा मैंने रसूलुल्लाह के कुछ ख़ुत्बों व नसीहतो में सुना कि आप ने फ़रमाया “अल्लाह उस पर रहमत नाज़िल करे जो ख़ैर को आगे भेजे, और अल्लाह की राह में मुतवस्सित तौर पर ख़र्च करे, सच बोले, शहवतों पर क़ाबू रखे और उनका क़ैदी न बने, नफ़्स के हुक्म को न माने ताकि नफ़्स उस पर हाकिम न बन सके। ”

हदीस की शरह-

पैग़म्बरे अकरम (स) इस हदीस में उस इंसान को रहमत की बशारत दे रहे हैं जिस में यह पाँच सिफ़ात पाये जाते हैं।

1- “क़द्दमा ख़ैरन” जो ख़ैर को आगे भेजता है यानी वह इस उम्मीद में नहीं रहता कि दूसरे उसके लिए कोई नेकी भेजें, बल्कि वह पहले ही अपने आप नेकियों को ज़ख़ीरा करता है और आख़ेरत का घर आबाद करता है।

2- “ अनफ़क़ा क़सदन ” मुतवस्सित तौर पर अल्लाह की राह में ख़र्च करता है उसके यहाँ इफ़रातो तफ़रीत नही पायी जाती (यानी न बहुत ज़्यादा, न बहुत कम) बल्कि वह अल्लाह की राह में ख़र्च करने के लिए वसती राह को चुनता है। न इतना ज़्यादा ख़र्च करता कि ख़ुद कंगाल हो जाये और न इतना ख़सीस होता कि दूसरों को कुछ न दे। “ व ला तजअएल यदाका मग़लूलतन इला उनुक़िहि व ला तबसुतहा कुल्ला अलबस्ति फ़तक़उदा मलूमन महसूरन।” [१३]अपने हाथों को अपनी गर्दन पर न लपेटो (अल्लाह की राह में ख़र्च करने से न रुको) और अपने हाथों को हद से ज़्यादा भी न खोलो ताकि .....

एक दूसरे मक़ाम पर फ़रमाया “व अल्लज़ीना इज़ा अनफ़क़ू लम युसरिफ़ु व लम यक़तुरु व काना बैना ज़ालिक क़वामन।[१४]”

वह जब अल्लाह की राह में ख़र्च करते हैं तो न इसराफ़ करते हैं और न ही कमी बल्कि इन दोनो के बीच एतेदाल क़ायम करते हैं (बल्कि इन दोनों के बीच का रास्ता इख़्तियार करते हैं।)

3- “व क़ाला सिदक़न ” सच बोलता है उसकी ज़बान झूट से गन्दी नही होती।

ऊपर बयान की गयीं तीनों सिफ़ते पसंदीदा हैं मगर चौथी और पाँचवी सिफ़त की ज़्यादा ताकीद की गई है।

4-5 व मलिका दवाइया शहवतिहि व लम तमलिकुहु , व असा अमरा नफ़्सिहि फ़लम तमलिकहु वह अपने शहवानी जज़बात पर क़ाबू रखता है और उनको अपने ऊपर हाकिम नही बनने देता। क्योंकि वह अपने नफ़्स के हुक्म की पैरवी नही करता इस लिए उसका नफ़्स उस पर हाकिम नही होता। अहम बात यह है कि इंसान को अपने नफ़्स के हाथो असीर नही होना चाहिए बल्कि अपने नफ़्स को क़ैदी बना कर उसकी लगाम अपने हाथों में रखनी चाहिए। और इंसान की तमाम अहमियत इस बात में है कि वह नफ़्स पर हाकिम हो उसका असीर न हो। जैसे- जब वह ग़ुस्से में होता है तो उसकी ज़बान उसके इख़्तियार में रहती है या नही ? या जब उसके सीने में हसद की आग भड़कती है तो क्या वह उसको ईमान की

ताक़त से ख़ामौश कर सकता है ? ख़ुलासा यह है कि इंसान एक ऐसे दो राहे पर खड़ा है जहाँ से एक रास्ता अल्लाह और जन्नत की तरफ़ जाता है और दूसरा रास्ता जिसकी बहुतसी शाखें हैं जहन्नम की तरफ़ जाता है। अलबत्ता इस बात का कहना आसान है मगर इस पर अमल करना बहुत मुशकिल है। कभी- कभी अरबाबे सैरो सलूक (इरफ़ानी अफ़राद) के बारे में कहा जाता है कि " इस इंसान ने बहुत काम किया है "यानी इसने अपने नफ़्स से बहुत कुशती लड़ी है और बार बार गिरने और उठने का नतीजा यह हुआ कि यह नफ़्स पर मुसल्लत हो गया और उसको अपने क़ाबू में कर लिया।

नफ़्स पर तसल्लुत क़ायम करने के लिए रियाज़ की ज़रूरत है, क़ुरआन के मफ़हूम और अहलेबैत की रिवायात से आशना होने की ज़रूरत है। इंसान को चाहिए कि हर रोज़ क़ुरआन, तफ़्सीर व रिवायात को पढ़े और उनको अच्छी तरह अपने ज़हन में बैठा ले और इस तरह उनसे ताक़त हासिल करे। कुछ लोग ऐसे हैं जो कहते हैं कि " हम जानते हैं कि यह काम बुरा है मगर पता नही ऐसा क्यों होता है कि जब हम इस काम के क़रीब पहुँचते हैं तो हम अपने ऊपर कन्ट्रोल नही कर पाते।" ममलूक होने के माअना ही यह हैं कि जानता है मगर कर नही सकता क्योंकि ख़ुद मालिक नही है। जैसे किसी तेज़ रफ़्तार गाड़ी का ड्राईवर गाड़ी के अचानक किसी ढालान पर चले जाने के बाद कहे कि अब गाड़ी मेरे कन्ट्रोल से

बाहर हो गई है, और वह किसी पहाड़ से टकरा कर खाई में गिर कर तबाह हो जाये। या किसी ऐसे इंसान की मिस्ल जिसकी रफ़्तार पहाड़ के ढलान पर आने के बाद बे इख़्तियार तेज़ हो जाये तो अगर कोई चीज़ उसके सामने न आये तो वह बहुत तेज़ी से नीचे की तरफ आयेगा जब तक कोई चीज़ उसे रोक न ले,लेकिन अगर वह पहाड़ी के दामन तक ऐसे ही पहुँच जाये तो नीचे पहुँच कर उसकी रफ़्तार कम हो जायेगी और वह रुक जायेगा। नफ़्स भी इसी तरह है कितनी दर्दनाक है यह बात कि इंसान जानता हो मगर कर न सकता हो। अगर इंसान उस ज़माने में कोई गुनाह करे जब वह उसके बारे में न जानता हो तो शायद जवाबदेह न हो।

यह सब हमारे लिए तंबीह (चेतावनी) है कि हम अपने कामों की तरफ़ मुतवज्जेह हों और अपने नेक कामों को आगे भेज़ें। लेकिन अगर हमने कोई बुरा काम अंजाम दिया और उसकी तौबा किये बग़ैर इस दुनिया से चले गये तो हमें उसके अज़ाब को भी बर्दाश्त करना पड़ेगा। क्योंकि इंसान की तकालीफ़ मरने के बाद ख़त्म हो जाती हैं और फ़िर न वह तौबा कर सकता है और न ही कोई नेक अमल अंजाम दे सकता है।

खाना और इधर उधर देखना

हदीस-

क़ाला रसूलुल्लाह (स.) इय्याकुम व फ़ुज़ूला अलमतअमि फ़इन्नाहु यसिमु अलक़

लबा बिलक़िसवति, व युबतिउ बिलजवारेहि अन अत्ताअति, व युसिम्मु अलहमामा अन समाई अलमौईज़ति; व इय्याकुम व फ़ुज़ूला अन्नज़र, फ़इन्ना यबदुरू अलहवा, व युलिदु अलग़फ़लता।[१५]

तर्जमा-

हज़रत रसूले अकरम (स.) फ़रमाते हैं कि पुर ख़ोरी (ज़्यादा खाना) से बचो, क्योंकि यह आदमी को संग दिल और आज़ाए बदन (हाथ,पैर आदि) में सुस्ती लाती है, जो अल्लाह के हुक्म पर अमल करने की राह में रुकावट बनती हैं, और कानों को बहरा बना देती है जिसकी वजह से इंसान नसीहत को नही सुनता। इधर उधर देखने से परहेज़ करो क्योंकि आँखों की यह हरकत हवा व हवस को बढ़ाती है और इंसान को ग़ाफ़िल बना देती है।

हदीस की शरह-

ऊपर की हदीस में पुर ख़ोरी व निगाह करने से मना किया गया है।

1-पुर ख़ोरी-

गिज़ा में एतेदाल वह मस्अला है, हम जिसकी अहमियत से वाक़िफ़ नही है और न ही यह जानते है कि इसके जिसमानी और रूहानी नज़र से कितने अहम असरात हैं।

बस पुर ख़ोरी जिसमानी और रूहानी दोनों रुख़ों से क़ाबिले तवज्जुह है।

अ-जिस्मानी रुख

यह बात साबित हो चुकी है कि इंसान की अक्सर बीमारियाँ पुर ख़ोरी की नजह से हैं। इस के लिए कुछ डाक्टर यह इस्तदलाल करते हैं और कहते हैं कि जरासीम हमेशा चार मशहूर तरीक़ों (हवा, खाना, पानी और कभी कभी बदन की खाल के

ज़रिये) से बदन के अन्दर दाख़िल होते हैं और उनको रोकने का कोई रास्ता भी नही है।

जिस वक़्त बदन की यह खाल (जो जरासीम को बदन में दाखिल होने से रोकने के लिए एक मज़बूत ढाल का काम अंजाम देती है) ज़खमी हो जाये, तो मुमकिन है कि इसी ज़ख़्म के ज़रिये जरासीम बदन में दाख़िल हो जायें और बदन की दिफ़ाई ताक़त को तबाह कर दें। इस बिना पर हम हमेशा मुख़तलिफ क़िस्मों के जरासीमों व बीमारीयों के हमलों की ज़द में रहते हैं और हमारा बदन इसी सूरत में उन से अपना दिफ़ा कर सकता है जब इसमें अफ़ूनत के मरकज़ न पाये जाते हों। और यह भी कहा जाता है कि बदन की फ़ालतू चर्बी जो बदन में मुख़्तलिफ़ जगहों पर इकठ्ठा हो जाती है, वही बहुत से जरासीम के फूलने-फलने का ठिकाना बनती है। ठीक इसी तरह जैसे किसी जगह पर काफ़ी दिनो तक पड़ा रहने वाला कूड़ा बीमारी और जरासीम के फैलने के सबब बनता है। उन चीज़ों में से जो इन बीमारियों का इलाज कर सकती हैं एक यह है कि इस चर्बी को पिघलाया जाये और इस चर्बी को पिघलाने का आसान तरीक़ा रोज़ा रखना है। और यह वह इस्तदलाल है जिसका समझना सबके लिए आसान है। क्योंकि हर इंसान समझता कि जब बदन में फ़ालतू ग़िज़ा मौजूद हो और वह बदन में जज़्ब न हो रही हो तो बदन में इकठ्ठा हो जाती है जिसके नतीजे में दिल का काम बढ़ जाता है, बतौरे

ख़ुलासा बदन के तमाम अजज़ा पर बोझ बढ़ जाता है जिसकी बिना पर दिल और बदन के दूसरे हिस्से जल्दी बीमार हो जाते हैं जिससे आदमी की उम्र कम हो जाती है। इस बिना पर अगर कोई यह चाहता है कि वह सेहत मन्द रहे तो उसे चाहिए कि पुर ख़ोरी से परहेज़ करे और कम खाने की आदत डाले, ख़ास तौर पर वह लोग जो जिस्मानी काम कम करते हैं।

एक डाक्टर का कहना है कि में बीस साल से मरीज़ों के इलाज में मशग़ूल हूँ और मेरे तमाम तजर्बों का खुलासा इन दो जुम्लों में है; खाने में एतेदाल(न कम न ज़्यादा) और वरज़िश करना।

आ-रूहानी रुख

यह हदीस पुर ख़ोरी के तीन बहुत अहम रूहानी असरात की तरफ़ इशारा कर रही है।

1- पुर ख़ोरी संग दिल बनाती है।

2- पुर खोरी अंजामे इबादात में सुस्ती का सबब बनाती है। यह बात पूरी तरह से वाज़ेह है कि जब इंसान ज़्यादा खायेगा तो फिर सुबह की नमाज़ आसानी के साथ नही पढ़ सकता और अगर जाग भी जाये तो सुस्त और मस्त लोगों की तरह रहेगा। लेकिन जब हलका व कम खाना खाता है तो आज़ान के वक़्त या उससे कुछ पहले जाग जाता है खुश होता है, और उसमें ईबादत व मुतालेए के लिए वलवला होता है।

3- पुर ख़ोरी इंसान से वाज़ को क़बूल करने की क़ूवत छीन लेती है। जब इंसान रोज़ा रखता है तो उसके अनदर रिक़्क़ते क़ल्ब पैदा होती है और उसकी मानवीयत बढ़ जाती है। लेकिन जब पेट भरा होता है तो इंसान की फ़िक्र सही काम नही करती और वह अपने आप को अल्लाह से दूर पाता है।

शायद आपने तवज्जुह की हो कि माहे रमज़ानुल मुबारक में लोगों के दिल नसीहत को क़बूल करने के लिए बहुत आमादा रहते हैं, इस की वजह यह है कि भूक और रोज़ा दिल को पाकीज़ा बनाते हैं।

2- निगाह करना

रिवायत में “नज़र” से क्या मुराद है ? पहले मरहले में तो यह बात समझ में आती है कि शायद मुराद ना महरमों को देखना हो जो कि हवा परस्ती का सबब बनती है। लेकिन बईद नही है कि इससे भी वसीअ माअना मुराद हों; यानी हर वह नज़र जो इंसान में हवाए नफ़्स पैदा करने का सबब बने; मिसाल के तौर पर एक खूबसूरत घर के क़रीब से गुज़रते हुए उसको टुकर टुकर देखना और आरज़ु करना कि काश मेरे पास भी ऐसा ही होता या कार के किसी आखरी माडल को देख कर उसकी तमन्ना करना। आरज़ु व शौक़, तलब व चाहत के साथ यह नज़र तेज़ी के साथ ग़फ़लत के तारी होने का सबब बनती है, क्योंकि यह इंसान में दुनिया की मुहब्बत पैदा करती है। वरना निगाहे इबरत व तौहीदी या वह निगाह जो फ़क़ीरों की मदद के लिए हो या वह निगाह जो किसी मरीज़ के इलाज के लिए हो इनके लिए तो खास ताकीद की गई है और यह पसंदीदह भी है।

नुक्ता- जैसा कि रिवायात और नहजुल बलाग़ा में बयान हुआ है दुनिया के बहुत से माल और मक़ाम ऐसे हैं कि “कुल्लु शैईन मिन अद्दुनिया समाउहु आज़मु मिन अयानिहि।” [१६]

दुनिया की हर चीज़ देखने के मुक़ाबले सुनने में बड़ी है। बाक़ौले मशहूर ढोल की आवाज़ दूर से सुनने में अच्छी लगती है।(दूर के ढोल सुहाने) लेकिन जब कोई

ढोल को करीब से देखता है तो मालूम होता है कि यह अन्दर से ख़ाली है और इसकी आवाज़ कानों के पर्दे फ़ाड़ने वाली है।

मरहूम आयतुल्लाह अल उज़मा बरूजर्दी (रह) ने एक ज़माने में अपने दर्स में नसीहत फ़रमाई कि " अगर कोई तालिबे इल्म इस नियत से दर्स पढ़ता है कि वह उस मक़ाम पर पहुँचे जिस पर मैं हूँ तो उसके अहमक़ होने में कोई शक न करो आप लोग दूर से फ़िक्र करते हो और मरजिअत को देखते हो (जबकि वह मरजाअ अलल इतलाक़ थे और कोई भी उनकी बराबर नही था) मैं जिस मक़ाम पर हूँ न अपने वक़्त का मालिक हूँ और न ही अपने आराम का मालिक हूँ ।" तक़रीबन दुनिया की तमाम बख़शिशें ऐसी ही हैं।

****

हवालेः-

[1] सूर-ए- नाज़िआत ऐयत न. ३०

[2] बिहारुल अनवारजिल्द६४ पेज न. ३११

[3] सूरए बकरह आयत न. १९४

[4] सूरए फ़ुरक़ान आयत न. ७२

[5] सूरए मोमिनून आयत न. ९६

[6] सूरए फ़ुरक़ान आयत न.६३

[7] सफ़ीनतुल बिहार, माद्दाए (शीब)

[8] - सफ़ीनतुल बिहार माद्दाए (शीब)

[9] बिहारूल अनवार जिल्द ७४/१७९

[10] क़ुरआने मजीद ने सच्चे मोमिन की एक सिफ़त तवाज़ोअ (इन्केसारी) के होने और हर क़िस्म के तकब्बुर से ख़ाली होने को माना है। क्योंकि किब्र व ग़रूर कुफ़्र और बेईमानी की सीढ़ी का पहला ज़ीना है। और तवाज़ोअ व इन्केसारी हक़ और हक़ीक़त की राह में पहला क़दम है।

[11] आलिमे बुज़ुर्गवार शेख बहाई से इस तरह नक़्ल हुआ है कि “तौबा” नाम का एक आदमी था जो अक्सर अपने नफ़्स का मुहासबा किया करता था। जब उसका सिन साठ साल का हुआ तो उसने एक दिन अपनी गुज़री हुआ ज़िन्दगी का हिसाब लगाया तो पाया कि उसकी उम्र २१५०० दिन हो चुकी है उसने कहा कि: वाय हो मुझ पर अगर मैंने हर रोज़ एक गुनाह ही अंजाम दिया हो तो भी इक्कीस हज़ार से ज़्यादा गुनाह अंजाम दे चुका हूँ। क्या मुझे अल्लाह से

इक्कीस हजार से ज़्यादा गुनाहों के साथ मुलाक़ात करनी चाहिए? यह कह कर एक चीख़ मारी और ज़मीन पर गिर कर दम तोड़ दिया। (तफ़्सीरे नमूना जिल्द/२४ /४६५)

[12] बिहार जिल्द ७४/१७९

[13] सूरए इसरा आयत २९

[14] सूरए फ़ुरक़ान आयत ६७

[15] बिहारुल अनवार जिल्द ७३/१८२

[16] ख़ुत्बा ११४

शियों के सिफ़ात(१)

मुक़द्दमा

बिहारुल अनवार की ६५वी जिल्द का एक हिस्सा " शियों की सिफ़ात" के बारे में है। कितना अच्छा हो कि हम सब इस हिस्से को पढ़ें और जानें कि इस मुक़द्दस नाम यानी " शियाए अहले बैत" के तहत कितनी ज़िम्मेदारियाँ हैं। सिर्फ़ दावा करने से शिया नही हो सकते। सिर्फ़ इस बात से के मेरे माँ, बाप शिया थे मैं शिया हूँ, शिया नही हो सकते। शिया होना एक ऐसा मफ़हूम है जिसके तहत बहुत सी ज़िम्मेदारियाँ आती हैं जिनको मासूमीन अलैहिमुस्सलाम ने "सिफ़ाते शिया" उनवान के तहत बयान फ़रमाया है।

मुयस्सर इब्ने अब्दुल अज़ीज़ हज़रत इमाम बाक़िर अलैहिस्सलाम के मशहूर असहाब में से थे। जिनका ज़िक्र इल्मे रिजाल में भी हुआ है। इमाम बाक़िर अलैहिस्सलाम ने मुयस्सर के बारे में एक जुम्ला इरशाद फ़रमाया जो यह है कि " ऐ मुयस्सर कई मर्तबा तेरी मौत आई लेकिन अल्लाह ने उसको टाल दिया इस लिए कि तूने सिलहे रहम अंजाम दिया और उनकी मुश्किलात को हल किया।"

मतने हदीस

हज़रत इमाम बाक़िर अलैहिस्सलाम ने एक हदीस में मुयस्सर से फ़रमाया कि “ या मुयस्सरु अला अखबरका बिशियतिना क़ुल्तु बला जअलतु फ़िदाक क़ालः इन्नहुम हसूनः हसीनतन व सदूरुन अमीनतन व अहलामुन वज़ीनतन लैसू बिलमज़ीउल बज़र वला बिल ज़िफ़ातिल मराईन रहबानुन बिल्लैलि उसदुन बिन्नहारि।”

तर्जमा

क्या मैं अपने शियों की तुझे मोर्रफ़ी कराऊँ उसने कहा कि मेरी जान आप पर क़ुर्बान फ़रमाये। आपने फ़रमाया वह मज़बूत क़ले और अमनतदार सीने हैं। वह साहिबाने अक़्ले वज़ीन व मतीन हैं। वह न अफ़वाहे उड़ाते हैं और न ही राज़ों को फ़ाश करते हैं। वह खुश्क,रूखे, सख़्त और रियाकार नही हैं। वह रात में रहबाने और दिन में शेर हैं।

शरह

यह एक छोटीसी हदीस है जिसमें शियों के सात सिफ़ात और एक दुनिया मतलब व ज़िम्मेदारी छुपी हुई है। शायद “हसून हसीनतन” के यह मअना हैं कि शिया वह हैं जिन पर दुशमन की तबलीग़ का कोई असर नही होता। आज जब कि दुनिया की तहज़ीब ख़तरनाक सूरत में हमारे जवानों को तहदीद कर रही है, क्या हम ने कोई ऐसा रास्ता ढूँढ लिया है जिससे हम अपनी जवान नस्ल को मज़बूत बना सकें ?अगर हम इन बुराईयों के कीड़ों को ख़त्म नही कर सकते तो कम से कम अपने आपको तो मज़बूत बना सकते हैं। इस नुक्ते पर भी तवज्जोह देनी चाहिए कि आइम्मा ए मासूमीन अलैहिमुस्सलाम के ज़माने में आइम्मा (अ.) को एक गिला यह भी था कि हमारे कुछ शिया हमारे राज़ों को फ़ाश कर देते हैं । और राज़ों के फ़ाश करने से यह मुराद थी कि आइम्मा ए मासूमीन अलैहिस्सलाम के मक़ामो अज़मत को हर किसी के सामने बयान कर देते थे। जैसे इमाम का इल्में ग़ैब, इमाम का रोज़े क़ियामत शफ़ीई होना, इमाम का रसूल (स.) के इल्म का अमानतदार होना, इमाम का शियों के आमाल पर शाहिद और नाज़िर होना व मोअजज़ात वग़ैरह, यह सब वह राज़ थे जिनको दुश्मन व आम लोग बर्दाश्त नही कर पाते थे। कुछ सादा लोह शिया ऐसे थे जहाँ भी बैठते थे सब बातों को बयान कर देते थे। और इन बातों से इख़तेलाफ़, अदावत व दुश्मनी के अलावा कुछ भी हासिल नही होता था। इमाम ने फ़रमाया कि हमारे शिया वह हैं जिनके सीने

अमानत दार हैं, किसी सबब के बग़ैर राज़ को फ़ाश नही करते। शियों और ग़ैरों के दरमियान इख़्तिलाफ़ पैदा नही करते । इससे भी ज़्यादा बदतर ग़ल्लाती हैं जो ताज़ा पैदा हुए हैं जो विलायत के बहाने से कुफ़्र या बहुत सी ऐसी नामुनासिब बाते आइम्मा के बारे में कहते हैं जिनसे आइम्मा हरगिज़ राज़ी नही हैं। हमको चाहिए कि इन जदीद ग़ल्लात से चोकस रहें। इनमें दो ऐब पाये जाते हैं एक तो यह कि ख़ुद को हलाक करते हैं क्योंकि इन लोगों का ख़्याल यह है कि अगर हम अल्लाह के सिफ़ात आइम्मा ए मासूमीन (अ.) या हज़रत ज़ैनब (स.) या शोहदा ए कर्बला (अ.) की तरफ़ मनसूब करें तो यह ऐने विलायत है। और सबसे बड़ी मुश्किल यह है कि हमारा ज़माना मिडिया का ज़माना अगर आज सुबह एक ख़बर सादिर हो तो एक घंटे के बाद यह ख़बर दुनिया के हर कोने में पहुँच जायेगी। लिहाज़ा यह ग़लुआमेज़ व नामुनासिब बातें फ़ौरन यहाँ से वहाँ नश्र करते हैं और शियत के दामन पर एक धब्बा लगा देते हैं। और बाद में मुख़्तलिफ़ मुमालिक में दिवारों पर लिख देते है कि शिया काफ़िर हैं। और फ़िर शियों का कत्ले आम शुरू हो जाता है। इन अहमक़ो नादान लोगों को यह मालूम नही कि इन की यह बातें, दुनियाँ के दूसरे मक़ामात पर शियों के क़त्ले आम का सबब बनती हैं। वाय हो ऐसे नादान और जाहिल साथियों पर, वाय इस ज़माने पर कि इसमें हमारी मजलिसों की नब्ज़ जाहिलो नादान अफ़राद के हाथों में चली गई। इन बातों की तरफ़ से लापरवाह

नही होना चाहिए, मजालिस की बाग डोर इस तरह के अफ़राद के हाथों में न हो कर उलमा के हाथों में होनी चाहिए।

बहर हाल वह सिफ़ात जो यहाँ पर शिय़ों के लिए बयान की गई हैं उनमें से एक यह है कि वह स़ख़्त मिज़ाज नही होते, शिया मुहब्बत से लबरेज़ होते हैं, इनके मिज़ाज मे लताफ़त पाई जाती है। इनमें अली इब्ने अबितालिब, इमाम सादिक़ व उन आइम्मा ए हुदा अलैहिमुस्सलाम की ख़ू बू पाई जाती है जो दुश्मनों से भी मुहब्बत करते थे।

शियों की एक सिफ़त यह है कि यह रियाकार नही हैं हमारे शियों ने दो मुख़्तलिफ़ हालतों को अपने अन्दर जमा किया है। अगर कोई इनकी रातों की इबादत को देखे तो कहेगा कि यह ज़ाहिदे रोज़गार व दुनिया के सबसे अच्छे आदमी हैं लेकिन इनके हाथ पैर नही है। लेकिन दिन में देखेगा कि शेर की तरह समाज में मौजूद हो जाते हैं।

हम शियों व मुसलमानों को पाँच क़िस्मों में तक़सीम कर सकते हैं :

ज़ोग़राफ़ियाई शिया-- यानी वह शिया जो इरान में पैदा हुआ, ईरान जोग़राफ़िया की नज़र से एक शिया मुल्क है। बस चूँकि मैं यहाँ पैदा हुआ लिहाज़ा जब शियों की तादाद को गिना जायेगा तो मेरा नाम भी लिया जायेगा चाहे शियत पर मेरा अक़ीदा हो या न हो। मैं शियत के बारे में इल्म रखता हूँ या न रखता हूँ चाहे आइम्मा के नाम को गिन पाऊँ या न गिन पाऊ, यह है शिया ए जोग़राफ़ियाई।

इर्सी शिया-- वह अफ़राद जो शिया माँ बाप के यहाँ पैदा हुए।

लफ़्ज़ी शिया–वह अफ़राद जो फ़क़त ज़बान से कहते हैं कि हम अली इब्ने अबितालिब के शिया हैं मगर अमल के मैदान में ग़ायब नज़र आते हैं।

सतही शिया वह शिया जो अमल तो करते हैं मगर शियत की गहराई में नही पहुँचे हैं वह सतही हैं। यह वह अफ़राद हैं जो फ़क़त अज़ादारी, तवस्सुल और इन्हीं जैसी दूसरी चीज़ों के बारे में जानते हैं। यह कैसे कहा जा सकता है कि वह शिया हैं ? इस लिए कि मोहर्रम के ज़माने में मजलिसों और मातमी दस्तों में शिरकत करते हैं और मस्जिदे जमकरान जाते हैं। मैं यह नही कहना चाहता कि यह कम अहमियत हैं नही इनकी अहमियत बहुत है। मगर इन्होने शियत से बस यही

समझा है। लेकिन इनमें रोहबानुन बिल लैल, असदुन बिन्नहार , अहलामुन वज़ीनह व सदरुन अमीनह जैसी सिफ़ते नही पाई जाती।

हक़ीक़ी शिया यह वह अफ़राद हैं जो इलाही मआरिफ़ और अहल्बैत अलैहिमुस्सलाम की रिवायतों से आगाह हैं। और इनके किरदार में वह सिफ़ते पाई जाती हैं जो इस रिवायत में आई हैं।

शियों के सिफ़ात(२)

मुक़द्दमा

बिहारुल अनवार की ६५वी जिल्द में दो हिस्से बहुत अहम हैं १- फ़ज़ाइल् शिया २- सिफ़ाते शिया

फ़ज़ाइले शिया, मक़ामाते शिया व सिफ़ाते शिया शराइत व और उनके ओसाफ़ को बयान करता है इस मअना में कि जहाँ अहादीस में शियों के मक़ामात बयान हुए हैं वहीं इन मक़ामत के साथ साथ शियों के वज़ाइअफ़ भी मुऐय्यन किये गये हैं।

मतने हदीस

क़ालः अस्सादिक़ (अ.) “इम्तहिनू शियातना अन्दः मवाक़ीति अस्सलात कैफ़ः मुहाफ़िज़तुहुम अलैहा व इला असरारिना कैफ़ः हफ़ज़ुहुम लहा इन्दः उदुव्विना व इला अमवालिहिम कैफ़ः मवासातुहुम लिइख़वानिहिम फ़ीहा।”

तर्जमा

हज़रत इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि हमारे शियों का नमाज़ के वक़्त इम्तेहान करो कि नमाज़ को किस तरह अहमियत देते हैं। और यह कि दुश्मन के सामने हमारे मक़ामात और राज़ों को बयान नही करते । और इसी तरह उनका माल में इम्तेहान करो किअपने दूसरे भईयों की किस तरह मदद करते हैं।

हदीस की तशरीह

इम्तहिनू शियतना इन्दः मवाक़ीतिस्सलात यानी नमाज़ के वक़्त को अहमियत देते हैं या नही ? काम के वक़्त नमाज़ को टालते हैं या काम को ? कुछ लोग मानते हैं कि नमाज़ ख़ाली वक़्त के लिए है और कहते हैं कि अव्वले वक़्त रिज़वानुल्लाह व आख़िरि वक़्त ग़ुफ़रानुल्लाह। कुछ अहले सुन्नत कहते हैं कि

हक़ीक़ी मुसलमान तो हम हैं इसलिए कि नमाज़ को जो अहमियत हम देते हैं वह तुम नही देते हो।

नमाज़ की अहमियत के बारे में हज़रत अली अलैहिस्सलाम मालिके अश्तर को ख़िताब करते हुए फ़रमाते हैं कि "इजअल अफ़ज़ला अवक़ातिक लिस्सलाति।" यीनी अपना बेहतरीन वक़्त नमाज़ के लिए क़रार दो।

कैफ़ः मुहाफ़िज़तु हुम अलैहा यहाँ पर कलमा ए "मुहाफ़िज़तुन" इस मअना में है कि नमाज़ को लिए बहुतसी आफ़ते हैं जिनसे नमाज़ की हिफ़ाज़त करनी चाहिए। और आप रूहानी हज़रात को चाहिए कि अवाम के लिए नमूना बनो। मैं उस ज़माने को नही भूल सकता जब इमाम ख़ुमैनी (रह) होज़े इल्मियह में मदर्रिस थे और हम भी होज़े में तालिबे इल्म थे, मरहूम आयतुल्लह सईदी ने हमारी दावत की थी और वहाँ पर इमाम भी तशरीफ़ फ़रमा थे हम लोग इल्मी बहसो मुबाहिसे में मशग़ूल थे। जैसे ही अज़ान की सदा बलन्द हुई इमाम बग़ैर किसी ताखीर के बिला फ़ासले नमाज़ के लिए खड़े हो गये। क़ानून यही है कि हम कहीं पर भी हों और किसी के भी साथ हों नमाज़ को अहमियत दें, खास तौर पर सुबह की नमाज़ को कुछ लोग नमाज़े सुबह को देर से पढ़ते हैं यह तलबा की नमाज़ नही है।

व इला असरारिना कैफ़ः हफ़ज़हुम लहा इन्दः उदुव्विना यहाँ पर राज़ों की हिफ़ाज़त से मक़ामे अहलेबैत की हिफ़ाज़त मुराद है यानी उनके मक़ामों मंज़िलत को यक़ीन न करने वाले दुश्मन के सामने बयान न करें। (जैसे- विलायते तकवीनी, मोअजज़ात, इल्मे ग़ैब वगैरह) क्योंकि यब मक़ामों मंज़िलत असरार का जुज़ है। हमारे ज़माने में एक गिरोह न सिर्फ़ यह कि असरार को बयान करता है बल्कि ग़लू भी करता है। जैसे कुछ नादान मद्दाह ज़ैनबुल्लाही हो गये हैं। मद्दाह का मक़ाम बहुत बलन्द है और आइम्मा अलैहिमुस्सलाम ने उनको अहमियत दी जैसे देबल ख़ुज़ाई बलन्द मक़ाम पर फ़ाइज़ थे। लेकिन कोशिश करो कि मजालिस की बाग डोर नादान लोगों के हाथो में न दो। मद्दाहों को चाहिए कि अपने अशआर की उलमा से तसही कराऐं और ग़ुलू आमेज़ अशआर से परहेज़ करें। खास तौर पर उस वक़्त जब अवाम की नज़र में मक़ाम बनाने के लिए मद्दाह हज़रात में बाज़ी लग जाये। इस हालत में एक गुलू कतरता है तो दूसरा उससे ज़्यादा गुलू करता है और यह काम बहुत ख़तरनाक है।

व इला अमवालिहिम कैफ़ः मवासातुहुम लिइख़वानिहिम फ़ीहा मवासात के लुग़त के एतबार से दो रीशे हो सकते हैं। या तो यह वासी को मद्दे से है या फिर आसी के मद्दे से है। कि दोनों से मवासात होता है। और यह मदद करने के मअना में

है। शिया का उसके माल से इम्तिहान करना चाहिए कि उसके माल में दूसरे अफ़राद कितना हिस्सा रखते हैं। हमारे ज़माने में मुश्किलात बहुतज़्यादा हैं।

1- मुश्किले बेकारी जिसकी वजह से बहुत से फ़साद फैले हैं जैसे चोरी , मंशियात व खुद फ़रोशी वग़ैरह

2- जवानों की शादी की मुश्किल

3- घर की मुश्किल

4- तालीम के खर्च की मुश्किल, बहुत से घर बच्चों की तालीम का ख़र्च फ़राहम करने में मुश्किलात से दो चार हैं। हमारा समाज़ शिया समाज है बेहूदा मसाइल में अनगिनत पैसा खर्च हो रहा है। जबकि कुछ लोगों को जिन्दगी की बुनियादी ज़रूरयात भी फ़राहम नही है। इस लिए हमें चाहिए कि सिफ़ाते शिया की तरफ़ भी तवज्जैह दी जाये, न सिर्फ़ यह कि शियों के मक़ाम और उनके अजरो सवाब को बयान किया जाये। उम्मीद है कि हम अपनी रोज मर्रा की जिन्दगी में आइम्मा (अ.) के फ़रमान पर तवज्जौह देंगे और उन पर अमल करेंगे।

शियों के सिफ़ात(३)

मुक़द्दमा---

आज हम अहलेबैत (अ) के शियों के बारे में दो हदीसें बयान करते हैं पहली हदीस शियों के फ़ज़ाइल से मुताल्लिक़ है और दूसरी हदीस शिय़ों की सिफ़त से मरबूत है।

1- दख़ल्तु अला अबि बक्रिल हज़रमी व हुवः यजूदु बिनफ़िसहि फ़नज़रः इलय्यः व क़ालः लैयतः सअतल किज़्बः अशहदु अला जअफ़र बिन मुहम्मद इन्नी समितहु यक़ूल “ला तमुस्सन्नारु मन मातः व हुवः यक़ूलु बिहाज़ल अम्र।”

2- सुलिमान बिन मिहरान क़ालः दख़ल्तु अस्सादिक़ (अ) व इन्दःहु नफ़ःरुन मिन शियति व हुवः यक़ूलु मआशरः अश्शियति कूनू लना ज़ैनन वला तकूनु अलैना शैनन क़ूलू लिन्नासि हसनन इहफ़ज़ू अलसिनतःकुम व कफ़्फ़ुहा अनिल फ़जूलि व क़बिहुल क़ौलि[१]

तर्जमा १- रावी कहता है कि मैं इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम के एक मख़सूस साथी अबु बक्र हज़रमी के पास उस वक़्त गया जब वह अपनी ज़िन्दगी के आखिरी

लम्हात में थे। उन्होंने मेरे ऊपर एक निगाह डाली और कहा कि देखो यह झूट बोलने का वक़्त नही है। मैं इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम के बारे में शहादत देता हूँ। और मैनें उन से सुना है कि वह कहते हैं कि जो शख़्स इस हालत में मरे कि अहलेबैत की विलायत का क़ाइल हो उसको जहन्नम की आग छू भी नही सकती।

2- सुलेमान बिन मेहरान ने कह है कि मैं एक बार इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम के पास गया उनके पास कुछ शिया बैठे हुए थे और वह उनसे यह बात कह रहे थे कि ऐ शियों हमारे लिए ज़ीनत बनना और हमारे लिए रुसवाई का सबब न बनना। लोगों से अच्छी बाते करों, अपनी ज़बान पर काबू रखो, फालतू और बुरी बात कहने से परहेज़ करो।

हदीस की तशरीह

इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम इस हदीस में दो मतालिब बयान फ़रमा रहे हैं। इनमें से एक क़ाइदाए कुल्ली है और दूसरा एक रौशन मिस्दाक़ है। क़ाइदाए कुल्ली तो यह है कि अपने आमाल के ज़रीये हमारी रुसवाई का सबब न बनना। यानी तुम इस तरह बनो के जब लोग तुमको देखें तो तम्हारे साहिबे मकतब पर दरूद पढ़ें और कहों के मरहबा उस इंसान के लिए जिसने इन लोगों की तरबीयत की। और हमारी रुसवाई का सबब न बनना, क्योंकि हम पैगमेबर (स.) की औलाद हैं।

इसके बाद खास मिस्दाक़ की तरफ़ इशारा करते हैं जो कि ज़बान है, उलमा ए अख़लाक़ कहते हैं कि सैरे सलूक इला अल्लाह में वह पहली चीज़ जिसकी इसलाह होनी चाहिए वह ज़बान है। और जब तक ज़बान की इसलाह नही होगी दिल पाक नही हो सकता। ज़बान इंसान के पूरे वजूद की कलीद है। इस तरह के इंसान को उसकी ज़बान के ज़रिये पहचाना जा सकता है। " इख़तबरू हुम बि सिदक़िलहदीस " जब लोगों का इम्तेहान करना चाहो तो यह दोखो कि वह सच बोलते हैं या झूट। अगर ज़बान पर क़ाबू होता है तो सही गुफ़्तुगु होती है और जो कुछ कहा जाता है वह सोच समझ कर कहा जाता है।

और ज़बान को क़ाबू में रखने के लिए एक तरीक़ा वह है जो रिवायत के आख़ीर में बयान किया गया है "कफ़्फ़ुहा अनिल फ़ज़ूल " यानी ज़्यादा न बोलो, कम बोलना सैरो सलूक की पहली राह है जिसका नाम "सुम्त" है। एक दानिश मन्द कहता है कि पाँच चीज़े ऐसी हैं जो हर नाक़िस चीज़ को पूरा करती हैं।

सुम्तो सौम, सहरो अज़लत व ज़िकरीबेही दवाम नातमामाने जहान रा कुनद ईन पन्ज तमाम।

वाक़ियन अगर कोई इनको अन्जाम दे तो वह अल्लाह के क़ुर्ब को हासिल कर सकता है,और इनमें पहली चीज़ सुम्त यानी ख़ामौश रहना है। सुम्त के माअना यह नही है कि इंसान बिल्कुल बात चीत न करे, बल्कि सुम्त के माअना यह है कि इंसान फ़ालतू और बुरी बातें ज़बान पर न लाये।

शियों के सिफ़ात(४)

हदीस-

*..... समितु अबा अब्दिल्लाह (अ.) यक़ूल : इन्ना अहक़्क़ा अन्नासु बिल वरए आलि मुहम्मद (स.) व शियतिहिम कै तक़तदा अर् रअय्याति बिहिम।[२]

तर्जमा-

इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं कि वरअ व तक़वे में सबसे बेहतर आले मुहम्मद व उनके शिया हैं ताकि दूसरे तमाम अफ़राद उनकी इक़तदा करें।

तशरीहे हदीस-

शिया होना इमाम का जुज़ होना है, मासूम इमाम व पैगम्बरान तमाम लोगों के लिए इमाम हैं। शियों को भी चाहिए कि लोगों के एक गिरोह के इमाम हों। वाक़िअत यह है कि इसलामी समाज में शियों को पेश रू होना चाहिए ताकि दूसरे उनकी इक़तदा करें। जिस तरह जनूबी लबनान में शिया मुजाहिदों की सफ़ों में सबसे आगे हैं और सब लोग उनको मज़बूत, फ़िदाकार और ईसार करने वालों की शक्ल में पहचानते हैं। शियों को चाहिए कि सिर्फ़ जिहाद में ही नही बल्कि ज़िन्दगी के हर मैदान में पूरी दुनिया के लिए पेशवा व नमूना होना चाहिए। “वरअ

” तक़वे से भी उपर की चीज़ है। कुछ बुज़ुर्गों ने वरअ को चार मरहलों में तक़सीम किया है।

1- तौबा करने वालों के वरअ (तक़वे) का मरहला

वरअ का यह मरहला इंसान को फ़िस्क़ से बचाता है। यह वरअ का सबसे नीचे का मर्तबा है और अदालत के बराबर है। यानी इंसान गुनाह से तौबा करके आदिलों की सफ़ में आ जाता है।

2- सालेहीन के वरअ का मरहला

वरअ के इस मरहले में इंसान शुबहात से भी परहेज़ करता है। यानी वह चीज़े जो ज़ाहेरन हलाल हैं लेकिन उनमें शुबाह पाया जाता उनसे भी से बचता है।

3-मुत्तक़ीन के वरअ का मरहला

वरअ के इस मरहले में इंसान गुनहा और शुबहात से तो परहेज़ करता ही है मगर इनके अलावा उन हलाल चीज़ों से भी बचता है जिनके सबब किसी हराम में

मुबतला होने का ख़तरा हो। जैसे- कम बोलता है क्योंकि वह डरता है कि अगर ज़्यादा बोला तो कहीँ किसी की ग़ीबत न हो जाये। जो वाक़ियन इस उनवान में दाख़िल है उतरुक मा ला बासा बिहि हज़रन मिम्मा बासा बिहि।

4-सिद्दीक़ीन के वरअ का मरहला

इस मरहले में उम्र के एक लम्हे के बर्बाद होने के डर से ग़ैरे ख़ुदा से बचा जाता है। यानी ग़ैरे ख़ुदा से बचना और अल्लाह से लौ लगाना इस लिए कि कहीँ ऐसा न हो कि उम्र का एक हिस्सा बर्बाद हो जाये। हमारा सबसे क़ीमती सरमाया हमारी उम्र है जिसको हम तदरीजन अपने हाथों से गवाँते रहते हैं और इस बात से ग़ाफिल हैं कि यह हमारा सबसे क़ीमती सरमाया है।

इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि वरअ में सबसे बेहतर आले मुहम्मद और उनके शिया हैं। हम कहते हैं कि वरअ के मरातिब में से कम से कम पहला मरहला तो हमको इख़्तियार कर ही लेना चाहिए। यानी शिया को चाहिए कि वह आदिल और अवाम का पेशवा हो। वह फ़क़त ख़ुद ही को न बचाये बल्कि दूसरों को भी निजात दे। सूरए फ़ुरक़ान के आख़िर में अल्लाह के बन्दों की बारह ख़सूसियात बयान की गयी हैं। और उनमें से एक ख़सूसियत यह है कि “

वल लज़ीना यक़ूलूना रब्बना हबलना मिन अज़वाजुना व ज़ुर्रियातिना क़ुर्रता ऐनिन व जअलना लिल मुत्तक़ीना इमामन" यह वह लोग हैं जो अल्लाह से दुआ करते हैं कि उनकी औलाद मामूली न हो बल्कितमाम मुसलमानों के लिए क़ुर्रता ऐन व नमूना हो और वह अल्लाह से दुआ करते हैं कि हमको मुत्तक़ीन का इमाम बनादे। क्या यह चाहना कि हम में से हर कोई इमाम हो तलबे बरतरी है ? नही यह हिम्मत की बलन्दी है। बस इस से यह मालूम होता है कि अपने आपको शिया कहना और शियों की सफ़ मे खड़ा होना आसान है लेकिन वाक़ई शिया होना बड़ा मुशकिल है।इमामे ज़माना और दिगर आइम्मा हुदा को अहले इल्म हज़रात और इस मकतब के शागिर्दों से बहुत ज़्यादा तवक़्क़ौ है। इनको चाहिए कि लोगों के लिए नमूना बनें ताकि लोग उनकी इक़तदा करें। और तबलीग़ का सबसे बेहतर तरीक़ा भी यही है कि इंसान के पास इतना वरअ व तक़वा हो कि लोग उस के ज़रिये से अल्लाह को पहचाने। और जान लो कि हक़ीक़ी शिया वह अफ़राद है जो शुजा, सबूर (बहुत ज़्यादा सब्र करने वाले) मुहब्बत से लबरेज़, परहेजगार व हराम से बचने वाले हैं और जिन्हें मक़ामों मंज़ेलत से लगाव नही है।

हमारे ज़माने की कुछ खास शर्तें हैं हम अपने मुल्क के अन्दर और दुनिया के अक्सर मुल्कों में तीन मुश्किलात से रू बरू हैं।

1- सियासी बोहरान

यह कभी न सुलझने वाला उलझाव जो आज कल और ज़्यादा उलझ गया है और जिसके अंजाम के बारे में कोई अच्छी पोशीन गोई नही हो रही है।

2- इक़तेसादी बोहरान

मकान की मुश्किल, शादी बयाह के खर्च की मुश्किल, बे रोज़गारी वग़ैरह की मुश्किलें।

3- अख़लाक़ी बोहरान

मेरा खयाल है कि यह उन दोनों बोहरानों से ज़्यादा ख़तरनाक है ख़ास तौर पर वह बोहरान जिसने जवान लड़कों और लड़कियों का दामन पकड़ लिया है और उनको बुरीयों की तरफ़ खैंच रहा है। इस अख़लाक़ी बोहरान की भी तीन वजह हैं।

क - मुख़तलिफ़ वसाइल का फैलाव

जैसे - बहुतसी क़िस्मों की सी. डी., फ़ोटू, फ़िल्में, डिश व इन्टरनेट वग़ैरह जिन्सी मसाइल को आसानी के साथ हर इंसान तक पहुँचाने का सबब बने

ख- किसी शर्त के बग़ैर पूरी आज़ादी

दूसरे अलफ़ाज़ में आज़ादी के नाम पर क़ैद यानी आज़ादी के नाम पर शहवत के पंजों में क़ैद, इस तरह कि अम्रे बिल मारूफ़ व नही अनिल मुनकर करना बहुत से लोगों की शर्मन्दगी का सबब हो जाता है। आज़ादी जो कि इंसान के तकामुल का ज़रिया है उसकी इस तरह तफ़सीर की गयी कि वह इंसान की पस्ती और गिरावट का वसीला बन गई।

ग- कुछ छुपे हुए हाथ

जिनका मानना है कि अगर जवान ख़राब हो जायें तो फिर उन पर क़ाबू पाना आसान है। उन्होंने इस राह में दीन व अख़लाक़ को मानेअ माना है। उन्होनें सही सोचा है क्योंकि जो मिल्लत गुनाहों, बुराईयों और मंशियात के जाल में फस जायेगी वह कभी भी दुश्मन का मुक़ाबला नही कर सकती।

क्या हम इन मसाइल के मुक़ाबले में ख़ामौश हो कर बैठ जायें और दुआ करें कि मुस्लेह (इस्लाह करने वाला) आ जाये। यह डरपोक और सुस्त इंसानों की बाते हैं। कर्बला में चन्द ही तो नफ़र थे जिन्होंने क़ियाम किया या पैगम्बरे इस्लाम (स.) को ले लिजिये जिन्होंने तने तन्हा लोगो को हक़ की दावत दी या जनाबे इब्राहीम अलैहिस्सलाम जो तन्हा ही खड़े हो गये। हक़्क़ो अदालत के रास्ते में तादाद की कमी से नही घबराना चाहिए। ला तस्तवहशु फ़ी तरीक़ि अलहुदा लिलक़िल्लति अहलिहि।

अल हम्दु लिल्लाहि कि अब अफ़राद की कमी नही है, पन्दरह शाबान को मस्जिदे जमकरान के चारों तरफ़ मैदाने अराफ़ात से ज़्यादा लोग जमा थे और इनमें जवानों को अकसरियत हासिल थी। या एतेकाफ़ के ही ले लिजिये उसमें जवान इतना बढ़ चढ़ कर हिस्सा लेते हैं कि जगह कम रह जाती है, यह सब आपकी फ़ौज है। हमें चाहिए कि हमारी ज़ात, हमारी ज़बान और हमारा क़लमदूसरों के लिए नमूना हो ताकि इस अख़लाक़ी बोहरान के मुक़ाबले में खड़े हो सकें। इस राह में अल्लाह के वादे हमरे होंसले बढ़ाते है।अवाम अब भी रूहानियत के अपना महरे असरार मानते हैं। जिस इलाक़े में भी तबलीग़ के लिये जाओ वहाँ के लोगो की मिश्किलों को नज़र में रख़ो और मसूलीन को उनसे आगाह कराओ। लोगों के दो गिरोह हैं एक अवामी हिरोह जो कहता है कि माहे रमज़ान में पाक हो जायेंगे

और दूसरा गिरोह खवास का है जो कहता है कि माहे शाबान में पाक हो कर रमज़ान में वारिद होंगे, क्योंकि माहे रमज़ान अल्लाह की मेहमानी का महीना है इस लिए मेहमान को चाहिए कि पहले ही पाक हो जाये लिहाज़ा हमें अपनी ज़बान व आँख़ों को माहे शाबान में ही पाक कर लेना चाहिए ताकि रमज़ान की बरकतों से फ़ायदा उठा सकें और इस बारे में हमें लोगों को भी आगाह करना चाहिए कि माहे शाबान अपने आपको सवाँरने और अल्लाह की ज़ियाफ़त के लिए तैयार होने का महीना है।

मैं आप सब हज़रात से इस बात का उम्मीदवार हूँ कि अपने प्रोग्रामों और मसाइल को कामयाबी के साथ अंजाम दो और सियासी झमेलों में न फस कर सब लोगों को इत्तेहाद की दावत दो। हमारे सामने कोई मुश्किल नही है बल्कि हम खुद मुश्किलों को जन्म देते हैं। हम सब को चाहिए कि आपस में मुत्तहिद हो जायें क्योंकि दुश्मन अपनी तैयारी पूरी कर चुका हैं, वह जब आजायेगा तो किसी को भी नही छोड़ेगा।

हवालेः-

[1] बिहारुल अनवार ६५/१६१

[2] बिहारूल अनवार जिल्द६५/१६६ हदीस न.२१

शियों के सिफ़ात(५)

हदीस-

अन अनस इब्ने मालिक क़ाला क़ालू या रसूलल्लाहि मन औवलियाउ अल्लाहि अल्लज़ीना ला खौफ़ुन अलैहिम वला हुम यहज़नून ? फ़क़ाला अल्लज़ीना नज़रू इला बातिनि अद्दुनिया हीना नज़रा अन्नासु इला ज़ाहिरिहा, फ़ाइहतम्मु बिआजलिहा हीना इहतम्मा अन्नासु बिअजिलिहा, फ़अमातु मिनहा मा ख़शव अन युमीताहुम, व तरकु मिनहा मा अलिमु अन सयतरुका हुम फ़मा अरज़ा लहुम मिनहा आरिज़ुन इल्ला रफ़ज़ूहु, वला ख़ादअहुम मिन रफ़अतिहा ख़ादिऊन इल्ला वज़ऊहु, ख़ुलिक़त अद्दुनिया इन्दाहुम फ़मा युजद्दिदुनहा , व ख़राबत बैनाहुम फ़मा यअमुरूनहा, व मातत फ़ी सुदूरि हिम फ़मा युहिब्बुनहा बल यहदिमुनहा, फ़यबनूना बिहा आख़िरताहुम, व यबयाऊनहा फ़यशतरूना बिहा मा यबक़ा लहुम, नज़रु इला

अहलिहा सर्आ क़द हल्लत बिहिम अलमुसलातु, फ़मा यरौवना अमानन दूना मा यरजूना, वला फ़ौफ़न दूना मा यहज़रूना।[१]

तर्जमा-

अनस इब्ने मालिक ने रिवायत की है कि पैगम्बर (स) से कहा गया कि ऐ अल्लाह के रसूल अल्लाह के दोस्त -जिनको न कोई ग़म है और न ही कोई ख़ौफ- वह कौन लोग हैं? आप ने फरमाया यह वह लोग हैं जब दुनिया के ज़ाहिर को देखते हैं तो उसके बातिन को भी देख लेते हैं, इस तरह जब लोग इस दो रोज़ा दुनिया के लिए मेहनत करते हैं उस वक़्त वह आख़िरत के लिए कोशिश करते हैं, बस वह दुनिया की मुहब्बत को मौत के घाट उतार देते हैं इस लिए कि वह डरते हैं कि दुनिया उनकी मलाकूती और क़ुदसी जान को तबाह कर देगी, और इससे पहले कि दुनिया उनको तोड़े वह दुनिया को तोड़ देते हैं, वह दुनिया को तर्क कर देते हैं क्योंकि वह जानते हैं दुनिया उन्हें जल्दी ही तर्क कर देगी, वह दुनिया की तमाम चमक दमक को रद्द कर देते हैं और उसके जाल में नही फसते, दुनिया के नशेबो फ़राज़ उनको धोका नही देते बल्कि वह लोग तो ऐसे हैं जो बलन्दियों को नीचे खैंच लाते हैं। उनकी नज़र में दुनिया पुरानी और वीरान है लिहाज़ा वह इसको दुबारा आबाद नही करते, उनके दिलो से दुनिया की मुहब्बत निकल चुकी है लिहाज़ा वह दुनिया को पसंद नही करते बल्कि वह तो दुनिया को वीरान करते हैं,

और उस वक़्त इस वीराने में अबदी(हमेशा बाक़ी रहने वाला) मकान बनाते हैं, इस ख़त्म होने वाला दुनिया को बेंच कर हमेशा बाक़ी रहने वाले जहान को ख़रीदते हैं, जब वह दुनिया परस्तों को देखते हैं तो वह यह समझते हैं कि वह ख़ाक पर पड़े हैं और अज़ाबे इलाही में गिरफ़्तार हैं, वह इस दुनिया में किसी भी तरह का अमनो अमान नही देखते वह तो फ़क़त अल्लाह और आख़िरत से लौ लगाये हैं और सिर्फ अल्लाह की नाराज़गी व उसके अज़ाब से डरते हैं।

हदीस की शरह

फ़र्क़े खौफ़ व ग़म- मामूलन कहा जाता है कि खौफ़ मुस्तक़बिल से और ग़म माज़ी से वाबस्ता है।इस हदीस में एक बहुत मुहिम सवाल किया गया है जिसके बारे में ग़ौरो फ़िक्र होना चाहिए।

पूछा गया कि औलिया ए इलाही जो न मुस्तक़बिल से डरते हैं और न ही माज़ी से ग़मगीन हैं कौन लोग हैं?

हज़रत ने उनको पहचनवाया और फरमाया औलिया अल्लाह की बहुत सी निशानियाँ हैं जिनमें से एक यह है कि वह दुनिया परस्तों के मुकाबले में बातिन को देखते हैं।क़ुरआन कहता है कि दुनिया परस्त अफ़राद आख़िरत से ग़ाफ़िल हैं।

“यअलामूना ज़ाहिरन मिनल हयातिद्दुनिया व हुम अनिल आख़िरति हुम ग़ाफिलून। ” [२]

अगर वह किसी को कोई चीज़ देते हैं तो हिसाब लगा कर यह समझते हैं कि हमों नुक़्सान हो गया है, हमरा सरमाया कम हो गया है।[३] लेकिन बातिन को देखने वाले एक दूसरे अंदाज़ में सोचते हैं। क़ुरआन कहता है कि “मसालुल लज़ीना युनफ़ीक़ूना अमवालाहुम फ़ी सबीलिल्लाहि कमसले हब्बतिन अन बतत सबआ सनाबिला फ़ी कुल्ले सुम्बुलतिन मिअतु हब्बतिन वल्लाहु युज़ाईफ़ु ले मन यशाउ वल्लाहु वासिउन अलीम।[४] ” जो अपने माल को अल्लाह की राह में ख़र्च करते हैं वह उस बीज की मानिन्द है जिस से सात बालियां निकलती हैं और बाली में सौ दाने होते हैं और अल्लाह जिसके लिए भी चाहता है इसको दुगना या कई गुना ज़्यादा करता है अल्लाह (रहमत और क़ुदरत के ऐतबार से वसीअ) और हर चीज़ से दानातर है।

जो दुनिया के ज़ाहिर को देखते हैं वह कहते हैं कि अगर सूद लेगें तो हमारा सरमाया ज़्यादा हो जायेगा लेकिन जो बातिन के देखने वाले हैं वह कहते हैं कि यही नही कि ज़यादा नही होगा बल्कि कम भी हो जायेगा। क़ुरआन ने इस बारे में दिलचस्प ताबीर पेश की है “यमहक़ु अल्लाहि अर्रिबा व युरबिस्सदक़ाति वल्लाहु ला

युहिब्बु कुल्ला कफ़्फ़ारिन असीम "[५] अल्लाह सूद को नाबूद करता है और सदक़ात को बढ़ाता और अल्लाह किसी भी नाशुक्रे और गुनाहगार इंसान को दोस्त नही रखता।

जब इंसान दिक़्क़त के साथ देखता है तो पाता है कि जिस समाज में सूदरा इज होता है वहआख़िर कार फ़क़रो फ़ाक़ा और ना अमनी में गिरफ़्तार हो जाता है। लेकिन इसी के मुक़ाबले में जिस समाज में आपसी मदद और इनफ़ाक़ पाया जाता है वह कामयाब और सरबलन्द है।

इंक़लाब से पहले हज के ज़माने में अख़बार इस ख़बर से भरे पड़े थे कि हज अंजाम देने के लिए ममलेकत का पैसा बाहर क्यों ले जाते हो ? क्यों यह अर्बों को देते हो ? क्योंकि वह फ़क़त ज़ाहिर को देख रहे थे लिहाज़ा इस बात को दर्क नही कर रहे थे कि यह चन्द हज़ार डौलर जो ख़र्च किये जाते हैं इसके बदले में हाजी लोग अपने साथ कितना ज़्यादा मानवी सरमाया मुल्क में लाते हैं। यह हज इस्लाम की अज़मत है और मुसलमानों की वहदत व इज़्ज़त को अपने दामन में छुपाये है। कितने अच्छे हैं वह जिल जो वहाँ जाकर पाको पाकीज़ा हो जाते हैं।

आप देख रहे हैं कि लोग इस दुनिया की दो दिन ज़िन्दगी के लिए कितनी मेहनत करते हैं वह मेहनत जिसके बारे में यह भी नही जानते कि इसका सुख भी हासिल करेंगें या नही। मिसाल के तौर पर तेहरान में एक इंसान ने एक घर बनाया था जिसकी नक़्क़ाशी में ही सिर्फ़ डेढ़ साल लग गया था, लेकिन वह बेचारा उस मकान से कोई फ़ायदा न उठा सका और बाद मे उसका चेहलुम इसी घर में मनाया गया। इस दुनिया के लिए जिसमें सिर्फ़ चार रोज़ ज़िन्दा रहना इतनी ज़्यादा भाग दौड़ की जाती है लेकिन उख़रवी ज़िंदगी के लिए कोई मेहनत नही की जाती, उसकी कोई फ़िक्र ही नही है।

यह हदीस औलिया ए इलाही की सिफ़ात का मजमुआ है। अगर इन सिफ़ात की जमा करना चाहो तो इनका ख़ुलासा तीन हिस्सों में हो सकता है।

1- औलिया ए इलाही दुनिया को अच्छी तरह पहचानते हैं और जानते हैं कि यह चन्द रोज़ा और नाबूद होने वाली है।

2-वह कभी भी इस की रंगीनियों के जाल में नही फसते और न ही इसकी चमक दमक से धोका खाते क्योंकि वह इसको अच्छी तरह जानते हैं।

3-वह दुनिया से सिर्फ़ ज़रूरत के मुताबिक़ ही फ़यदा उठाते हैं, वह इस फ़ना होने वाली दुनिया में रह कर हमेशा बाक़ी रहने वाली आख़ेरत के लिए काम करते हैं। वह दुनिया को बेचते हैं और आखेरत को ख़रीदते हैं।

हम देखते हैं कि अल्लाह ने कुछ लोगों को बलन्द मक़ाम पर पहुँचाया है सवाल यह है कि उन्होंने यह बलन्द मक़ाम कैसे हासिल किया ? जब हम ग़ौर करते हैं तो पाते हैं कि यह अफ़राद वह हैं जो अपनी उम्र से सही फैयदा उठाते हैं, इस ख़ाक से आसमान की तरफ़ परवाज़ करते हैं ,पस्ती से बलन्दी पर पहुँचते हैं। हज़रत अमीरूल मोमेनीन अली इब्ने इबी तालिब (अ) ने जंगे ख़न्दक़ के दिन एक ऐसी ज़रबत लगाई जो क़ियामत तक जिन्नो इन्स की इबादत से बरतर है। “ज़रबतु अलीयिन फ़ी यौमिल ख़न्दक़ि अफ़ज़ला मिन इबादति अस्सक़लैन।” क्योंकि उस दिन कुल्ले ईमान कुल्ले कुफ़्र के मुक़ाबले में था। बिहारुल अनवार में है कि “बरज़ल ईमानु कुल्लुहु इला कुफ़्रे कुल्लिहि।” [६]अली (अ) की एक ज़रबत का जुन व इंस की इबादत से बरतर होना ताज्जुब की बात नही है।

अगर हम इन मसाइल पर अच्छी तरह ग़ौर करें तो देखेगें कि कर्बला के शहीदों की तरह कभी कभी आधे दिन में भी फ़तह हासिल की जा सकती है। इस वक़्त हमको अपनी उम्र के क़ीमती सरमाये की क़द्र करनी चाहिए और औलिया ए

इलाही(कि जिनके बारे में क़ुरआन में भी बहस हुई है) की तरह हमको भी दुनिया को अपना हदफ़ नही बनाना चाहिए।

बेनियाज़ी

नबी ए अकरम (स) ने फ़रमाया:

خيرالغني غني النفس बेहतरीन बेनियाज़ी नफ़्स की बेनियाज़ी है।

तबीयत एक अच्छा मदरसा है जिसकी क्लासों में तरबीयत की बहुत सी बातें सीखी जा सकती हैं। तबीयत के इन्हीं मुफ़ीद व तरबीयती दर्सों में से एक दर्स यह है कि जानवरों की ज़िन्दगी के निज़ाम में अपने बच्चों से मेहर व मुहब्बत की एक हद मुऐयन होती है। दूसरे लफ़्ज़ों में यह कहा जा सकता है कि जानवर अपने बच्चे से उसी मिक़दार में मुहब्बत करता है, जितनी मिक़दार की उस बच्चे को ज़रूरत होती है। इसलिये जानवर अपने बच्चे को सिर्फ़ उसी वक़्त तक दाना पानी देते हैं जब तक वह उसे ख़ुद से हासिल करने के काबिल न हो। लेकिन जैसे ही उसमें थोड़ी बहुत ताक़त आ जाती है और हरकत करने लगता है फौरन माँ की

मुहब्बत से महरूम हो जाता है, उसे तन्हा छोड़ दिया जाता है ताकि ख़ुद अपने पैरों पर खड़े होकर जिना सीख ले।

माँ बाप को चाहिये कि वह अपने घरों में तबीयत के इस क़ानून की पैरवी करते हुए अपने बच्चों को ख़ुद किफ़ाई का दर्स दें, ताकि वह आहिस्ता आहिस्ता अपने पैरों पर खड़ा होना सीख जायें।

उन्हे बताया जाये कि अल्लाह ने सबसे बेहतरीन और क़ीमती जिस्मी व फ़िक्री ख़ज़ानों को तुम्हारे वुजूद में क़रार दिया है। अब यह तुम्हारी ख़ुद की ज़िम्मेदारी है कि उस ज़ख़ीरे को हासिल करके ख़ुद को ग़ैरे ख़ुदा से बेनियाज़ कर लो।

वालेदैन को चाहिए कि इस वाक़ेईयत को बयान करने के अलावा वह अपने बच्चों को अमली तौर पर अलग ज़िन्दगी बसर करने और अपने पैरों पर खड़ा होना सिखायें।

कुछ माँ बाप इस बात को भूल ही जाते हैं कि उनके बच्चे एक न एक दिन उनके बग़ैर ज़िन्दगी बसर करने पर मजबूर होंगें।

लिहाज़ा वह उनके तमाम छोटे बड़े कामों में दख़ालत करते हैं और उन्हे ख़ुद फ़ैसला करने का मौक़ा ही नही देते। वह बच्चों की जगह ख़ुद ही फ़ैसला करके सारे काम अँजाम दे लेते हैं।

इस तरह की तरबीयत का नतीजा यह होगा कि बच्चे चाहते या न चाहते हुए ख़ल्लाक़ियत, ग़ौर व फ़िक्र में पीछे रह कर धीरे धीरे दूसरों पर मुनहसिर हो जायेंगे और समाजी ज़िन्दगी से हाथ धो बैठेगें। ऐसे बच्चे आला तालीम हासिल करने के बावजूद समाजी तरक्क़ी के एतेबार से कमज़ोर रह जाते हैं। वह समाजी ज़िन्दगी में कम कामयाब हो पाते हैं और दूसरों के मोहताज हो जाते हैं। क्योंकि उन्हे घर में मुस्तक़िल ज़िन्दगी बसर करने के उसूल नही सिखाये गये। जबकि माँ बाप घर के अन्दर ही अपने बच्चों की ग़ैरे मुस्तक़ीम तौर पर ऐसी तरबियत कर सकते हैं, वह उन्हें धीरे धीरे ग़ौरो फ़िक्र करना सिखायें उनकी राये को अहमियत दें और आहिस्ता आहिस्ता उनके लिए फ़िक्री व माली इस्तक़लाल का ज़मीना फ़राहम करें।

इस्लाम के तरबियती परोग्राम इस तरह तरतीब दिये गये हैं कि वह बुनियादी तौर पर इंसान को अपने पैरों पर खड़ा होना सिखाते हैं और दूसरों की बैसाखियों पर चलने से रोकते हैं। क्योंकि दूसरों के सहारे ज़िन्दगी बसर करने से इंसान की इज़्ज़त व शराफ़त खत्म हो जाती है और बुनियादी तौर पर इंसान का वुजूद गुम

हो के रह जाता है, उसके मानवी व फ़िक्री खज़ाने का सही इस्तेमाल नही हो पाता और यह इंसान कके लिए सबसे बड़ी तौहीन है। क्योंकि दूसरों के सहारे ज़िन्दगी बसर करने से ना इंसान का वुजूद पहचाना जाता है और न ही उसकी सलाहियतें सामने आ पातीं।

नबी ए अकरम(स) फ़रमाते हैं: ملعون من القي كله علي الناس

जो दूसरों पर मुनहसिर हो जाये और दूसरों की बैसाख़ियों पर चलने लगे वह अल्लाह की रहमत से दूर हो जायेगा।

ज़ाहिर है कि अल्लाह की रहमत से दूरी के लिये यही काफ़ी है कि वह ख़ुद अपने वुजूद की अहमियत को न जान सका और उसकी तमाम ताक़ते इस्तेमाल के बग़ैर ही बेकार हो कर रह गईं। इससे भी बढ़कर यह कि जब किसी की निगाहें दूसरों पर टिक जायेंगी तो वह अल्लाह के लुत्फ़ व करम को जानने व समझने से महरूम हो जायेगा और यह अल्लाह की रहमत से दूरी की एक क़िस्म है।

इस्लाम के तरबीयती प्रोग्रामों का ग़ैरे मुस्तक़ीम मक़सद यह हैं कि इंसान के सामने जो जिहालत के पर्दे पड़े हैं उन्हें हटा कर इस हक़ीक़त को ज़ाहिर करे कि तमाम ख़ूबियाँ और कमालात अल्लाह के इख़्तियार में है और अल्लाह फ़य्याज़

अलल इतलाक़ है लिहाज़ा अपनी ख़्वाहिशों के हुसूल के लिये उसकी बारगाह में हाथ फैलाने चाहिए।

इसी बुनियाद पर कुछ हदीसों का मज़मून यह हिकायत करता हैं कि इंसान को अल्लाह की ज़ात से उम्मीदवार रहना चाहिए और यह हक़ीक़त उसी वक़्त सामने आती है जब इंसान दूसरे तमाम इँसानों से मायूस हो जाता है। कुछ दूसरी हदीसों के मज़मून इस तरह दलालत करते हैं कि जब किसी इंसान को किसी चीज़ की ज़रूरत पेश आती है तो उसकी वह ज़रूरत उसी वक़्त पूरी होगी जब वह तमाम लोगों से मायूस होकर सिर्फ़ अल्लाह से उम्मीदवार हो, ज़ाहिर है कि ऐसे में उसकी ज़रूरतें ज़रूर पूरी होगीं।

मरहूम शैख अब्बास क़ुम्मी ने अपनी किताब सफ़ीनतुल बिहार के सफ़ा ३२७ पर इस रिवायत को नक़्ल किया हैं कि इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया:

اذا ارد احدكم ان لا يسال الله شيئا الا اعطاه فلييياس من الناس كلهم و لا يكون له رجاة الا من عند الله عز و جل فادا علم الله عز و جل دالك من قلبه لم يسال الله شيئا الا اعطاه

जब भी तुम में कोई शख़्स यह चाहे कि उसकी हाजत बिला फ़ासला पूरी हो जाये उसे चाहिये कि तमाम लोगों से उम्मीदे तोड़ कर सिर्फ़ अल्लाह से लौ लगाये जब अल्लाह उसके क़ल्ब में इस कैफ़ियत के देखेगा तो जो चीज़ उसने माँगी होगी उसे ज़रूर अता करेगा। कुछ दूसरी हदीसों में आया है कि मोमिन का फ़ख़्र व

बरतरी इस बात में है कि वह तमाम लोगों से अपनी उम्मीदें तोड़ ले। यानी अगर कोई इंसान खुद साज़ी की मंज़िल में इस मर्तबे पर पहुँच जाये कि तमाम इंसानों से क़ते उम्मीद करके सिर्फ़ अल्लाह से लौ लगाये रहे तो वह इस कामयाबी को हासिल करने के बाद दूसरों पर फ़ख़्र करने का हक़दार है।

इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं: ثلثة هن فخر المومن زينته في الدنيا و الاخرة (الصلوة في اخر الليل و ياسه مما في ايدي الناس و وولاية من ال محمد (ص

तीन चीज़े ऐसी हैं कि जो दुनिया व आख़िरत में मोंमिन के लिये ज़ीनत व फ़ख्र शुमार होती हैं। एक तो नमाज़े शब पढ़ना, दूसरे लोगों के पास मौजूद चीज़ों से उम्मीद तोड़ लेना, तीसरे पैग़म्बरे इस्लाम (स) की औलाद से जो इमाम है उनकी विलायत को मानना।

नायाब ख़ज़ाना कुछ हदीसें ऐसी हैं कि जो इंसानो को ज़्यादा की हवस से रोकते हुए उन्हे क़नाअत का दर्स देना चाहती हैं।

ज़ाहिर है कि जब इंसान ख़ुद को सँवार कर क़नाअत करना सीख जाता है तो हक़ीक़त में वह ऐसे ख़ज़ाने का मालिक बन जाता है जिसमें कभी कमी वाक़ेअ नही होती।

हज़रत अली अलैहिस्सलाम फ़रमाते है: لا كنز اغني من القناعة ة क़नाअत से बढ़ कर कोई ख़ज़ाना नही है।

नबी ए अकरम(स) फ़रमाते हैं: خير الغني غني النفس सबसे बड़ा ख़ज़ाना नफ़्स की बेनियाज़ी है।

हज़रत इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं: من رزق ثلثا نال ثلثا و هو الغني الاكبر القناعة بما اعطي واليس مما في ايدي الناس و ترك الفضول

जिस किसी को यह तीन चीज़ें मिल गईं उसे बहुत बड़ा ख़ज़ाना मिल गया।

जो कुछ उसे मिला है उस पर क़नाअत करे और जो लोगों के पास है उससे उम्मीदों को तोड़ ले और फ़ुज़ूल कामों को छोड़ दे।

उसूले काफ़ी में हज़रत इमाम ज़ैनुल आबेदीन अलैहिस्सलाम से इस तरह नक़्ल हुआ है:

رايت الخير كله قد اجتمع في قطع الطمع عما في ايدي الناس

तमाम नेकियाँ और ख़ूबियाँ एक चीज़ में जमा हो गयीं हैं और वह लोगों से उम्मीद न रखना है।

कुछ हदीसों में बेनियाज़ी को इंसान का हक़ीक़ी ख़ज़ाना क़रार दिया गया है। ज़ाहिर है कि माल जमा करने से इंसान बेनियाज़ नही होता बल्कि उसकी ज़रूरतें और बढ़ जाती है।

नबी ए अकरम(स) फ़रमाते हैं: ليس الغناء في كثرة العرض و انما الغناء غني النفس माल जमा करने में बेनियाज़ी नही है, बल्कि बेशक नफ़्स को बेनियाज़ बनाना बेनियाज़ी है।

कुछ दहीसों में इस तरह बयान हुआ है कि बुनियादी तौर पर मोमिन के लिए बेहतर है कि अल्लाह के सिवा कोई और उसका वली ए नेअमत न हो। हर इंसान एक न एक दिन अपनी रोज़ी और क़िस्मत को ज़रूर हासिल कर लेगा, इसको बुनियाद बनाकर मज़बूत अक़ीदे के साथ सिर्फ़ अल्लाह को ही वली नेअमत मानना चाहिए।

हज़रत अली अलैहिस्सलाम ने हज़रत इमाम हसन अलैहिस्सलाम को वसीयत करते हुए फ़रमाया कि:

و ان استطعت ان لا يكون بينك و بينت الله ذونعمة فافعل فانك مدرك قسمك و اخذ سهمك و ان اليسر من الله اكرم و اعظم من الكثير من خلقه

अगर ताक़त व क़ुदरत हो तो कोशिश करो कि तुम्हारे और तुम्हारे रब के दरमियान कोई दूसरा वली नेमत न होने पाये। यक़ीनन तुम्हारी क़िस्मत में जो कुछ है वह तुम्हे मिलकर रहेगा और अगर ख़ुदा की तरफ़ से मिलने वाली नेअमत, लोगों की तरफ़ से मिलनी वाली नेअमतों से मिक़दार में कम हो तो भी वह कम मिक़दार अहम है, क्योंकि अल्लाह की तरफ़ से मिलने वाली नेअमतों में में बरकत होती है।

तारीख़े इस्लाम में मिलता है कि एक ग़रीब, बाल बच्चों वाले शख़्स ने अपनी बीवी से मशवरा कर के तय किया कि पैग़म्बर इस्लाम (स) की ख़िदमत में हाज़िर होकर उनसे मदद की दरख़्वास्त करेगा। जब वह मस्जिद में पहुँचा और अपनी बात कहनी चाही उसी वक़्त अल्लाह के नबी (स.अ.व.व) ने फ़रमाया:

من سئلنا اعطيناه و من استغني اعطاه الله

जो हमसे मदद माँगेगा हम उसकी मदद करेंगें और जो ख़ुद को बेनियाज़ कर लेगा अल्लाह तअला उसकी मदद करेगा और उसे बेनियाज़ बना देगा।

यह वाक़िया तीन बार तकरार हुआ। वह ग़रीब शख़्स पैग़म्बरे इस्लाम(स.) की रहनुमाई के असर से जंगलों में पहुँच कर मेहनत व मज़दूरी में लग गया और

रोज़ाना ज़्यादा से ज़्यादा मेहनत करने लगा यहाँ तक कि धीरे धीरे उसकी ग़ुरबत दूर हो गई।

इस हदीस से तरबीयत का जो सबसे ज़रीफ़ व अहम नुक्ता सामने आता है वह यह है कि जो दूसरों से उम्मीदों को तोड़ कर ख़ुद अपने पैरों पर खड़े होने की कोशिश करे और अपनी वुजूद की ताक़त व सलाहियत को काम में लाये वह यक़ीनी तौर पर दूसरों से बेनियाज़ हो जायेगा।

बच्चों की तालीम व तरबीयत में माँ बाप की सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी यह है कि वह बच्चों को तदरीजन यह समझाये कि उनके वुजूद में हर तरह की ताक़त व सलाहियत पायी जाती हैं। लिहाज़ा वह दूसरों पर तकिया करने और उनसे मदद माँगने के बजाए ख़ुद अपने पैरों पर खड़े हों और अपनी ज़ात में मौजूद ताक़त, सलाहियत व फ़िक्र से फ़ायदा उठायें।

माँ बाप और उस्तादों की ज़िम्मदारी है कि वह बच्चों को धीरे धीरे से इस हक़ीक़त से आगाह करें। लिहाज़ा ज़रूरी है कि उन्हे मारने पीटने और धमकाने के बजाए उनके मुसबत पहलुओं की ताईद करते हुए उन्हों मज़बूत बनाया जाये,

उनका हौसला बढ़ाया जाये और उन्हे इतमिनान दिला जाये ताकि वह यक़ीन व इसबात की मंज़िल तक पहुँच जायें।

हमें यह कभी नही भूलना चाहिये कि बच्चे बड़ों के बरख़िलाफ़ कशमकश व तज़बज़ुब का शिकार होते हैं, लिहाज़ा उन्हे दूसरों की ताईद की बहुत ज़्यादा ज़रूरत होती है।

हमें उनसे जुरअत के साथ कहना चाहिए कि तुम्हारे अन्दर ताक़त है तुम हर काम कर सकते हो।

इस तरह के जुमलों से उनकी हिम्मत बढ़ा कर धीरे धीरे उन्हे मुस्तक़िल ज़िन्दगी की राहें दिखाई जा सकती है। इस तरह वह अमली तौर पर ख़ुद पर भरोसा करते हुए अपनी ज़ाती सलाहियतों से पनाह लेंगे और धीरे धीरे उनकी ख़ुदा दाद सलाहियतें ज़ाहिर होने लगेंगीं।

****

हवाले

[1] बिहारुल अनवार जिल्द ७४/ १८१

[2] सूरए रूम आयत ७

[3] पैग़म्बर (स) की एक हदीस में मिलता है कि “अग़फ़लु अन्नास मन लम यत्तईज़ यतग़य्यरु अद्दुनिया मिन हालि इला। ”सबसे ज़्यादा ग़ाफ़िल लोग वह हैं जो दुनिया के बदलाव ले ईबरत हासिल न करे और दिन रात के बदलाव के बारे में गौरो फ़िक्र न करे।(तफ़्सीरे नमूना जिल्द१३/१३)

[4] सूरए बक़रा आयत २६१

[5] सूरए बक़रा आयत २७६

[6] बिहारूल अनवार जिल्द १७/२१५

हिदायत व रहनुमाई

وَنَصَحْتُ لَكُمْ وَلَكِن لاَّ تُحِبُّونَ النَّاصِحِينَ

और मैने तुम्हे नसीहत की मगर तुम नसीहत करने वालों को पसंद नही करते।

सूरः ए आराफ़ आयत ७८

समाजी ज़िन्दगी, दर अस्ल इंसान का बहुत से नज़रियों व अफ़कार से दो चार होना है। उनमें से कुछ अफ़कार मज़बूत व पायदार होते हैं और कुछ कमज़ोर और बेबुनियाद। जिस तरह से हर इंसान की शक्ल व सूरत एक दूसरे से जुदा और अलग है उसी तरह हर इंसान के अफ़कार व नज़रियात भी जुदा जुदा हैं।

अफ़कार के इस इख़्तेलाफ़ से जो नतीजा सामने आता है वह यह है कि इंसान को चाहिये कि वह पहली फ़ुरसत में दूसरों के मोहकम व मज़बूत नज़रियों से फ़ायदा उठाये और दूसरे मरहले में लोगों की राहनुमाई व हिदायत करे।

समाजी ज़िन्दगी आपसी लेन देन का नाम है, जिसमें कभी इंसान समाज से कुछ लेता है और कभी समाज को कुछ देता है। समाजी ज़िन्दगी की एक

ख़ुसूसियत यह है कि इसमें अफ़कार की रद्दो बदल की वजह से कमज़ोर व अधूरी फ़िक्र भी मोहकम व यक़ीनी फ़िक्र में बदल जाती हैं। इस्लाम ने इंसानों को गोशा नशीनी की ज़िन्दगी

से बाहर निकलने और समाजी ज़िन्दगी बिताने का जो पैग़ाम दिया है वह दर हक़ीक़त उनके अफ़कार की परवरिश व रुश्द का इन्तेज़ाम है।

इसी बुनियाद पर जो दूसरा काम अंजाम दिया गया है वह यह है कि इंसानों को लापरवाई से निकाला गया है, यानी इस्लामी समाज मे तमाम अफ़राद इस बात के ज़िम्मेदार हैं कि वह लोगों की ग़लत फ़िक्रों के मुक़ाबले में उनकी राहनुमाई करते हुए उनके ग़लत नज़रियों की इस्लाह करके उन्हे मोहकम बनायें।

जाहिर है कि एक ग़लत फ़िक्र मुमकिन है कि एक बीमारी के वायरस से ज़्यादा ख़तरनाक और नुक़सान देह साबित हो सकती है। क्योंकि बीमारी का इलाज तो कुछ अर्से तक आराम और दवा खाकर किया जा सकता है, लेकिन एक कमज़ोर और ग़लत फ़िक्र मुमकिन है कि इंसानों को नाबूदी की दलदल में इस तरह फँसा दे कि इंसान ज़िन्दगी के आख़री लम्हे तक उससे निजात न पा सके। इससे भी बढ़ कर यह कि मुमकिन है कि एक ग़लत व अधूरी फ़िक्र समाज में राएज व

मशहूर हो कर एक सिरे से दूसरे सिरे तक फैल जाये। लिहाज़ा मोमिन व मुतदय्यिन लोगों का फ़रीज़ा है कि लोगों कोنصح المستشير و النصيحة للمسلمين के तहत जिसका ज़िक्र क़ुरआन व रिवायात में हुआ है हिदायत व राहनुमाई करे। यानी मशवेरा करने वालों को अच्छा मशवेरा दे और मुसलमानों को नसीहत करे। इसी बुनियाद पर इस्लाम ने मशवरे की रविश को मुसलमानों में नेकी और भलाई का काम क़रार देते हुए तमाम मुसलमानों को उसकी तरफ़ तवज्जो दिलाई है।

ख़ुदावंदे आलम क़ुरआने मजीद में फ़रमाता है: وَشَاوِرْهُمْ فِي الأَمْرِ

यानी ऐ अल्लाह के नबी किसी काम को अंजाम देने के लिए तमाम मुसलमानों से मशवेरा किया करो।

(सूरः ए आले इमरान आयत १५९)

और एक दूसरी जगह इरशाद होता है: وَأَمْرُهُمْ شُورَى بَيْنَهُمْ

यानी मुसलमानों का काम हमेशा मशवेरों के साथ होता है।

(सूरह शूरा आयत ३८)

लिहाज़ा मोमिनीन ककी ज़िम्मेदारी है कि अगर समाज में कमज़ोरियों और बुराईयों को देखें तो उनका मुक़ाबला करें दूसरे अफ़राद की राहनुमाई करें। इसी तरह समाज के हर फ़र्द की ज़िम्मेदारी है कि जब कोई मुसलमान उसकी हिदायत और रहनुमाई करे तो उसकी नसीहत को दिल व जान से क़बूल करे।

वाज़ेह है कि अगर यह बुराईयाँ हलाल व हराम तक पहुच जायें तो इस्लाम ने तमाम मुसलमानों को इसकी उमूमी नज़ारत (देख रेख) या अम्र बिल मारूफ़ व नही अनिल मुनकर का हुक्म दिया है।

एक ऐसा ज़रीफ़ नुक्ता जिसको बयान करने में ग़फ़लत नही बरतनी चाहिये वह यह है कि हिदायत व रहनुमाई एक बहुत ही लतीफ़ व ज़रीफ़ काम है। लिहाज़ा नसीहत करने वाले को यह काम निहायत दिक़्क़त से अंजाम देना चाहिये ताकि उसे इस काम की तौफ़ीक़ मिलती रहे, वरना न सिर्फ़ यह कि दूसरों के कामों को बनाने और सँवारने में कामयाब नही होगें, बहुत से लोगों को अपना दुश्मन भी बना लेगें। जबकि अगर हम अपना काम होशियारी से अंजाम दें तो दुश्मनों के बजाए नए नए दोस्त बना सकते हैं।

नसीहत व हिदायत इस्लाम की नज़र में

हज़रत इमाम जाफ़र सादिक़ अलैहिस्सलाम से यह रिवायत नक़्ल हुई है कि

من رأي اخاه علي امر يكرهه فلم يرده عنه و هو يقدر عليه فقد خانه

जो भी अपने मोमिन भाई को कोई ऐसा काम करते हुए देखे जो नाज़ेबा और बुरा हो, तो अगर वह उसे रोकने की क़ुदरत रखता हो तो उसे रोके और अगर वह लापरवाई के साथ उसके पास से गुज़र जाये तो बेशक उसने उसके साथ ख़ियानत की है।

हज़रत इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम से नक़्ल हुआ है कि:

يجب للمومن علي ا لمومن ان يناصحه हर मोमिन पर वाजिब है कि वह दूसरे मोमिन की रहनुमाई और हिदायत करे।

दूसरी रिवायतों के मुतालए से मालूम होता है कि यह हिदायत व रहनुमाई सिर्फ़ मुलाक़ात तक महदूद नही है बल्कि अगर इंसान जानता हो कि फ़लाँ मुसलमान ग़लत राह पर चल रहा है तो अब उसकी ज़िम्मेदारी है कि वह उसकी राहनुमाई

करे। चाहे वह शख़्स वहाँ मौजूद भी न हो और उसने उससे उसका तक़ाज़ा भी न किया हो।

इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम से नक़्ल हुआ है कि يجب للمومن علي ا لمومن ان يناصحه له في المشهد والمغيب

हर मोमिन के लिये ज़रूरी है कि अगर वह किसी को बुराई करते देखे तो उसकी रहनुमाई करे चाहे यह काम उसकी मौजूदगी में हो या उसकी ग़ैर मौजूदगी में। सबसे बेहतरीन मोमिन भाई कौन हैं ?

इस्लाम चाहता है कि लोगों में क़बूल करने का माद्दा पैदा हो इस लिये ऐब और कमियों के सुनने को तोहफ़े देने की तरह कहा गया है। जो लोग अख़लाक़ी सिफ़ात रखते हैं और लोगों को उनके ऐबों की तरफ़ मुजवज्जे करते हैं, उन्हें बेहतरीन भाईयों से ताबीर किया गया है।

इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं: خير اخواني من اهدي الي عيوبي

मेरे बेहतरीन ईमानी भाई वह हैं जो मुझे मेरी कमियों और बुराईयों का तोहफ़ा दें।

हज़रत इमाम मूसा काज़िम अलैहिस्सलाम से नक़्ल हुआ है कि आपने अपने कुछ दोस्तों से फ़रमाया एक शख़्स को आपने तौबीख़ की और कहा उससे कह दो:

ان الله اذا ارد بعبد خيرا اذا عوتب قبل अल्लाह जब अपने बंदों पर लुत्फ़ व करम करता है तो जब कोई उसे उसकी कमियों की तरफ़ तवज्जो दिलाता है तो वह उसे क़बूल कर लेता है।

इस बहस के आख़िर में इस नुक्ते की तरफ़ भी तवज्जो देनी चाहिये कि इंसानों की हिदायत व रहनुमाई एक ऐसा अमल है जिसकी बराबरी कोई भी अमल नही कर सकता।

سمعت ابا عبد الله (ع) يقول عليك بالنصح لله في خلقه فلن تلقاه بعمل افضل منه

मैंने हज़रत इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम से सुना कि आप फ़रमा रहे थे: जहाँ तक हो सके लोगों की हिदायत व रहनुमाई की कोशिश करते रहो, क्योंकि अल्लाह के नज़दीक इससे ज़्यादा बेहतर कोई अमल नही है।

इस हदीस में जिस ज़रीफ़ व दक़ीक़ नुक्ते की तरफ़ इशारा किया गया है वह यह है कि लोगों की हिदायत और नसीहत हर तरह की शख़्सी और नफ़सानी ग़रज़

से ख़ाली होनी चाहिये ताकि इसकी अहमियत के अलावा लोगों के दिलों पर भी उसका असर हो और वह उन्हे बदल सके।

एतेमाद व सबाते क़दम

كانهم بنين مرصوص वह लोग सीसा पिलाई हुई दिवार की तरह हैं।

सूरः ए सफ़ आयत न. ५

नहजुल बलाग़ा में हज़रत अली अलैहिस्लाम का यह क़ौल नक़्ल हुआ हैं-

يوم لک و يوم عليک एक रोज़ तुम्हारे हक़ में और दूसरा तुम्हारे ख़िलाफ़ है। इस से मालूम होता है कि ज़िन्दगी हमेशा ख़ुशगवार या एक ही हालत पर नही रहती, बल्कि ज़िन्दगी भी दिन रात की तरह रौशन व तारीक होती रहती है। यह कभी खुश गवार होती है, तो कभी पुर दर्द बन जाती है ! कुछ लोग ख़ुशो खुर्रम रहते हैं तो कुछ लोग रोते बिलखते जिन्दगी बसर करते हैं। इन बातों से मालूम होता है कि ज़िन्दगी में हमेशा नशेब व फ़राज़ आते रहते हैं।

लिहाज़ा समाजी ज़िन्दगी के लिए रुही ताक़त की ज़रूरत होती है ताकि उसकी मदद से मुश्किलों व दुशवारियों के सामने हमें आँख़े न झुकानी पड़े और मायूस होने व हार मानने के बजाए, हम साबित क़दम रहकर उनका मुक़ाबेला करें और एक एक करके तमाम मुशकिलों का ख़ात्मा कर सकें।

यक़ीनन साबित क़दम रहने की आदत की बुनियाद घर के माहौल में रखी जाती है और माँ बाप अपने बच्चों में एतेमादे नफ़्स व सबाते क़दम पैदा करने के लिए माहौल बनाते हैं।

हमारा अक़ीदा है कि तमाम अच्छे इंसानों की तरक़्क़ी व बलंदी की इब्तेदा और तमाम बुरे लोगों की पस्ती की शुरुवात उनके घर के माहौल से होती है और वह उन कामों को घर से ही शुरू करते है।

दूसरे लफ़्ज़ों में यह कहा जा सकता है कि किसी भी इंसान की तरक़्क़ी व तनज़्ज़ुली उसकी ज़िन्दगी के माहौल से अलग नही हो सकती।

पेड़ चाहे जितना भी मज़बूत क्यों न हो उसकी यह ताक़त उसकी जड़ से जुदा नही हो सकती। क्योंकि ज़मीन की ताक़त ही इस पेड़ को मज़बूती अता करती हैं।

लिहाज़ा घर के तरबियती माहौल की ज़िम्मेदारी है कि वह बच्चों के अन्दर सबाते क़दम का जज़बा पैदा करें। देहाती समाज में रहने वाले बच्चों में एतेमात और सबाते क़दमी ज़्यादा पाई जाती हैं। क्यों कि उस समाज में लड़कियाँ और लड़के बचपन से ही अपने माँ बाप के साथ सख़्त और मेहनत के काम करना सीख जाते हैं। उन्हीं कामों की वजह से उनके अन्दर धीरे - धीरे सबाते क़दमी का जज़बा परवान चढ़ता जाता है। शहरों में रहने वाले मालदार घरों के अक्सर बच्चों में हिम्मत व तख़लीक़ कम पाई जाती है, क्योंकि वह अमली तौर पर मुश्किलों का सामना कम करते हैं। इस तरह के जवान ख़्वाब व ख़्याल में ज़िन्दगी गुज़ारते हैं और ज़िन्दगी की सच्चाई से बहुत कम वाक़िफ़ होते हैं। माँ बाप को चाहिए कि अपने बच्चों को धीरे धीरे ज़िन्दगी की सच्चाईयों से आगाह करायें और उन्हें ज़िन्दगी की हक़ीक़त यानी ग़रीबी व फ़क़ीरी और दूसरे तमाम मसाइल के बारे में भी बतायें। क्योंकि इस तरह के बच्चे जब समाजी ज़िन्दगी में क़दम रखते हैं तो सबाते क़दम के साथ मुशकिलों का सामना करते हैं और एक एक करके तमाम मुशकिलों से निजात हासिल कर लेते हैं।

जो एतेमाद, मेहनत और कोशिश के ज़रिये हासिल होता है, वह किसी दूसरी चीज़ से हासिल नही होता। ख़ुदा वंदे आलम ने इंसान को पैदा करने के बाद उसे

उसके कामों में आज़ाद छोड़ कर उसकी पूरी शख़्सीयत को उनकी मेहनत व कोशिश से वाबस्ता कर दिया है।

لیس للانسان الا ما سعی इंसान के लिये कुछ नही है, मगर सिर्फ़ उसकी कोशिश व मेहनत की वजह से। लेकिन एक अहम नुक्ता यह है कि कभी ऐसा भी हो सकता है कि बच्चों की मेहनत व कोशिश के बावजूद उनके काम में कोई ख़ामी रह जाये। ऐसी सूरत में वह वालदैन अक़्लमंद समझे जाते हैं जो अपनी औलाद के मुस्तक़बिल की ख़ातिर इन ख़ामियों को मामूली व छोटा समझते हुए उन्हे नज़र अंदाज़ कर देते हैं और उनकी हिम्मत बढ़ाते हुए उनके अंदर जुरअत और कुछ करने के हौसले को ज़िन्दा रखते हैं।

गुनाहगार वालिदैन

बहुत से घराने ऐसे होते हैं जो अपनी जिहालत व नादानी की वजह से अपने बच्चों की बर्बादी के असबाब ख़ुद फ़राहम करते हैं। कुछ वालिदैन ऐसे भी होते हैं जो अपने बच्चों के शर्माने, झिझकने, हिचकिचाने, कम बोलने, तन्हा रहने, बच्चों के साथ न ख़ेलने वगैरा को फ़रग्र की बात समझते हैं और उनको बहुत बाअदब बच्चों की शक्ल पेश करते हैं, जबकि यह काम उनकी शख़्सियतों की कमज़ोरीयों को और बढ़ा देता हैं। वह इस बात से बेख़बर होते हैं कि शर्माने और झिझकने

वाले लोग नार्मल नही होते, क्योंकि शर्माने व घबराने वाले लोग आम इंसानों वाली आदतों से महरूम होते हैं। वह लोग यह सोचते हैं कि हम लोगों से दूर रह कर ख़ुद को एक अज़ीम इंसान की शक्ल में पहचनवा सकते हैं जबकि हक़ीक़त में उनके इस झूटे चेहरे के पीछे उनका कमज़ोर वुजूद होता है जो उन्हे इस बात पर उकसाता है।

हमें यह बात हमेशा याद रखनी चाहिये कि सही व सालिम बच्चे वह हैं जो अपना दिफ़ाअ करने की सलाहियत रखते हों और अगर उन पर ज़्यादतियाँ की जायें तो वह उनके आगें न झुकें और मन्तक़ी ग़ौरो फ़िक्र के साथ उन ज़्यादतियों का मुक़ाबला करें।

सालिम बच्चे वही हैं जो अपनी गुफ़तगू के ज़रिये अपने एहसास व अफ़कार को बयान कर सकें। यह बात भी याद रखनी चाहिये कि वही लोग समाजी ज़िन्दगी में नाकाम होते हैं जिनकी रूह कमज़ोर और बीमार होती है, इसलिये कि बहादुर व ताकतवर इंसान हर तरह की मुश्किल से जम कर मुक़ाबला करते हैं और कामयाब होते हैं। जंगे जमल में हज़रत अली (अ) ने अपने फ़रज़न्द मुहम्मदे हनफ़िया से इस तरह फ़रमाया:

تزول الجبال و لا تزول पहाड़ अपनी जगह छोड़ दें मगर तुम अपनी जगह से मत हिलना। यह हज़रत अली (अ) की तरफ़ से तरबीयत का एक नमूना है। यानी यह बाप की तरफ़ से अपने बेटे की वह तरबियत है, जिसे हम तमाम मुसलमानों को नमूना ए अमल बनाना चाहिए ताकि अपने बच्चों की तरबीयत भी इसी तरह कर सकें।

तारीख़ में है कि जब तैमूर लंग ने अपने दुश्मनों से शिकस्त खा कर एक वीराने में पनाह ली तो उसने वहाँ यह मंज़र देखा कि एक चयूँटी गेंहू के एक दाने को अपने बिल तक पहुचाने की कोशिश कर रही है, मगर जैसे ही वह उस तक पहुचती है, दाना नीचे जमीन पर गिर जाता है। तैमूर कहता है कि मैने देखा कि ६५वी बार वह कीड़ा अपने मक़सद में कामयाब हुआ और उसने उस दाने को घोसलें में पहुचाँया। तैमूर कहता है कि इस चीज़ ने मेरी आँखे खोल दीं और मैं शर्मीदा होकर पुख़्ता इरादे के साथ फिर से उठ खड़ा हुआ और अपने दुश्मनों के ख़िलाफ़ जंग की और आख़िरकार उन्हे हरा कर ही दम लिया।

सब्र व तहम्मुल

رَبَّنَا أَفْرِغْ عَلَيْنَا صَبْرًا पालने वाले हमें सब्र अता फ़रमा।

सूरः ए बक़रा आयत २५०

ख़ुदावंदे आलम ने क़ुरआने मजीद में इस नुक्ते की दो बार तकरार की है कि ان مع العسر یسری आराम व सुकून दुशवारी व सख़्ती के साथ है। दक़ीक़ मुतालए से मालूम होता है कि निज़ामे ज़िन्दगी बुनियादी तौर पर इसी वाक़ेईयत पर चल रहा है। लिहाज़ा हर शख़्स चाहे वह मामूली सलाहियत वाला हो या ग़ैर मामूली सलाहियत वाला, अगर वह अपने लिए कामयाबी के रास्ते खोलना चाहता है और अपने वुजूद से फ़ायदा उठाना चाहता है तो उसे चाहिये कि निज़ामे ख़िलक़त की हक़ीक़त को समझते हुए अपने कामों में सब्र व इस्तेक़ामत से काम ले और हक़ीक़त बीनी व तदबीर से ख़ुद को आरास्ता करे।

बड़े काम, कभी भी चन्द लम्हों में पूरे नही होते, बल्कि उनकी प्लानिंग व नक़्क़ाशी में वक़्त और ताक़त सर्फ़ करने के अलावा सब्र व इस्तेक़ामत की भी ज़रूरत होती है। क्योंकि इंसान मुश्किलों व सख़्तियों से गुज़ार कर ही कामयाबी हासिल करता है।

इसमें कोई शक व शुब्हा नही है कि कुछ लोग ज़िन्दगी की राह में कामयाब हो जाते हैं और कुछ नाकाम रह जाते हैं। बुनियादी तौर पर कामयाब व नाकाम लोगों के दरमियान मुमकिन है बहुत से फ़र्क़ पाये जाते हों और उनकी कामयाबी व नाकामी की बहुतसी इल्लतें हो मगर कामयाबियों का एक अहम सबब, सख़्तियों और परेशानियों का सब्र व इस्तेक़ामत के साथ सामना करना है।

मामूली से ग़ौरो फ़िक्र से यह बात वाज़ेह हो जाती है कि अगर इस दुनिया के निज़ाम में सख़्तियाँ व मुश्किलें न होती तो इंसानों की सलाहियतें हरगिज़ ज़ाहिर न हो पातीं और यह सलाहियतें सिर्फ़ क़ुव्वत की हद तक ही महदूद रह जाती अमली न हो पातीं।

देहाती नौजवानों में ख़ुदकुशी का वुजूद नही है। क्योंकि बचपन से ही उनकी ज़िन्दगी ऐसे माहौल में गुज़रती है कि वह मुश्किलों के आदी हो जाते हैं। लड़कियों को दूर से पानी भर कर लाना पड़ता है, लड़के जानवरों को चराने के लिए जंगलों ले जाते हैं। वह माँ बाप की ख़िदमत के लिये खेतों और बाग़ों में अपना पसीना बहाते हैं। लेकिन चूँकि शहरी नौजवान ऐशो व आराम की ज़िन्दगी में पलते बढ़ते है, लिहाज़ा जब किसी मुश्किल में दोचार होते हैं तो ज़िन्दगी से तंग आकर ख़ुदकुशी कर लेते हैं।

इससे मालूम होता है कि इंसान सख़्तियों और दुशवारी का जितना ज़्यादा सामना करता है उसकी रुहानी व जिस्मानी ताक़त उतनी ही ज़्यादा परवरिश पाती है।

हम सभी ने टेलीवीज़न पर रिलीज़ होने वाली फ़िल्मों में देखा हैं कि अस्कीमों (बर्फ़िले इलाक़ो में रहने वाले लोग) में मायूसी व नाउम्मीदी नही पाई जाती। बल्कि उनका ख़ुश व ख़ुर्रम व खिला हुआ चेहरा, ज़िन्दगी की तमाम मुश्किलों का दन्दान शिकन जवाब हैं। क्या आप जानते हैं कि उनकी इस ख़ुशी की क्या वजह है ? इसकी वजह यह है चूँकि उनकी ज़िन्दगी में दूसरी तमाम जगहों से ज़्यादा मुश्किलें है लिहाज़ा उनमें मुशकिलों से टकराने की ताक़त भी दूसरों से बहुत ज़्यादा होती है। हालाँकि मुश्किलों का मुक़ाबला करने की ताक़त हर इंसान को अता की गयी है और हर इंसान की ज़िम्मेदारी है कि मुश्किलों के मुक़ाबले के लिये ख़ुद को तैयार रखे और मुशकिलों के वक़्त उस क़ुव्वत व ताक़त को इस्तेमाल में लाये जो ख़ुदावंदे आलम ने हर इंसान के वुजूद में वदीयत की है और उसके ज़रिये मुशकिलों का मुक़ाबला करके कामयाबी हासिल करे।

मुश्किलें इंसान को सँवारती हैं

आज, जिस इंसान ने अपने लिए ऐशो आराम के तमाम साज़ो सामान मुहिय्या कर लिए हैं, वह उसी इंसान की नस्ल से है जो शुरु में गुफ़ाओ और जंगलों में ज़िन्दगी बसर करता था और जिसको चारों तरफ़ मुशकिलें ही मुशकिलें थीं। उन्हीं दुशवारियों व मुश्किलों ने उसकी सलाहियतों को निखारा और उसको सोचने समझने पर मजबूर किया जिससे यह तमाम उलूम और टेक्नालाजी को वुजूद में आईं। इससे यह साबित होता है कि सख़्तियाँ और दुशवारियाँ इंसानों को सवाँरती हैं।

अल्लाह के पैगम्बर जो मुक़द्दस व बल्न्द मक़सद लेकर आये थे, उन्हें उस हदफ़ तक पहुँचने के लिये तमाम इंसानों से ज़्यादा मुशकिलों का सामना करना पड़ा और इन्ही मुशकिलों ने उन्हे रूही व अख़लाक़ी एतेबार से बहुत मज़बूत बना दिया था लिहाज़ा वह सख़्तियों में मायूसी व नाउम्मीदी का शिकार नही हुए और सब्र व इस्तेक़ामत के साथ तमाम दुशवारियों में कामयाब हुए।

मौजूदा ज़माने में हम सब ने अपनी आँख़ों से देखा कि अमेरिकी ज़ालिमों ने वेतनाम के लोगों पर किस क़दर ज़ुल्म व सितम ढाये, औरतों और बच्चों को

कितनी बेरहमी व बेदर्दी से मौत के घाट उतारा, असहले और हर तरह के जंगी साज़ व सामान से लैस होने के बावजूद अमेरिकियों को एक मसले की वजह से हार का मुँह देखना पड़ा और वह था उस मज़लूम क़ौम का सब्र व इस्तेक़ामत।

नहजुल बलाग़ा में नक़्ल हुआ है कि हज़रत अली (अ) ने ख़ुद को उन दरख़्तों की मानिंद कहा है जो बयाबान में रुश्द पाते हैं और बाग़बानों की देख भाल से महरूम रहते हैं लेकिन बहुत मज़बूत होते हैं, वह सख्त आँधियों और तूफ़ानों का सामना करते हैं लिहाज़ा जड़ से नही उखड़ते, जबकि शहर व देहात के नाज़ परवरदा दरख़्त हल्की सी हवा में जड़ से उखड़ जाते हैं और उनकी ज़िन्दगी का ख़ात्मा हो जाता है।

الا و ان الشجرة البرية اصلب عودا و الروائع الخضرة ارق جلودا

जान लो कि जंगली दरख़्तों को चूँकि सख़्ती व पानी की क़िल्लत की आदत कर लेते है इस लिये उनकी लकड़ियाँ बहुत सख़्त और उनकी आग के शोले ज़्यादा भड़कने वाले और जलाने वाले होते हैं।

इस नुक्ते पर भी तवज्जो देनी चाहिये कि कामयाबी माद्दी चीज़ों और असलहे के बल बूते पर नही मिलती बल्कि वह क़ौम जंग जीतती है जिसमें सब्र व इस्तेक़ामत का जज़्बा होता है।

रोसो कहता है: अगर बच्चे को कामयाबी व कामरानी तक पहुँचाना हो तो उसे छोटी मोटी मुश्किलों में उलझाना चाहिये ताकि इससे उसकी तरबियत हो और वह ताक़तवर बन जायें।

हम सब जानते है कि जब तक लोहा भट्टी में नही डाला जाता उसकी कोई क़द्र व क़ीमत नही होती। इसी तरह जब तक इंसान मुशकिलों और दुशवारीयों में नही पड़ता किसी लायक़ नही बन पाता।

हज़रत अली(अ) फ़रमाते हैं:

بالتعب الشديد تدرك الدراجات الرفيعة و الراحة الدائمة दुशवारियों और मुशकिलों को बर्दाश्त करने के बाद इंसान दाइमी सुकून और बुलंद मंज़िलों को पा लेता है।

एक दूसरी जगह पर हज़रत(अ) इस तरह फ़रमाते:

المومن نفسه اصلب من الصلد मर्दे मोमिन का नफ़्स ख़ारदार पत्थर से ज़्यादा सख़्त होता है।

हज़रत अली(अ) फ़रमाते है:

اذا فارغ الصبر الامور فسدت الامور जब भी कामों से सब्र व इस्तेक़ामत ख़त्म हो जायेगें, ज़िन्दगी के सारे काम तबाही व बर्रबादी की तरफ़ चले जायेगें।

समाजी ज़िन्दगी में सब्र

इल्मी, इज्तेमाई व रूहानी कामयाबियों को हासिल करने के लिये सब को सब्र व तहम्मुल की ज़रूरत होती है। तमाम कामयाबियाँ एक दिन में ही हासिल नही की जा सकती, बल्कि बरसों तक खूने दिल बहाते हुए सब्र व तहम्मुल के साथ मुशिकिलों से निपटते हुए आगे बढ़ना पड़ता है। जो लोग दुनिया परस्त थे वह मुद्दतों खूने दिल बहा कर मुताद्दिद दरों पर सलामी देकर ख़ुद को कही पहुचाँ सके हैं।

इल्मी कामलात के मैदान में भी पहले उम्र का एक बड़ा हिस्सा इल्म हासिल करने में सर्फ़ करना पड़ता है, तब इंसान इल्म की बलन्द मंज़िलों तक पहुँच पाता है। इसी तरह मअनवी मंज़िलों के लिये भी बिला शुब्हा एक मुद्दत तक अपने नफ़्स को मारने और तहम्मुल व बुर्दबारी की ज़रूरत होती है, तब कहीं जाकर अल्लाह की तौफ़ीक़ के नतीजे में मअनवी मक़ामात हासिल हो पाते हैं।

घरवालों की अहम ज़िम्मेदारी

वालेदैन को कोशिश करनी चाहिये कि शुरु से ही अपने बच्चों को अमली तौर पर मुश्किलों से आशना करायें, अलबत्ता इस बात का ख़्याल रखें कि यह काम तदरीजन व धीरे धीरे होना चाहिये। माँ बाप को इस बात पर भी तवज्जो देनी चाहिये कि यह रविश बच्चों से प्यार मुहब्बत के मुतनाफ़ी नही है। सर्वे से यह बात सामने आयी है कि जो वालेदैन अपने बच्चों को बहुत ज़्यादा लाड प्यार की वजह से मेहनत नही करने देते, वह अपने बच्चों की तरबियत में बहुत बड़ी ख़्यानत करते है। क्योंकि लाड प्यार में पलने वाले बच्चे जब अपने घरवालो की मुहब्बत भरी आग़ोश से जुदा हो कर समाजी ज़िन्दगी में क़दम रखते हैं तो उस वक़्त उन्हे मालूम होता है कि उनकी तरबीयत में क्या कमी रह गयी है और वह उस वक़्त समझते हैं कि -

शुक्रिये व क़द्रदानी का जज़्बा

لئن شكرتم لأزيدنكم अगर तुम ने शुक्र अदा किया तो मैं यक़ीनन नेमतों को ज़्यादा कर दूँगा।

सूरः ए इब्राहीम आयत न. १२७

इंसान को समाजी एतेबार से एक दूसरे की मदद की ज़रूरत होती है। अगर कुल की सूरत में समाज मौजूद है तो उसके जुज़ की शक्ल में फ़र्द का वुजूद भी ज़रूरी है लिहाज़ा जुज़ (फ़र्द) अपने वुजूद व ज़िन्दगी बसर करने में कुल (समाज) का मोहताज है। समाजी ऐतबार से भी समाज का हर फ़र्द दिगर तमाम अफ़राद का मोहताज होता है। इस बिना पर तमाम मेयारों को नज़र अंदाज़ करते हुए यह कहा जासकता है कि एक इंसान ज़िन्दगी बसर करने के लिए समाज के दूसरे तमाम अफ़राद का मोहताज होता है और चूँकि वह उनका मोहताज है इस लिए उसे उनके वुजूद और ख़िदमात का शुक्रिया अदा करना चाहिए। मिसाल के तौर पर तमाम लोगों को उस्तादों की ज़रूरत होती है, सबको ड्राईवरों की ज़रूरत होती है और इसी तरह तमाम लोगों को समाज के मुख़तलिफ़ गिरोहों की ज़रूरतें पड़ती हैं, इस हिसाब से समाज के तमाम अफ़राद को काम करने वाले तमाम ही गिरोहों का शुक्रिया अदा करना चाहिए।

हर घराने को उस्ताद का शुक्रिया अदा करना चाहिए कि उसने उनके बच्चों को तालीम दी और उनकी तरबीयत की। सफ़ाई करने वाले का शुक्रिया अदा करना चाहिए कि अगर वह न होता तो सब जगह गंदगी के ढेर नज़र आते और इसी तरह हिफ़ाज़त करने और पहरा देने वालों का भी शुक्रिया अदा करना चाहिए कि अगर वह न होते तो अम्नियत न होती और कोई आराम की नींद सोने की हिम्मत न करता और सारे लोग ख़ुद ही पहरा देते। मामूली से ग़ौर व फ़िक्र के बाद यह बात सामने आती है कि हर फ़र्द की ज़िन्दगी समाज के दूसरे अफ़राद की बेदरेग़ मेहनतों का नतीजा है। मुमकिन है यहाँ पर कोई एतेराज़ करे कि हर फ़र्द को चाहिए कि वह अपनी ज़िम्मेदारी को निभाये, ताकि उसकी ज़िम्मेदारी की वजह से दूसरे अफ़राद भी अपनी ज़िम्मेदारी निभायें। इस तरह एक दूसरे का शुक्रिया अदा करने और एहसान मंद होने की कोई ज़रूरत नही है। उनके जवाब में कहा जा सकता है कि हाँ आपकी बात सही है कि

तरक़्क़ी याफ़्ता समाज में शुक्रिया अदा करने और एहसानमंद होने की कोई ज़रूरत नही है और हर शख़्स के लिए ज़रूरी है कि वह अपनी ज़िम्मेदारियों को बेहतरीन तरीक़े से निभाये और किसी से कोई तवक़्क़ो न रखे। लेकिन वह समाज जिसके अफ़राद में यह शायस्तगी न पाई जाती हो और जिन्हें जन्नत में जाने और जहन्नम से बचने के लिए, शौक़, ख़ौफ़ और धमकियों की ज़रूरत पेश आती

हो, उनसे यह तवक़्क़ो कैसे की जा सकती है कि वह दुनियवी ज़िन्दगी में अपनी ज़िम्मेदारियों को बेहतरीन तरह से अँजाम दे सकते हैं। इस बुनियाद पर यह कहा जा सकता है कि ऐसे समाज में लोगों के अमल पर उनका शुक्रिया अदा करना ही इस बात का सबब बनेगा कि काम करने वाले अपने कामों को ज़्यादा मेहनत व लगन से अंजाम दें और अपने कामों से फ़रार न करें। मिसाल के तौर पर एक ड्राईवर जिसकी ज़िम्मेदारी हमें एक जगह से दूसरी जगह पहुँचाना है अगर हम अपनी मंज़िल पर उतरते वक़्त उसका शुक्रिया अदा कर दें तो हमारा यह शुक्रिये का एक जुमला, उसकी पूरे दिन की थकन को दूर करने का सबब बनेगा और वह अपने इस फ़रीज़े को और ज़्यादा खुशी के साथ अंजाम देगा।

तरक़्क़ी याफ़्ता व मोहज़्ज़ब समाजों में छोटी छोटी और मामूली मामूली बातों पर शुक्रिया अदा करने का रिवाज है, लेकिन पिछड़े समाज़ों में मन्ज़र इसके बिल्कुल उलटा है, वहाँ शुक्रिया अदा करने के बजाए हमेशा एतेराज़ किये जाते हैं। उनकी मंतिक़ यही होती है कि उसकी ज़िम्मेदारी है लिहाज़ा उसे अदा करना चाहिए। अगर ड्राईवर है तो ड्राईवरी करनी चाहिए, मुहाफ़िज़ है तो उसे पहरा देना चाहिए और अगर सफ़ाई करने वाला है तो उसे सफ़ाई करना चाहिए।

ज़ाहिर है कि जो लोग समाज़ी एतेबार से बहुत ऊँची सतह पर नही है अगर उन्हें उनके कामों पर शौक़ न दिलाया जाये या उनकी हौसला अफ़ज़ाई न की जाये तो इससे उनके ऊपर बुरा असर पड़ेगा।

मिसाल : अगर घरेलू ज़िन्दगी में मर्द, अपनी बीवी की बेदरेग़ ज़हमतों के बदले में एक बार भी उसका शुक्रिया अदा न करे, या इसके बरअक्स अगर बीवी, शौहर की बेशुमार ज़हमतों के बदले एक बार भी ज़बान पर शुक्रिये के अलफ़ाज़ न लाये तो ऐसे घर में कुछ मुद्दत के बाद अगर लडाई झगड़ा न भी हुआ तो मुहब्बत व ख़ुलूस यक़ीनी तौर रुख़सत हो जायेगा, हर तरफ़ बेरौनक़ी नज़र आयेगी और ऐसी फ़ज़ा में सिर्फ़ घुटन की ज़िन्दगी ही बाक़ी रह जायेगी।

हमें यह बात कभी नही भूलनी चाहिए कि हर अज़ीम व तख़लीकी काम का आमिल, शौक़ व रग़बत पैदा करना होता है। जबकि रोज़ाना की ज़िम्मेदारों को निभाने में यह ख़ल्लाक़ियत नज़र नही आती ।

राग़िब ने अपनी किताब मुफ़रेदात में शुक्र के मअना इस तरह बयान किये है: .

الشكر تصور النعمة و اظهارها शुक्र का मतलब यह है कि इंसान पहले मरहले में नेमत को समझ कर उसकी तारीफ़ करे फिर दूसरे मरहले में उसका इज़हार करे।

इसके बाद राग़िब लिखते हैं कि शुक्र की तीन क़िस्में हैं:

الشكر علي ثلثة اضرب شكر القلب و هو تصور النعمة و شكر باللسان و هو ثناء علي النعم وشكر لساير الجوارح و هو مكافات النعمة بقدر استحقاقها .

शुक्र तीन तरह का होता है १- शुक्रे क़ल्बी, यानी नेमत को जानना और उसे पहचानना है। २- शुक्रे जबानी, यानी नेमत अता करने वाले की तारीफ़ करना है। ३- शुक्र जवारेही, यानी इंसान का अपनी क़ुदरत के मुताबिक़ उसका शुक्र अदा करना है। दूसरे लफ़्ज़ों में शुक्र का तीसरा मरहला यह है कि हमारे आज़ा व जवारेह उस नेमत से जो फ़ायदा उठाते हैं, उसके बदले में जिस क़दर हो सके उसका शुक्र अदा करें। जैसे किसी फल का शुक्र यह है कि उसे खालिया जाये न यह कि उसे ज़ाये कर दिया जाये, क्योकि यह नेमत इंसान के लिए पैदा की गई है।

हमने सुना है कि कुछ मुहज़्ज़ब मुल्कों में जब लोग आपस में मिलते हैं तो हमेशा एक दूसरे का शुक्रिया अदा करते हैं। हम यह दावा नही करना चाहते कि

ऐसे मुल्कों में हर तरह की तहज़ीब पाई जाती है, मुमकिन है उन्ही मुल्कों में दूसरी तरह की बुराईयाँ भी पायी जाती हों लेकिन उनका यह अमल यानी शुक्रिया अदा करना, जो वहाँ के समाज में आम है, एक अच्छा अमल है। इससे समाज में रहने वाले अफ़राद के अदब, अख़लाक़, ख़ुलूस और मुहब्बत में इज़ाफ़ा होता है।

इस्लाम की तालीमात में एक बाब शुक्रिये का भी पाया जाता है, जिसमें यह बताया जाता है कि तमाम बन्दों की ज़िम्मेदारी है कि वह अल्लाह से मिलने वाली नेमतों के बदले उसका शुक्र अदा करें।

ज़ाहिर है कि जैसे जैसे लोगों में शुक्रिये का जज़्बा बढ़ता जायेगा वैसे वैसे उनके पास अल्लाह की नेमतों में इज़ाफ़ा होता जायेगा।

शुक्रिये के बाब में जो एक अहम व दिलचस्प नुक्ता बयान किया गया है वह यह है कि वली ए नेअमत ख़ुदा है और तमाम नेमतें उसी से हासिल होती हैं, लेकिन चूँकि दुनिया के निज़ाम की बुनियाद इल्लत व असबाब पर मुनहसिर है, इस लिए हर नेमत किसी इंसान के ज़रीये ही दूसरे इंसान तक पहुँचेगी।

हम इंसानों का फ़रीज़ा यह है कि नेमतों को अल्लाह की इनायत समझे और उसका शुक्र अदा करे, लेकिन चूँकि अल्लाह की इस नेअमत व रहमत के पहुँचने में इंसान वसीला बना है, लिहाज़ा उसका भी शुक्रिया अदा करना चाहिए लेकिन सिर्फ़ इसी हद तक कि वह अल्लाह की नेअमत पहुँचाने में वसीला बना है।

हमें इस नुक्ते पर भी तवज्जो देनी चाहिए कि उस इंसान का शुक्रिया इस तरह न किया जाये कि अल्लाह के बजाए वही वली ए नेमत समझा जाये। हमें इस बात पर भी तवज्जो देनी चाहिए कि इस तरह के मसाइल में गफ़लत के तहत यह दावा नही करना चाहिए कि यह तो अल्लाह का रहमों करम था कि यह नेमत हमें नसीब हुई। बल्कि हमें उस इंसान का शुक्रिया इन अलफ़ाज़ में अदा करना चाहिए कि अल्लाह की यह नेमत आपके हाथो से हम तक पहुँची है लिहाज़ा अल्लाह के फ़ैज़ का वसीला बनने की वजह से हम आपका शुक्रिया अदा करते हैं।

इस्लामी रिवायातों में मिलता है कि जिसने मख़लूक़ का शुक्र अदा नही किया, उसने ख़ालिक़ का भी शुक्र अदा नही किया।

من لم يشكرالمخلوق لم يشكر الخالق

एक हदीस में पैग़म्बरे अकरम (स) से इस तरह नक़्ल हुआ है: क़ियामत के दिन एक शख़्स को अल्लाह के सामने पेश किया जायेगा, कुछ देर बाद अल्लाह का हुक्म होगा कि इसे जहन्नम में डाल दिया जाये। वह शख़्स इस हुक्म के पर कहेगा: ख़ुदाया मैं तो तेरे क़ुरआन की तिलावत कर के उस पर अमल करता था, उसके जवाब में कहा जायेगा: सही है कि तू क़ुरआन पढ़ा करता था मगर तूने उन नेअमतों का शुक्र अदा नही किया जो मैने तुझ पर नाज़िल की थीं। वह जवाब में वह कहेगा: ख़ुदाया मैने तो तेरी तमाम नेमतों का शुक्र अदा किया है, तब ख़िताब होगा:

الا انك لم تشكر من اجريت لك نعمتي علي يديه و قد اليت علي نفسي ان لا اقبل شكر عبد بنعمة انعمتها عليه حتي يشكر من ساقها من خلقي اليه

हाँ मगर तूने उनका शुक्र अदा नही किया जिनके ज़रिये से मेरी नेमतें तुझ तक पहुचती थीं।

और मैने अपने लिए लाज़िम कर लिया है कि उस इंसान के शुक्र को क़बूल नही करूगा जो मेरी नेअमत पहुँचाने वाले इंसान का शुक्र अदा न करे।

माँ बाप को चाहिए कि घर में अपने बच्चो के अन्दर तदरीजन शुक्रिये का जज़्बा पैदा करें और उन्हे यह समझायें कि अगर कोई तुम्हारे लिए किसी काम को

अंजाम दो तो अगरचे नेमत देने वाला ख़ुदा है, लेकिन चूँकि वह ज़रिया बना है, इसलिए उसका भी शुक्र अदा करना चाहिए। अगर बच्चों में बचपन से ही यह जज़्बा पैदा हो जाये और बड़े उसकी ताईद करें और दूसरी तरफ़ वह ख़ुद अपने घर में बुज़ुर्गों को एक दूसरे का शुक्रिया अदा करते देखें तो वह मुस्तक़िबल में समाजी ज़िन्दगी में शुक्रिया अदा करने वाले अफ़राद बनेगे।

नज़र अंदाज़ करना

عظموا اقداركم بالتغافل عن الدني من الامور

बेअहमीयत चीज़ों से लापरवाही बरतते हुए उन्हे नज़र अंदाज़ करके अपनी शख़्सियत की हिफ़ाज़त करें।

क्यों नज़र अंदाज़ करना चाहिये?

समाजी ज़िन्दगी और घरेलू ज़िन्दगी में वाज़ेह फ़र्क़ होता है। घर के माहौल में घर के अफ़राद दो, तीन या कभी इससे ज़्यादा होते हैं। वाज़ेह है कि चार या पाँच

लोगों का एक साथ ज़िन्दगी बसर करना बिला शुब्हा सहल और आसान है, लेकिन समाज में ज़िन्दगी बसर करना सख़्त है। क्योंकि समाज में मुख़तलिफ़ तबियतों, मुख़तलिफ़ सलीक़ों, मुख़तलिफ़ और मुख़तलिफ़ फ़िक्र व नज़र के लोग मौजूद होते हैं और यह बात वाज़ेह है कि फ़र्दी ज़िन्दगी मुख़तलिफ़ गिरोह व मुखतलिफ़ फ़िक्र व नज़र वाले अफ़राद के साथ बहुत सख़्त और दुशवार है। मिसाल के तौर पर जिस समाज में आलिम, जाहिल, उसूली, मंतिक़ी, लापरवाह, जज़बाती, बूढ़े, जवान व बच्चे सभी मौजूद हो उसमें फ़र्दी ज़िन्दगी बसर करना आसान काम नही है। बल्कि वहाँ पर ऐसी क़ुदरत व ताक़त की ज़रूरत है जिससे इंसान सबको राज़ी रख सके और किसी भी गिरोह से टकराव न हो।

समाज में ज़िन्दगी बसर करना एक मुअल्लिम के पढ़ाने की तरह है जो एक ऐसी बड़ी क्लास को पढ़ा रहा हो जिसमें बच्चे, नौजवान और बुज़ुर्ग मुख़तलिफ़ सलाहियतों के लोग हों, ऐसी क्लास में पढ़ाना निहायत सख़्त व दुशवार काम है।

समाजी ज़िन्दगी की कामयाबी के लिये हमें अपना दिल बड़ा करने, सबका ऐहतेराम करने, के साथ कुछ जगहों पर चश्मपोशी व ग़फ़लत से काम लेना पड़ेगा ताकि मुख़तलिफ़ लोगों के साथ ज़िन्दगी बसर की जा सके। दूसरे लफ़्ज़ों में हमारे पास इतना होंसला होना चाहिए कि हमसे बूढ़े मर्द व औरत नाराज़ न हों, हम

बच्चों की ग़लतियों पर सब्र व ज़ब्त कर सकें ताकि वह भी राज़ी व ख़ुश रहें। अगर समाज मे सिर्फ़ ऐसे लोगों से मिलें जो सिर्फ़ एक गिरोह के साथ रह सकते हों तो यक़ीनन ऐसे लोग समाज के मुख़तलिफ़ तबक़ों के अफ़राद के साथ ज़िन्दगी बसर नही कर सकते हैं।

मोमिन की एक ख़ूबी यह है कि वह जाहिल व नादान लोगों के साथ नेक बर्ताव करता है और उनके ग़ैर उसूली और नाज़ेबा सुलूक पर नाराज़ व ग़ुस्सा नही होता हैं बल्कि बुज़ुर्गवारी का सुबूत देता है।

अल्लाह तअला क़ुरआने मजीद में इरशाद फ़रमाता है:

وَعِبَادُ الرَّحْمَنِ الَّذِينَ يَمْشُونَ عَلَى الْأَرْضِ هَوْنًا وَإِذَا خَاطَبَهُمُ الْجَاهِلُونَ قَالُوا سَلَامًا

(सूरह फ़ुरक़ान आयत ६४)

और अल्लाह के नेक बंदें वह हैं जो ज़मीन पर नर्म रफ़तारी से चलते हैं और जब कोई जाहिल उनके साथ ग़ैर मुनासिब सुलूक करता है तो वह करामत व बुज़ुर्गवारी से नज़र अंदाज़ करते हुए गुज़र जाते हैं।

और जो लोग तग़ाफ़ुल नही करते और हस्सास तबीयत के मालिक हैं वह समाजी ज़िन्दगी में अक्सर मुश्किलों से दोचार होते रहते हैं और अपनी शख़सियत व एहतेराम से हाथ धो बैठते है।

नज़र अंदाज़ करने का यह मतलब नही है कि इंसान अपने अतराफ़ से ग़ाफ़िल हो जाये और उसे यही मालूम न हो कि उसके चारों तरफ़ क्या हो रहा है, बल्कि मोमिन अपनी फ़िरासत व होशियारी से तमाम हालात से बख़ूबी ख़बरदार होता है और अपनी शख़्सियत व वक़ार की ख़ातिर ऐसा बरताव करता है कि लोग यह समझते है कि उसे कुछ ख़बर नही है। ऐसे काम को तग़ाफ़ुल व नज़र अंदाज़ करना कहते हैं।

अक़्लमंद शौहर व बीवी को यह कोशिश करनी चाहिये कि अपनी मुशतरक ज़िन्दगी में एक दूसरे की कमियों और ख़ामियों को नज़र अंदाज़ करते हुए आपस में इज़्ज़त व एहतेराम को बानाये रखें। वाज़ेह है कि अगर ऐसा नही करेगें तो उनके दरमियान तू तू मैं मैं शुरू हो जायेगी जिससे दोनों का एहतेराम जाता रहेगा।

हर इंसान को चाहिए कि वह अपनी समाजी ज़िन्दगी में भी इस तरह की रफ़तार की रिआयत करे ताकि वह अपनी ईज़्ज़त को भी बचा सके और समाजी ज़िन्दगी को अपना सके।

ज़िमनन इस बात पर भी तवज्जो देनी चाहिये कि यह लापरवाई बरतना व नज़र अंदाज करना ग़ैरे मुस्तक़ीम तरबियत की एक क़िस्म है। मिसाल के तौर पर ्गर कोई शागिर्द अपने उस्ताद से झूट बोलता है तो असली उस्ताद वही है जो अपने शागिर्द के झूट को ज़ाहिर न करे बल्कि उसे इस तरह से समझाये कि जैसे उसने झूट न बोला हो। उस्ताद ऐसा करके अपने शागिर्द को बेईज़्ज़ती से बचा सकता है और उसकी शख़्सियत के एहतेराम को हिफ़्ज़ करके उसे यह समझा सकता है कि एक शख़्सियत रखने वाला इंसान झूटा नही हो सकता।

वेक्टर होगो ने अपनी सबसे बेहतरीन कहानी यानी "बेसहारा लोग" में इस तरबियती तरीक़े की तरफ़ इशारा करता है और उसने ईसाई पादरी के नज़र अंदाज करने के तरीक़े को बहुत अच्छे पैराये में बयान किया है।

वह इस काम को अंजाम देकर जान वान जान के दिल पर तरबियती की इतनी गहरी छाप छोड़ता है कि वह बदबख़्त व बदक़िस्मत इँसान जो बीस साल जेल में

पड़ा था एक दम बदल जाता है। यह इंसान की ग़लतियों को नज़र अंदाज़ करने का नतीजा है।

हदीसों और रिवायतों का दिक़्क़त से मुतालआ करने से यह बात समझ में आती है कि ख़ुदा वंदे आलम ने भी अपने बंदों की ग़लतियों और गुनाहों के सिलसिले में यही तरीक़ा अपनाया है। वह उनके गुनाहों को नज़र अंदाज़ करते हुए माफ़ कर देता है। और यह चश्म पोशी इस हद तक है कि इंसान यह गुमान करते है कि गोया उन्होने कोई गुनाह ही अंजाम नही दिया है।

ज़ाहिर है कि अफ़ व ग़लतियों को नज़र अन्दाज़ करने के इस जज़्बे को घर के तरबीयती माहौल में भी जगह देनी चाहिए। माँ बाप को अमली तौर पर अपने बच्चों के साथ ऐसा सुलूक करना चाहिये कि बच्चे ुनसे यह आदत सीखें यानी वह यह महसूस करें कि बुज़र्ग उनकी ग़लतियों को नज़र अंदाज़ करके अपनी बुज़ुर्गी का सुबूत देते हुए टाल जाते हैं। यह बात रोज़े रौशन की तरह आशकार है कि जब बच्चे घर के माहौल में इस तरह के रवय्ये को देखेगें तो वह मुस्तक़बिल में दूसरों के साथ ऐसा ही बर्ताव रवा रखने की कोशिश करेंगे।

यह बात भी वाज़ेह है कि माँ बाप अपने बच्चों के साथ जो सुलूक करते हैं उनके बच्चे उसे महसूस करते हैं और उसे क़बूल कर के अपनी अख़लाक़ी आदतों का हिस्सा बना लेते हैं।

हमें यह नही भूलना चाहिये कि हमारे बच्चों के लिए ज़रूरी है कि वह तरबियत के उसूल व क़वानीन को घर व मदरसे के माहौल में ही देखें और सीख़ें। ज़ाहिर है कि वह यह सब देखने और समझने के बाद उसे क़बूल करके अपनी आदतों का हिस्सा बना लेगें। हज़रत अली (अ) नहजुल बलाग़ा में एक दूसरी जगह पर इस तरह फ़रमाते हैं:

العقل نصفه احتمال و نصفه تغافل

यानी अक़्लमंद इंसान वह है जो अपने आधे वुजूद से लोगों की बुराीयों व मुशकिलों को बर्दाश्त करे और दूसरे आधे वुजूद से अतराफ़ में होने वाले कामों को नज़र अंदाज़ कर दे।

ख़ुलास ए कलाम यह है कि समाजी ज़िन्दगी तग़ाफ़ुल व चश्मपोशी चाहती है। लिहाज़ा हमें यह कोशिश करनी चाहिये कि हम जज़बाती होने व लड़ाई झगड़े करने के बजाए सुल्ह व सफ़ाई और मेल जोल वाली आदत अपनायें।

ख़न्दा पेशानी

जिस दुनिया में हम ज़िन्दगी बसर कर रहे हैं वह जज़्ब व कशिश की दुनिया है। ताजिर, अपने सामान को इस तरह शक्ल व सूरत देने की कोशिश करते हैं कि वह दूसरों की नज़र को जज़्ब कर सके। सनअती मुल्कों में गाड़ियों के माडल में जो हर रोज़ तबदीलियाँ आती रहती हैं, उसकी वजह सिर्फ़ उनकी जज़्ज़ाबियत में इज़ाफ़ा करना है ताकि वह दूसरों के मुक़ाबेले ख़रीदारों की नजरों को अपनी तरफ़ ज़्यादा जज़्ब कर सके। बहर हाल तिजारत की सनअत में नफ़्सियाती मसाइल ने अपनी जगह अच्छी तरह बनाली है।

समाजी ज़िन्दगी में जो चीज़ तमाम इंसानों के पास होनी चाहिए और जिससे हर इंसान को फ़ायदा उठाना चाहिए वह खुश मिज़ाजी है। यानी इंसान का चेहरा खिला हो और उसके होंटों पर मुस्कुराहट हो। अख़लाक़, दीन और नफ़सियात की नज़र से यह एक ऐसी हक़ीक़त है जिससे इन्कार नही किया जा सकता।

आइने ज़िन्दगी नामी किताब के मुसन्निफ़ ने इंसानों की कामयाबी के जिन अवामिल को बयान करने की कोशिश की है उनमें से एक आमिल इंसान का खुश मिज़ाज होना भी है। मुखतलिफ़ मिज़ाजों के मुताले से यह बात मालूम होती है कि

ख़ुश मिज़ाजी हर इंसान को पसंद है और यह सामने वाले इंसान पर असर अन्दाज़ होती है।

जो अफ़राद खुश मज़ाज होते हैं, वह समाजी ज़िन्दगी में दूसरों को मुक़ाबिल ज़्यादा कामयाब है।

ख़ुश मज़ाज अफ़राद के मुक़ाबेले में ऐसे लोग भी हैं जो हमेशा नाक भौं चढ़ाये रहते हैं और दूसरों से बहुत ही लापरवाई के साथ मिलते हैं। ऐसे मिज़ाज के अफ़राद अगर अपने काम में सच्चे हों तब भी लोग उनसे मिलना जुलना पसन्द नही करते और इसकी सबसे अहम वजह उनका बद मिज़ाज होना है।

इस्लाम की नज़र में खुश मिज़ाजी का मक़ाम

इस्लाम एक दीने अख़लाक़ व ज़िन्दगी है। इस्लाम वह दीन है जिसके पैगम्बर ने फ़रमाया कि मुझे इस लिए मबऊस किया गया ताकि मकारिमे अखलाक़ को पूरा करूँ। इस्लाम गोशा नशीनी का दीन नही है, बल्कि इंसानों को समाजी ज़िन्दगी की तालीम देने वाला दीन है। लिहाज़ा इस्लामी समाज का एक अख़लाक़ी क़ानून यह है कि समाजी ज़िन्दगी में हर इंसान की ज़िम्मेदारी है कि वह दूसरे के

साथ खुश मिज़ाजी के साथ पेश आये और मुस्कुराते हुए दूसरों का इस्तक़बाल करे।

हज़रत अली अलैहिस्सलाम, मुत्तक़ीन के सिफ़ात बयान करते हुए फ़रमाते हैं कि मुत्तक़ी का रंज व ग़म उसके अन्दर छुपा होता है, लेकिन उसकी खुशी के आसार उसके चेहरे पर होते हैं। بشره في وجهه و حزنه في قلبه यानी उसकी ख़ुशियाँ उसके चेहरे पर और उसका ग़म उसके सीने में होता है।

हज़रत इमाम मुहम्मद बाक़िर अलैहिस्सलाम से रिवायत है कि एक शख़्स ने पैग़म्बरे इस्लाम (स.) की ख़िदम में हाज़िर होकर अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह के नबी! मुझे कुछ नसीहत फ़रमाइये।

हज़रत ने जवाब दिया कि अपने भाईयों से खुश के साथ मुस्कुराते हुए मुलाक़ात करो।

عن ابي جعفر(ع) قال اتي رسول الله (ص) رجل فقال يا رسول الله اوصني فكان فيما اوصاه ان قال الق اخاك بوجه منبسط

नफ़्सियाती एतेबार से यह बात वाज़ेह है कि खुश मिज़ाजी दिलों को अपनी तरफ़ जज़्ब करती है। खुश मिज़ाज अफ़राद से इंसान मिलने का इश्तियाक़ रखते हैं। लिहाज़ा पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने उस इंसान को नसीहत में इसी हस्सास व दक़ीक़ नक्ते की तरफ़ इशारा किया और फ़रमाया कि हमेशा अपने भाईयों से खन्दा पेशानी के साथ मुलाक़ात करो।

हज़रत इमाम जाफ़र सादिक़ अलैहिस्सलाम से एक रिवायत इस तरह नक़्ल हुई है

قال ثلاث من اتي الله بواحدة منهن اوجب الله له الجنة الانفاق من اقتار والبشر لجميع العلم و الانصاف من نفسه

“तीन चीज़ें ऐसी हैं कि अगर कोई उनमें से किसी एक के साथ भी अल्लाह की बारगाह में पहुँचेगा तो अल्लाह उस पर जन्नत को वाजिब कर देगा।

पहली चीज़ यह है कि इंसान ग़ुरबत में भी अल्लाह की राह में ख़र्च करे। दूसरे यह कि तमाम इंसानों से खुश मिज़ाजी के साथ मिले और तीसरे यह कि वह इन्साफ़वर हो।”

इस रिवायत से यह बात सामने आती है कि इंसान सिर्फ़ एक मख़सूस गिरोह से ही खुशी ख़ुशी न मिले, बल्कि तमाम अफ़राद के साथ खुशी के साथ मुस्कुराते हुए मिले। यानी जो भी उससे मुलाक़ात करे उसका ख़ुश अख़लाक़ी के साथ मुस्कुरा कर इस्तक़बाल करे।

हज़रत इमाम जाफ़र सादिक़ अलैहिस्सलाम से यह रिवायत नक़्ल हुई है कि

عن ابي عبد الله (ع) قال قلت له ما حد الخلق قال تلين جناحك و تطيب كلامك و تلقي اخاك ببشر حسن

इमाम अलैहिस्सलाम का एक सहाबी कहता है कि मैंने हज़रत इमाम जाफ़र सादिक़ अलैहिस्सलाम से अर्ज़ किया कि ख़ुश अख़लाक़ी का क्या मेयार है ?

इमाम अलैहिस्सलाम ने जवाब दिया कि इनकेसारी से काम लो, अपनी ज़बान को शीरीं बनाओ और अपने भाईयों से खुशी के साथ मिलो।

पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने फ़रमाया कि

قال رسول الله (ص) يا بني عبد المطلب انكم لن تسعوا الناس باموالكم فالقوهم بطلاقة الوجه و حسن البشر

ऐ ! अब्दुल मुत्तलिब की औलाद तुम अपने माल के ज़रिये तमाम इंसानों को राहत नही पहुँचा सकते, लिहाज़ा तुम सबके साथ खिले हुए चाहरे और मुस्कुराहट के मुलाक़ात करो।

खन्दा पेशानी के साथ मिलने में जो एक अहम नुक्ता पोशीदा है वह यह है कि इससे दुशमनी और कीनः ख़त्म होते है और उसकी जगह मुहब्बत पैदा हो जाती है।

इसी लिए पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने फ़रमाया कि حسن البشر يذهب بالسخيمة

यानी खुश मिज़ाजी कीने व दुशमनी को ख़त्म कर देती है।

इस बिना पर माँ बाप की एक अहम ज़िम्मेदारी यह है कि वह अपने बच्चों को खन्दा पेशानी के साथ मिलने जुलने का आदी बनायें।

ज़ाहिर है कि अगर बच्चे को बचपन से ही अहम व मुफ़ीद बातों की तालीम दी जायेगी तो धीरे धीरे उसे उन पर मलका हासिल हो जायेगा और वह उसकी शख़्सियत का जुज़ बन जायेंगी।

माँ बाप को चाहिए कि अपने बच्चों को इन अख़लाक़ी सिफ़ात की तालीम देकर उन्हें समाजी ज़िन्दगी के लिए तैयार करें।

हमें यह नही भूलना चाहिए कि इस सिलसिले में सबसे बेहतरीन तालीम ख़ुद माँ बाप का किरदार व रफ़्तार है, जो बच्चों के लिए नमूना बनता है। यानी माँ बाप को इस बात की कोशिश करनी चाहिए कि वह अपने घर में अमली तौर पर बच्चों को ख़न्दा पेशानी के साथ मिलने की तालीम दें।

इसमें कोई शक व शुब्हा नही है कि जब तक इंसान किसी चीज़ को अमली तौर पर ख़ारिज में नही देखता उसे अपनी ज़िन्दगी का जुज़ नही बनाता।

हुस्ने अख़लाक़

فَبِمَا رَحْمَةٍ مِّنَ اللهِ لِنتَ لَهُمْ وَلَوْ كُنتَ فَظًّا غَلِيظَ الْقَلْبِ لاَنفَضُّواْ مِنْ حَوْلِكَ

सूरः ए आलि इमरान आयतन. १५९ तर्जुमाः -

यह आयत पैग़म्बरे इस्लाम (स.) की कामयाबी का राज़ आपके नम्र मिज़ाज को मानती है। इसी वजह से कहा गया है कि अगर आप सख़्त मिज़ाज होते तो लोग आपके पास से भाग जाते। इस बुनियाद पर यह आयत, समाजी ज़िन्दगी में इंसान की कामयाबी का राज़, हुस्ने अख़लाक़ को मानती है।

बेशक पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के पास बहुत से मोजज़े व ग़ैबी इमदाद थी, लोकिन जिस चीज़ ने समाजी ज़िन्दगी में आपकी कामयाबी के रास्ते को हमवार किया वह आपका हुस्ने अख़लाक़ ही था। बस अगर कोई इंसान समाज के दूसरों अफ़राद को अपनी तरफ़ मुतवज्जे करके उनकी नज़रो का मरकज़ बनना चाहता हो तो उसे हुस्ने अख़लाक़ से काम लेना चाहिए। इसी के साथ यह हक़ीक़त भी वाज़ेह करते चलें कि पैग़म्बरे इस्लाम (स.) तमाम ख़ुदा दाद कमालात, किताब व

मोजज़ात के बावजूद, अगर सख़्त मिज़ाज होते तो लोग उनके पास से भाग जाते। इससे यह बात भी आशकार हो जाती है कि अगर कोई इंसान इल्म व अक़्ल की तमाम फ़ज़ीलतों से आरास्ता हो लेकिन हुस्ने अख़लाक़ से मुज़य्यन न हो तो वह समाजी ज़िन्दगी में कामयाब नही हो सकता, क्योंकि समाज ऐसे इंसान को क़बूल नही करता। लिहाज़ा मानना पड़ेगा कि समाजी ज़िन्दगी में मक़बूल होने का राज़ हुस्ने अख़लाक़ ही है। एक मक़ाम पर पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने इस बात की वज़ाहत करते हुए फ़रमाया कि तुम अपने माल व दौलत के ज़रिये हरगिज़ लोगों के दिलों को अपनी तरफ़ मायल नही कर सकते, लेकिन हुस्ने अख़लाक़ के ज़रिये उनको अपनी तरफ़ मुतवज्जे कर सकते हो।

इस से यह साबित होता है कि लोगों के दिलों को न इल्मी फ़ज़ाइल से जीता जा सकता है और न मालो दौलत के ज़रिये, बल्कि सिर्फ़ अच्छा अख़लाक़ है जो लोगों को अपनी तरफ़ जज़्ब करता है। तमाम नबियों का आख़िरी हदफ़ और ख़सूसन पैग़म्बरे इस्लाम (स.) का बुनियादी मक़सद हुस्ने अख़लाक़ था। क्योंकि आपने ख़ुद फ़रमाया है :

بعثت لاتمم مكارم الاخلاق मैं इस लिए मबऊस किया गया हूँ ताकि अख़लाक़ को कमाल तक पहुँचाऊँ। इससे साबित होता है कि पैग़म्बरे इस्लाम (स.) का मक़सद सीधे सादे अख़लाक़ी मसाइल नही थे, बल्कि वह इंसानी अख़लाक़ के सबसे बलन्द दर्जों को पूरा करने के लिए तशरीफ़ लाये थे।

नेपोलियन का दावा था कि जंग के मैदान में जिस्मानी ताक़त के मुक़ाबेले में रूहानी ताक़त असर अन्दाज़ होती है यानी रूहानी व मअनवी ताक़त के अमल का मुवाज़ेना जंगी साज़ व सामान से नही हो सकता।

मुख़तलिफ़ क़ौमों पर तहक़ीक़ करने से यह बात सामने आती है कि किसी भी क़ौम की तहज़ीब व ताक़त, उस क़ौम के आदाब व अख़लाक़ से वाबस्ता होती है।

समाजी ज़िन्दगी में हर इंसान अपने शख़्सी फ़ायदों की तरफ़ दौड़ता है और हर इंसान का अपने फ़ायदे की तरफ़ दौड़ना एक फ़ितरी चीज़ है। इसी बिना पर यह तबीई रुजहान हर इंसान में पाया जाता है और अपनी ज़ात से मुब्बत की बिना पर हर इंसान अपनी पूरी ताक़त के साथ अपने नफ़े को तलाश करता है।

इंसान के अन्दर बलन्दी, कमाल व अख़लाक़ का पाया जाना ही इंसानियत है। इस सिफ़त के पैदा होने से इंसान हैवानी तबीअत से बाहर निकलता है और इससे इंसान में बलन्दी पैदा होती है, जो इंसान को समाज में मुनफ़रिद बना देती है। लिहाज़ा अगर हम लोगों के दिलों में अपना ऊँचा मक़ाम बनाना चाहते हैं तो पहले हमें इंसान बनना पड़ेगा और अपने अन्दर ईसार, कुर्बानी व इंसानी ख़िदमत का शौक़ व जज़्बा पैदा करना होगा। इस तरह से लोगों ने हैवानी ज़िन्दगी से आगे क़दम बढ़ा कर इंसानी ज़िन्दगी के आख़िरी कमाल को हासिल किया हैं।

इंसाने हक़ीक़ी की बहुत सी निशानियाँ है लेकिन उनमें से सबसे अहम निशानी उसका अपने मातहत लोगों के साथ बरताव है। अगर वह कोई फौजी अफ़सर है तो अपने सिपाहियों से नरमी के साथ, अगर मोअल्लिम है तो अपने शागिर्दों से मुहब्बत से और अगर अफ़सर है तो अपने साथियों से अद्ल व इन्साफ़ से पेश आता है। हाँ जो दूसरों के साथ प्यार मुहब्बत का बरताव करे, अद्ल व इन्साफ़ से काम ले, क़ुरबानियाँ दे और दूसरों की ग़लतियों को माफ़ और नज़र अन्दाज़ करे तो वह इंसान नमूना बन जायेगा और सबको अपनी तरफ़ जज़्ब करेगा।

हाँ! हुस्ने अख़लाक़ यही है कि इंसान अपनी ज़ात में ख़ुद पसन्दी, जाह तलबी, कीना और हसद जैसे रज़ाइल को न पनपने दे।

समाज़ उन्हीं अफ़राद से मुहब्बत करता है जिनमें ईसार व क़ुरबानी का जज़्बा पाया जाता है। एक मुल्क में एक नदी में बाढ़ आई जिससे उस पर बना पुल टूट गया। फ़कत उसका एक हिस्सा बाक़ी रह गया जिस पर एक ग़रीब फ़क़ीर घराने का ठिकाना था। सबको मालूम था कि यह हिस्सा भी जल्दी ही डूबने वाला है, इस लिए एक मालदार आदमी ने कहा कि जो इस गरीब घराने की जान बचायेगा मैं उसे एक बड़ी रक़म दूंगा। रिआया में से एक सादा लोह इंसान इस काम को अंजाम देने के लिए उठा और उसने एक छूटी सी क़िश्ती दरिया की मौजों के दरमियान डाल दी और बहुत ज़्यादा मेहनत व कोशिश से उस ग़रीब घराने की जान बचाई। जब वह मालदार आदमी उसे रक़म देने लगा तो उसने वह रक़म लेने से इन्कार कर दिया और कहा कि मैंने यह काम पैसों के लिए नही किया, क्योंकि पैसों के लिए अपनी जान को ख़तरों में डालना अक़्लमन्दी नही है, बल्कि मैंने यह

ख़तरनाक काम अपने इंसान दोस्ती और कुरबानी के जज़्बे के तहत अंजाम दिया है।

मैं यह चाहता हूँ कि यह रक़म इसी ग़रीब घराने के हवाले कर दी जाये। उस मालदार इंसान का कहना है कि मैं उस इंसान की रूह की अज़मत के सामने अपने अपको बहुत छोटा महसूस कर रहा था और फ़रावान माल व दौलत के होते हुए अपने आपको हक़ीर समझ रहा था।

कोई भी चीज़ अच्छे अख़लाक़ से ज़्यादा वाजिब नही है, हुस्ने अख़लाक़ उलूम व फ़नून से से ज़्यादा ज़रूरी है। हुस्ने अख़लाक़ कामयाबी व कामरानी का सबसे मोस्सिर आमिल है। किसी भी इंसान की कोई भी बलन्दी हुस्ने अख़लाक़ की बराबरी नही कर सकती।

कस्बे रोज़ी

हदीस

अन अबी उमर, क़ाला : क़ाला रसूलुल्लाहि(स.):लैसा शैउन तुबाइदुकुम मिन्नारि इल्ला व क़द ज़करतुहु लकुम व ला शैउन युक़र्रिबुकुम मिनल जन्नति इल्ला व क़द दलल्तुकुम अलैहि इन्ना रूहल क़ुदुस नफ़सा रवई अन्नहु लन यमूता अब्दुन मिन कुम हत्ता यस्तकमिला रिज़्कहु , फ़अजमिलु फ़ीत्तलबि फ़ला यहमिलन्नाकुम इस्तिबताउ अर्रिज़क़ि अला अन ततलुबु शैयन मिन फ़ज़लिल्लाहि बिमअसियतिहि, फ़इन्नहु लन युनाला मा इन्दलल्लाहि इल्ला बिताअतिहि अला व इन्ना लिकुल्लि अमरा रिज़्क़न हुवा यातिहि ला महालता फ़मन रज़िया बिहि बुरका लहु फ़ीहि व वस्सिअहु व मन लम यरज़ा बिहि लम युबारका लहु फ़ीहि व लम यसअहु, इन्नर रिज़्क़ा लयतलुबु अर्रजुला कमा यतलुबुहु अजलुहु।[१]

तर्जमा

इब्ने उमर से रिवायत है कि पैगम्बर (स.) ने फ़रमाया कि जो चीज़ तुमको जहन्नम की आग से दूर रखेगी वह मैंनें बयान कर दी हैं, और जो चीज़े तुमको जन्नत से नज़दीक करेंगी उनकी भी तशरीह कर दी है और किसी भी चीज़ को

फ़रामोश नही किया है। मेरे ऊपर “वही” नाज़िल हुई है कि कोई भी उस वक़्त तक नही मरता जब तक उसकी रोज़ी पूरी न हो जाये। बस तुम तलबे रोज़ी में एतेदाल की रियाअत करो। ख़ुदा न करे कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी रोज़ी की कुन्दी (कमी और पिछड़ापन) तुमको इस बात पर मजबूर न करदे कि तुम उसको हासिल करने के लिए गुनाह के मुरतकिब हो जाओ। क्योंकि कोई भी अल्लाह की फ़रमा बरदारी के बग़ैर उसके पास मौजूद नेअमतों को हासिल नही सकता। और जानलो कि जिसके किस्मत में जो रोज़ी है वह उसको हर हालत में हासिल होगी। बस जो अपनी रोज़ी पर क़ानेअ होता है उसका रिज़्क पुर बरकत और ज़्यादा हो जाता है। और जो अपनी रोज़ी पर क़ाने और राज़ी नही होता उसके रिज़्क़ मे बरकत और ज़्यादती नही होती। रिज़्क़ उसी तरह इंसान की तलाश में आता है जिस तरह मौत इंसान की तलाश में आती है।

तफ़्सीर

हज़रत रसूले ख़ुदा फ़रमाते हैं कि : मैं तुमको क़ौल और फेअल के ज़रिये हर उस चीज़ से रोकता हूँ जो तुमको जन्नत से दूर करने वाली है। और तुमको हर उस चीज़ का हुक्म देता हूँ जो तुमको जन्नत से करीब और जहन्नम से दूर करने वाली है। इस हदीस का फ़ायदा यह है कि हमको हमेशा इस्लामी अहकाम को जारीयो सारी करने के लिए कोशिश करनी चाहिए । और यह हिसाब हमको अहले

सुन्नत से - जो कि मोतक़िद हैं कि जहाँ पर नस नही है वहाँ पर हुक्म भी नही है - जुदा करता है। इसी दलील से अहले सुन्नत फ़कीहों को यह हक़ देते हैं कि वह क़ानून बनायें क़ियास करें और इस्तेहसान व मसालहे मुरसला को जारी करें। ऐसा मज़हब जो आधा अल्लाह और मासूमीन के हाथ में हो और आधा आम लोगों के हाथों में वह उस मज़हब से बहुत ज़्यादा मुताफ़ावित होगा जो कामिल तौर पर अल्लाह और मासूमीन की तरफ़ से हो। अलबत्ता आयते " अलयौम अकमलतु लकुम दीनाकुम " (आज हमने तुम्हारे दीन को कामिल कर दिया) से भी यही ज़ाहिर होता है। चूँकि दीन अक़ाइद , क़वानीन और अखलाक़ियात के मजमुए का नाम है। हदीस हमको यह नज़रिया देती है कि एक मुजतहिद की हैसियत से इसतम्बात करें न यह कि तशरीअ करे।

यहाँ पर चन्द बातों का ज़िक्र ज़रूरी है।

1- कुछ सुस्त और बेहाल लोग " व मा मिन दाब्बति फ़िल अर्ज़ि इल्ला अला अल्लाहि रिज़्क़ुहा " (ज़मीन पर कोई हरकत करने वाला ऐसा नही है जिसके रिज़्क़ का ज़िम्मा अल्लाह पर न हो।) जैसी ताबीरात और उन रिवायात पर तकिया करते हुए जिनमें रोज़ी को मुक़द्दर और मुऐयन बताया गया है यह सोचते हैं कि

इंसान के लिए ज़रूरी नही है कि वह रोज़ी को तहिय्या करने के लिए बहुत ज़्यादा कोशिश करे। क्योंकि रोज़ी मुक़द्दर है और हर हालत में इंसान को हासिल होगी और कोई भी दहन रोज़ी के बग़ैर नही रहेगा।

इस तरह के नादान लोग दीन को पहचान ने में बहुत ज़्यादा सुस्त और कमज़ोर हैं। ऐसे अफ़राद दुशमन को यह कहने का मौक़ा देते हैं कि मज़हब वह आमिल है जो इक़्तेसादी रकूद, जिन्दगी की मसबत फ़आलियत की ख़मौशी और बहुत सी चीज़ो से महरूमियत को वजूद में लाता है। इस उज़्र के साथ कि अगर फलाँ चीज़ मुझको हासिल नही हुई तो वह हतमन मेरी रोज़ी नही थी। अगर वह मेरी रोज़ी होती तो किसी चूनों चरा के बग़ैर मुझे मिल जाती। इससे इस्तसमारगरान (वह बरबाद करने वाले अफ़राद जो अपने आपको इस्तेअमार यानी आबाद करने वाले कहते हैं) को यह मोक़ा देते हैं कि वह महरूम लोगों को को और ज़्यादा दूहें और उनको ज़िन्दगी के इब्तेदाई वसाइल से भी महरूम कर दें। जबकि क़ुरआन व इस्लामी अहादीस से थोड़ी सी आशनाई भी इस हक़ीक़त को समझ ने के लिए काफ़ी है कि इस्लाम ने इंसान के माद्दी व माअनवी फ़यदे हासिल करने की बुनियाद कोशिश को माना है। यहाँ तक कि नारे की मानिंद क़ुरआन की यह

आयत “लैसा लिल इंसानि इल्ला मा सआ ” भी इंसान की बहरामन्दी के, कोशिश में मुनहसिर होने का ऐलान कर रही है।

इस्लाम के रहबर भी दूसरों को तरबीयत देने के लिए बहुत से मौक़ो पर काम करते थे ; थका देने वाले और सख़्त काम।

गुज़िश्ता पैगम्बरान भी इस क़ानून से मुस्तस्ना नही थे ; वह भेड़ें चराने, कपड़े सीने, जिरह बुनने और खेती करने से भी नही बचते थे। अगर अल्लाह की तरफ़ से रोज़ी की ज़मानत का मफ़हूम घर में बैठना और रोज़ी के उतरने का इंतेज़ार होता तो अम्बिया व आइम्मा - जो कि दीनी मफ़ाहीम को सबसे ज़्यादा जानते हैं - रोज़ी को हासिल करने के लिए यह सब काम क्यों अंजाम देते।

इसी बिना पर हम कहते हैं कि हर इंसान की रोज़ी मुक़द्दर है मगर इस शर्त के साथ कि उसको हासिल करने के लिए कोशिश की जाये। क्योंकि कोशिश शर्त और रोज़ी मशरूत है लिहाज़ा शर्त के बग़ैर मशरूत हासिल नही होगा। यह बिल्कुल इसी तरह है जैसे हम कहते हैं कि "सब के लिए मौत है और हर एक के लिए उम्र की मिक़दार मुऐयन है।" इस जुम्ले का मफ़हूम यह नही है कि अगर इंसान ख़ुदकुशी करे या ज़रर पहुँचाने वाली चीज़ों को खाये तब भी अपनी मुऐयन उम्र तक ज़िन्दा रहेगा। बल्कि इसका मफ़हूम यह है कि यह बदन मुऐयन मुद्दत तक बाक़ी रहने की सलाहियत रखता है इस शर्त के साथ कि इसके हिफ़ाज़त के उसूलों की रिआयत की जाये, खतरे के मवारिद से परहेज़ किया जाये और उन असबाब अपने आपको दूर रखे जिन की वजह से मौत जल्द वाक़ेअ हो जाती है।

अहम बात यह है कि वह आयात व रिवायात जो रोज़ी के मुऐयन होने से मरबूत हैं वह हक़ीक़तन लालची और दुनिया परस्त अफ़राद की फ़िक्रों के ऊपर लगाम है। क्योंकि वह अपनी ज़िन्दगी के वसाइल फ़राहम करने के लिए सब कुच्छ कर गुज़रते है और हर तरह के ज़ुल्मो सितम के मुरतकिब हो जाते हैं, इस गुमान में कि अगर वह ऐसा नही करेंगे तो उनकी ज़िन्दगी के वसाइल फ़रहम नही होंगे।

यह कैसे मुमकिन है कि जब इंसान बड़ा हो जाये और हर तरह के काम करने की ताकत हासिल कर ले तो अल्लाह उसको भूल जाये। क्या अक़्ल और ईमान इस बात की इजाज़त देते हैं कि इंसान ऐसी हालत में यह गुमान करते हुए कि मुमकिन है कि उसकी रोज़ी फ़राहम न हो गुनाह, जुल्मो सितम, दूसरों के हक़ूक़ की पामाली के मैदान में क़दम रखे लालच में आकर मुस्तज़अफ़ीन के हक़ूक़ को ग़स्ब करे ?

अलबत्ता इस बात से इंकार नही किया जा सकता कि बाअज़ रोज़ी ऐसी हैं कि चाहे इंसान उनके लिए कोशिश करे या न करे उसको हासिल हो जाती हैं।

क्या इस बात से इंकार किया जा सकता है कि सूरज की रौशनी हमारी कोशिश के बग़ैर हमारे घर में फैलती है या हवा और बारिश हमारी कोशिश के बग़ैर हमको

हासिल हो जाती है ? क्या इस से इंकार किया जा सकता है कि अक़्ल, होश और इस्तेदाद जो रोज़े अव्वल से हमारे वजूद में ज़ख़ीरा थी हमारी कोशिश से नही है ?

इसका भी इंकार नही किया जा सकता कि कभी कभी ऐसा होता हैं कि इंसान किसी चीज़ को हासिल करने की कोशिश नही करता, मगर इत्तेफ़ाक़ी तौर पर वह उसको हासिल हो जाती है। अगरचे ऐसे हादसात हमारी नज़र में इत्तेफ़ाक़ हैं लेकिन वाक़िअत में और ख़ालिक़ की नज़रों में इस में एक हिसाब है। इसमें कोई शक नही है कि इस तरह की रोज़ी का हिसाब उन रोज़ीयों से जुदा है जो कोशिश के नतीजे में हासिल होती हैं।

लेकिन इस तरह की रोज़ी जिसको को इस्तलाह मे हवा में उड़ के आई हुई,या इस से भी बेहतर ताबीर मे वह रोज़ी जो किसी मेहनत के बग़ैर हमको लुत्फ़े इलाही से हासिल होती हैं,अगर उसकी सही तरह से हिफ़ाज़त न की जाये तो वह हमारे हाथों से निकल जायेंगी या बेअसर हो जायेंगी।

नहजुल बलाग़ा के खत न.३१ में हज़रत अली अलैहिस्सलाम का एक मशहूर क़ौल है जो आपने अपने बेटे इमाम हसन अलैहिस्सलाम को लिखा फरमाते हैं कि " व एलम या बुनय्या इन्ना अर्रिज़क़ा रिज़क़ानि रिज़क़ुन ततलुबाहु व रिज़क़ु यतलुबुका।" "ऐ मेरे बेटे जान लो कि रिज़्क़ की दो क़िस्में हैं एक वह रिज़्क़ जिसको तुम तलाश करते हो और दूसरा वह रिज़्क़ जो तुमको तलाश करता है।" यह क़ौल भी इली हक़ीक़त की तरफ़ इशारा करता है।

बहर हाल बुनियादी नुक्ता यह है कि इस्लाम की तमाम तालीमात हमको यह बताती हैं कि अपनी ज़िन्दगी को बोहतर बनाने के लिये चाहे- वह माद्दी जिन्दगी हो या माअनवी जिन्दगी- हमको बहुत ज़्यादा मेहनत करनी चाहिये। और यह ख़याल करते हुए कि रिज़्क़ तो अल्लाह की तरफ़ से तक़सीम होता ही है, काम न करना ग़लत है। (तफ़सीरे नमूना जिल्द ९/२०)

2- हम सब तालिबे इल्मों को यह सबक़ देती है कि इस बात पर ईमान रख़ना चाहिए कि अल्ला अहले इल्म अफ़राद की रोज़ी का बन्दुबस्त करता है। क्योंकि अगर अहले इल्म अफ़राद माल जमा करने में लग जायेंगे तो दो बड़े ख़तरों से रू बरू होना पड़ेगा।

क- क्योंकि अवाम आलिमों के ख़त (राह) पर चलती है, लिहाज़ा इनको दूसरों के लिए नमूना होना चाहिए । अगर आलिम दुनिया कमाने में लग जायेंगे तो फ़िर यह दूसरों के लिए नमूना नही बन सकते।

ख- वह माल जो आलिमों के अलावा दूसरे लोग जमा करते हैं वह मज़हब को नुक़्सान नही पहुँचाता। लेकिन अगर आलिम हक़ और ना हक़ की तमीज़ किये

बिना मुख़तलिफ़ तरीक़ों से माल जमा करेंगे तो यह मज़हब के लिए नुक़्सान देह होगा। वाक़ेयन यह हसरत का सामान है।

****

[1]बिहारुल अनवार जिल्द ७७/१८५

हर चीज़ के रीशे (जड़) तक पहुँचना चाहिए

मुक़द्दमा

इमामे हादी वह इमाम हैं जिन्होंने बहुत ज़्यादा सख्ती और महासरे में ज़िन्दगी बसर की। हज़रत को शियों से जुदा करके “अस्कर” नामी एक फ़ौजी इलाक़े में रखा गया था जिसकी वजह से आपकी ज़्यादातर अहादीस हमारी तरफ़ मुन्तक़िल न हो सकी।

बनी उमैय्या और बनी अब्बास का एक बड़ा जुर्म यह है कि उन्होंने अहलेबैत (अ.) और लोगों के दरमियान राब्ते को क़तअ कर दिया था। अगर लोगों का राब्ता अहलैबैत (अ.) से क़तअ न होता तो आज हमारे पास इन अज़ीम शख्सियतों के अक़वाल की बहुत सी किताबें मौजूद होती। हमें देखते हैं कि इमामे बाक़िर (अ.) और इमामे सादिक़ (अ.) के दौर में जो थोड़ासा वक़्त मिला उसमें बहुत ज़्यादा इल्मी काम हुआ। लेकिन बाद में यानी इमाम मूसा काज़िम (अ.) के ज़माने से फिर महदूदियत का सामना शुरू हो गया। बहर हाल इमाम हादी (अ.) के कम ही सही कुछ कलमाते क़िसार हम तक पहुँचे हैं और आज मुनसेबत की वजह से आपका एक कलमाए क़िसार नक़्ल कर रहा हूँ।

मतने हदीस–

ख़ैरुम मिनल ख़ैरि फ़ाइलुहु व अजमल मिनल जमीले क़ाइलुहु व अरजिह मिनल इल्मि हामिलुहु व शर्रुम मिनश शर्रि जालिबुहु व अहवलु मिनल हौले राकिबुहु।

तर्जमा--- नेक काम से ज़्यादा अच्छा वह शख़्स है जो नेक काम अन्जाम देता है। और अच्छाई से ज़्यादा अच्छा, अच्छाई का कहने वाला है। और इल्म से बा फ़ज़ीलत आलिम है। और शर्र को अन्जाम देने वाला शर्र से भी बुरा है। और वहशत से ज़्यादा वहशतनाक वहशत फ़ैलाने वाला है।

शरह व तफ़सीर

इमाम (अ.) इन पाचों जुम्लों में बहुत अहम नुकात की तरफ़ इशारा फ़रमा रहे हैं। इन पाँच जुम्लों के क्या मअना हैं जिनमें से तीन जुम्ले नेकी के बारे में और दो जुम्ले शर्र के बारे में हैं। हक़ीक़त यह है कि इमाम (अ.) एक बुनियादी चीज़ की तरफ़ इशारा फ़रमा रहे हैं और वह यह है कि हमेशा हर चीज़ की असली इल्लत तक पहुँचना चाहिए। अगर नेकियों फैलाना, और अच्छाईयों को आम करना चाहते हो तो पहले नेकियों के सरचश्में तक पहुँचो इसी तरह अगर बुराईयों को रोकना चाहते हो तो पहले बुराईयों की जड़ को तलाश करो। नेकी और बदी से ज़्यादा अहम इन दोने के अंजाम देने वाले हैं। समाज में हमेशा एक अहम मुशकिल रही है और अब भी है और वह यह है कि जब लोग किसी बुराई का मुक़ाबला करना चाहतें हैं तो उन में से बहुतसे अफ़राद सिर्फ़ मालूल को देखते हैं मगर उसकी इल्लत को तलाश करने की कोशिश नही करते जिसकी वजह वह कामयाब नही हो पाते। वह एक को ख़त्म करते है दूसरा उसकी जगह पर आ जाता है वह दूसरे को ख़त्म करते हैं तो तीसरा उसकी जगह ले लेता है आख़िर ऐसा क्यों ? ऐसा इस लिए होता है क्योंकि वह इल्लत को छोड़ कर मालूल को तलाश करते हैं। मैं एक सादीसी मिसाल बयान करता हूँ कुछ अफ़राद ऐसे हैं जिनके चेहरों पर मुहासे निकल आते है। या फिर कुछ अफ़राद के बदन की जिल्द पर फुँसियाँ निकल आती है। इस हालत में कुछ लोग मरहम का इस्तेमाल करते हैं ताकि यह मुहासे या

फ़ुँसियाँ ख़्तम हो जायें। मगर कुछ लोग इस हालत में इस बात पर ग़ौर करते हैं कि बदन की जिल्द का ताल्लुक़ बदन के अन्दर के निज़ाम से हैं लिहाज़ा इस इंसान के जिगर में जरूर कोई ख़राबी वाक़ेअ हुई है जिसकी वजह से यह दाने या फ़ुँसिया जिल्द पर ज़ाहिर हुए हैं। बदन की जिल्द एक ऐसा सफह है जो इंसान के जिगर के अमल को ज़ाहिर करता है । मरहम वक़्ती तौर पर आराम करता है लेकिन अगर असली इल्लत ख़त्म न हो तो यह मुहासे या फुँसियाँ दोबारा निकल आते है। इस लिए अगर इंसान वक्ती तौर पर दर्द को ख़त्म करने के लिए किसी मुसक्किन दवा का इस्तेमाल करे तो सही है मगर साथ साथ यह भी चाहिए कि उसकी असली इल्लत को भी जाने।

आज हमारे समाज के सामने दो अहम मनुश्किलें हैं जो हर रोज़ बढ़ती ही जा रही हैं। इनमें से एक मनशियात और दूसरी जिन्सी मुश्किल हैं। मंशियात के इस्तेमाल के सिलसिले में सरहे सिन बहुत नीची हो गई है कम उम्र बच्चे भी मंशियात का इस्तेमाल कर रहे हैं। एक इत्तला के मुताबिक सरहद के एक शहर में १५० ऐसी ख़ावातीन के बारे में पता चला है जो मंशियात का इस्तेमाल करती हैं जबकि यह कहा जाता है कि आम तौर पर ख़वातीन मंशियात की लत में नही पड़ती हैं। लेकिन कुछ असबाब की बिना पर मंशियात की लत बच्चों , जवानों, नौजवानो और ज़नान में भी फैल गई है। इस बुराई से मुक़ाबला करने का एक

तरीक़ा तो यह है कि हम नशा करने वाले अफ़राद को पकड़े और मंशियात के इसमंगलरों को फासी पर लटकाऐं । यह एक तरीक़ा है और इस पर अमल भी होना चाहिए। मगर यह इस मुश्किल का असासी हल नही है। बल्कि हमें यह देखना चाहिए कि मंशियात के इस्तेमाल की असली वजह क्या है, क्या यह बेकारी, बेदीनी या अदबी तालीम के फ़ुक़दान की वजह से है या इसके पीछे उन ग़ैर लोगों का हाथ है जो यह कहते हैं कि अगर यह जवान मंशियात में मुबतला हो जायें तो इस मुल्क में नफ़ूज़ पैदा करने में जो एक अहम चीज़ माने है व ख़त्म हो जायेगी। हमें तारीख़ को नही भूलना चाहिए जब अंग्रेज़ों ने चीन पर तसल्लुत जमाना चाहा तो उन्होंने यह कोशिश की कि चीनियों के दरमियान अफ़ीम को रिवाज दिया जाये। चीनी इस बात को समझ गये और अंग्रेज़ों के खिलाफ़ उठ खड़े हुए। अंग्रेज़ों ने फ़ौजी ताक़त के बल बूते पर अफ़ीम को चीन में वारिद कर दिया और तारीख़ में यह वाकिया जंगे अफ़ीम के नाम से मशहूर हो गया। और उन्होंने चीन में अफ़ीम को दाखिल करके वहाँ के लोगों को अफ़ीम के जाल में फसा दिया और जब किसी मिल्लत के जवान नशे के जाल में फस जाते हैं तो फिर वह मिल्लत दुशमन का सामना नही कर पाती। उसी वक़्त से अंग्रेज़ों ने इस अफ़ीमी जंग की बुनियाद डाली और अब भी दूसरी शक्लों में इससे काम लिया जा रहा है। जब अमरीकियों ने अफ़ग़ानिस्तान पर अपना तसल्लुत जमाया तो यह समझा जा रहा था कि वह अपने नारों के मुताबिक़ मंशियात को जड़ से उख़ाड़ फेकेंगे। जबकि अब

यह कहा जा रहा है कि मंशियात की खेती और ज़्यादा बढ़ गयी है। उनके हक़ूक़े बशर और फ़िसाद व मंशियात से मक़ाबले के तमाम नारे झूटे हैं। वह तो फ़क़त अपने नफ़े और नफ़ूज़ के पीछे हैं चाहे पूरी दुनिया ही क्यों न नाबूद हो जाये।

हर चीज़ के रीशे को तलाश करना चाहिए, इन जवानों को आगाह करना चाहिए, सबसे अहम आमिल मज़हब है एक मज़हबी बच्चा नशा नही करता जब ला मज़हब हो जायेगा तो नशा करेगा।

दूसरा मसला बेकारी है, जब बेकारी फैलती है तो लोग देखते हैं कि इस काम में (मंशियात की खरीदो फ़रोश) आमदनी अच्छी है तो इस काम की तलाश में निकलते हैं। और इस तरह बेकार आदमी इस जाल में फस जाते हैं। बस अगर हम इनकी फ़िक्र न करें , अगर दुशमन के प्रचार की फ़िक्र न करे तो फिर किस तरह मुक़ाबला कर सकते हैं बस हमें चाहिए कि हम इन अल्लतों को तलाश करें। सिर्फ़ मालूल को तलाश करलेना काफ़ी नही है। अल्लत को समझने के लिए जलसे व सैमीनार वग़ैरह मुनअक़िद होने चाहिए ताकि अंदेशा मन्दान बैठ कर कोई राहे हल निकालें। मामूली और सामने के मसाइल के लिए कैसे कैसे सैमीनार मुनअक़िद किये जाते हैं मगर इन अहम मसाइल के हल के लिए किसी सैमीनार का इनेक़ाद नही किया जाता।

दूसरी मुश्किल जो फैलती जा रही है वह जिन्सी रोक थाम का न होना और जवानों का इस जाल में फसना है। क्या मुख्तलिफ़ सड़कों या नज़दीक व दूर के मख़्तलिफ़ मक़ामात पर बसीजी या ग़ैरे बसीजी, सिपाही या ग़ैरे सिपही किसी गिरोह के लोगों को मामूर करने से और लड़कों और लड़कियों के ना मशरू रवाबित को रोकने से मसला ख़त्म हो जायेगा या किसी दूसरी जगह से सर उठायेगा ? यह देखना चाहिए कि इसके रीशे क्या हैं। इसका एक रीशा शादियों का कम होना है। शादीयों चन्द चीज़ों की वजह से मुश्किल हो गई है।

1- तवक़्क़ोआत ज़्यादा हो गई है।

2- तकल्लुफ़ात बढ गये हैं।

3- मेहर की रक़म बढ़ गई है।

4- खर्च बहुत बढ़ गये हैं।

और इसी के साथ साथ तहरीक करने वाले वसाइल का फैलाव । कुछ जवान कहते हैं कि इन हालात में अपने ऊपर कन्ट्रोल करना मुश्किल है। हम उनसे कहते हैं कि तुम चाहते हो कि ग़ैरे अख़लाक़ी फ़िल्में देखें लड़कियों से आँखें लड़ायें, बद अखलाकी सिड़ियाँ देखें, खराब किस्म के रिसाले पढ़े और इसके बावजूद कहते हो कि कन्ट्रोल करना मुश्किल है।तुम पहले तहरीक करने वाले अवामिल को रोको। जब तक तहरीक करने वाले अवामिल सादी शक्ल में मौजूद रहेंगे (जैसे सीडी कि उसमें फ़साद की एक पूरी दुनिया समाई हुई है। या इन्टरनेट कि जिसने फ़साद की तमाम अमवाज को अपने अन्दर जमा कर लिया और दुनिया को अखलाक़ व दूसरी जहतों से ना अमन कर दिया है) एक जवान किस तरह अपने आप पर कन्ट्रोल कर सकता है।

कभी शादी के मौक़ो पर इस तरह के प्रोग्राम किये जाते हैं जो शरियत के खिलाफ़ हैं और नापाक व तहरीक करने वाले है। सैकड़ों जवान शादी के इन्ही प्रोग्रामों में आलूदा हो जाते है। इस लिए कि मर्दो ज़न आते हैं और अपने आपको नुमाया करते है। इस हालत में कि रक़्सो मयुज़िक का ग़लबा होता है। इस तरह ग़ैरे शादी शुदा जवान चाहे वह लड़के हों या लड़किया इन प्रोग्रामों में मुहरिफ़ हो जाते हैं। जवान चाहते हैं इन प्रोग्रामों में शिरकत भी करें और बाद में यह भी कहें कि हमसे अपने आप पर कन्ट्रोल क्यों नही होता ? तहरीक करने वाले अवामिल

को ख़त्म करना चाहिए, शादी के असबाब को आसान करना चाहिए। बस अगर हम यह चाहते हैं कि किसी नतीजे पर पहुँचे, तो असली रीशों के बारे में फ़िक्र करनी चाहिए।

गोश अगर गोश तू नालेह अगर नालेह।

आनचे अलबत्तेह बे जाई नरसद फ़रयाद अस्त।।

और हाल यह है कि न आपको इन बातों के सुनने वाले अफ़राद मिलेंगे और न ही यह बाते कहने वाले अफ़राद।

मरातिबे कमाले ईमान

हदीस-

अन नाफ़े इब्ने उमर,क़ाला "क़ाला रसूलूल्लाहि (स.) "ला यकमलु अब्दुन अलइमाना बिल्लाहि, हत्ता यकूना फ़िहि ख़मसु ख़िसालिन- अत्तवक्कुलु अला

अल्लाहि, व अत्तफ़वीज़ो इला अल्लाहि, व अत्तसलीमु लिअमरिल्लाहि, व अर्रिज़ा बिकज़ाइ अल्लाहि, व अस्सबरो अला बलाइ अल्लाहि, इन्नाहु मन अहब्बा फ़ी अल्लाहि, व अबग़ज़ा फ़ी अल्लाहि, व आता लिल्लाहि, व मनाअ लिल्लाहि, फ़क़द इस्तकमला इलईमाना।" [१]

तर्जमा-

नाफ़े ने इब्ने उमर से नक़्ल किया है कि हज़रत रसूले अकरम (स.) ने फ़रमाया कि अल्लाह पर बन्दें का ईमान उस वक़्त तक कामिल नही होता जब तक उस में पाँच सिफ़ात पैदा न हो जाये- अल्लाह पर तवक्कुल, तमाम कामों को अल्लाह पर छोड़ना, अल्लाह के अम्र को तस्लाम करना, अल्लाह के फ़ैसलों पर राज़ी रहना, अल्लाह की तरफ़ से होने वाली आज़माइश पर सब्र करना, और समझलो कि जो दोस्ती व दुश्मनी, अता व मनाअ, अल्लाह की वजह से करे उसने अपने ईमान को कामिल कर लिया है।

हदीस की शरह-

इस हदीस में पैग़म्बरे इस्लाम (स.) कमाले ईमान के मरातिब को बयान फ़रमा रहे हैं और इल्मे अख़लाक़ के कुछ उलमा ने भी सैरो सलूक के मरहले में तक़रीबन यही बातें बयान की हैं।

1- “अत्तवक्कुलु अला अल्लाह” पहला मरहला तवक्कुल है। हक़ीक़त में मोमिन यह कहता है कि चूँकि उसके इल्म, क़ुदरत और रहमानियत का मुझे इल्म है और मैं उस पर ईमान रखता हूँ, इस लिए अपने कामों में उसको वकील बनाता हूँ।

2- “व अत्तफ़वीज़ु अला अल्लाह ” दूसरा मरहला तफ़वीज़ है। तफ़वीज़ यानी सपुर्द करना या सौंपना। पहले मरहले में मोमिन अपने चलने के लिए अल्लाह की राह को चुनता है। मगर इस दूसरे मरहले में मोमिन हक़ीक़तन अल्लाह से कहता है कि अल्लाह ! तू ख़ुद बेहतर जानता है मैंनें तमाम चीज़े तेरे सपिर्द कर दी हैं।

तवक्कुल और तफ़वीज़ में फ़र्क़

तवक्कुल की मंज़िल में इंसान अपने तमाम फ़ायदों को अहमियत देता है इस लिए अपने नफ़ेअ की तमाम हदों को देखता है। लेकिन तफ़वीज़ की मंज़िल में वह यह तो जानता है कि फ़ायदा है, मगर फ़ायदे की हदों के बारे में नही जानता इस

लिए सब कुछ अल्लाह के सपुर्द कर देता है क्योंकि इस मरहले में उसे अल्लाह पर मुकम्मल ऐतेमाद हासिल हो जाता है।

3- "व अत्तसलीमु लि अम्रि अल्लाह" यह मरहला दूसरे मरहले से बलन्द है। क्योंकि इस मरहले में इंसान फ़ायदे को अहमियत नही देता, तवक्कुल के मरहले में ख़वाहिश (चाहत) मौजूद थी, लेकिन तस्लीम के मरहले में ख़वाहिश नही पायी जाती।

सवाल- अगर इस मरहले में ख़वाहिश नही पायी जाती तो फ़िर दुआ क्यों की जाती है ?

जवाब- तस्लीम का मतलब यह नही है कि हम अल्लाह से दरख़वास्त न करें , बल्कि तस्लीम का मतलब यह है कि अगर हम अल्लाह से कोई चीज़ चाहें और वह न मिले तो, तस्लीम हो जायें।

4- "व अर्रिज़ा बि क़ज़ाइ अल्लाह" रिज़ा का मरहला तीसरे मरहले से भी बलन्द है। तस्लीम के मरहले में इंसान के लिए फ़ायदे हैं मगर इंसान उनसे आँखें बन्द कर लेता है।लेकिन रिज़ा का मरहला वह है जिसमें इंसान के नफ़्स में भी अपनी ख़वाहिशात के लिए ज़िद नही पायी जाती है, और रिज़ा व तस्लीम के बीच यही फ़र्क़ पाया जाता है।

अल्लाह की तरफ़ सैर और उससे क़रीब होने के यह चार मरहले हैं जिनको अलफ़ाज़ में बयान करना आसान है लेकिन इन सब के बीच बहुत लम्बे-लम्बे रास्ते हैं। कभी कभी इन मरहलों को " फ़ना फ़ी अल्लाह" का नाम भी दिया जाता है। फ़ना के दो माअना है जिनमें से एक माक़ूल है और वह फ़ना रिज़ायत के मरहले तक पहुँचना है। और इस मरहले में इंसान अपनी तमाम ख़वाहिशात को अल्लाह की ज़ात के मुक़ाबिल में भूल जाता है, और फ़ना फ़ी अल्लाह के यही सही माअना हैं जो शरीयत और अक़्ल के मुताबिक़ है।

अलबत्ता यह मरहले दुआ और अल्लाह से हाजत तलब करने की नफ़ी नही करते हैं। क्यों कि अगर कोई कमाले ईमान के आख़री मरहले यानी रिज़ा के मरहले तक भी पहुँच जाये, तो भी दुआ का मोहताज है।

इन तमाम मक़ामात को सब्र के ज़रिये हासिल किया जा सकता है। सब्र तमाम नेकियों की जड़ है। अमारुल मोमिनीन (अ.) की वसीयत में पाँचवी फ़रमाइश सब्र के बारे में है जो दूसरी चारो फ़रमाइशों के जारी होने का ज़ामिन है। काफ़ी है कि इंसान इन कमालात तक पहुँचने के लिए कुछ दिनों में अपने आप को तैयार करे, लेकिन इससे अहम मसअला यह है कि इस रास्ते पर बाक़ी रहे। जिन लोगों ने

इल्म, अमल, तक़वा और दूसरे तमाम मरतबों को हासिल किया हैं उनके बारे कहा गया है कि वह सब्र के नतीजे में इस मंज़िल तक पहुँचे हैं।

हदीस के आखिर में जो जुम्ला है वह पहले जुम्लों का मफ़हूम है यानी दोस्ती, दुश्मनी, किसी को कुछ देना या किसी को मना करना सब कुछ अल्लाह के लिए हो, क्योंकि यह सब कमाले ईमान की निशानियाँ है।

ज़िन्दगी के पाँच दर्स और शुबहात को तर्क करना

हदीस-

क़ाला रसूलुल्लाहि सल्लल्लाहु अलैहि व आलिहि वसल्लम “अय्युहा अन्नासु! ला तोतूल हिकमता ग़ैरा अहलिहा फ़तज़लिमुहा, व ला तमनऊहा अहलहा फ़तज़लिमुहुम, व ला तुआक़िबु ज़ालिमन फ़यबतुला फ़ज़लुकुम, व ला तुराऊ अन्नासा फ़यहबता अमलुकुम, व ला तमनऊ अलमौजूदा फ़यक़िल्ला खैरु कुम, अय्युहन नास! इन्नल अशयाआ सलासतुन- अमरुन इस्तबाना रुशदुहु फ़त्तबिऊहु, व

अमरुन इस्तबाना ग़ैय्युहु फ़जतनिबुहु, व अमरुन उख़तुलिफ़ा अलैकुम फ़रुद्दुहु इला अल्लाहि....."[२]

तर्जमा-

हज़रत रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व आलिहि वसल्लम ने फरमाया " ऐ लोगो ! नाअहल अफ़राद को इल्मो हिकमत ना सिख़ाओ क्योंकि यह इल्मो हिकमत पर ज़ुल्म होगा, और अहल अफ़राद को इल्मो हिकमत अता करने से मना न करो क्योंकि यह उन पर ज़ुल्म होगा। सितम करने वाले से (जिसने आपके हक़ को पामाल किया है) बदला न लो क्योंकि इससे आपकी अहमियत ख़त्म हो जायेगी। अपने अमल को ख़ालिस रख़ो और लोगों को खुश करने के लिए कोई काम अंजाम न दो, क्योंकि अगर रिया करोगे तो आपके आमाल हब्त (नष्ट) हो जायेंगे।जो तुमेहारे पास मौजूद है उसमें से अल्लाह की राह में ख़र्च करने से न बचो, क्योंकि अगर उसकी राह में ख़र्च करने से बचोगे तो अल्लाह आपकी ख़ैर को कम कर देगा। ऐ लोगों ! कामों की तीन क़िस्में हैं। कुछ काम ऐसे हैं जिनका रुश्द ज़ाहिर है लिहाज़ा उनको अनजाम दो, कुछ काम ऐसे हैं जिनका बातिल होना ज़ाहिर लिहाज़ा उनसे परहेज़ करो और कुछ काम ऐसे हैं जो तिम्हारी नज़र में

मुशतबेह(जिनमें शुबाह पाया जाता हो) हैं बस उनको समझने के लिए उनको अल्लाह की तरफ़ पलटा दो।"

हदीस की शरह-

यह हदीस दो हिस्सों पर मुश्तमिल है।

हदीस का पहला हिस्सा-

हदीस के पहले हिस्से में पैग़म्बरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व आलिहि वसल्लम पाँच हुक्म बयान फ़रमा रहे हैं।

1- ना अहल लोगों को इल्म अता न करों कियोंकि यह इल्म पर ज़ुल्म होगा।

2- इल्म के अहल लोग़ों को इल्म अता करने से मना न करो क्योंकि यह अहल अफ़राद पर ज़ुल्म होगा। इस ताबीर से यह मालूम होता है कि तालिबे इल्म के लिए कुछ ज़रूरी शर्तें हैं, उनमें से एक शर्त उसकी ज़ाती क़ाबलियत है। क्योंकि जिस शख़्स में क़ाबलियत नही पायी जाती उसके पास इल्म हासिल करने का

सलीक़ा भी नही होता। और इल्म वह चीज़ है जिसके लिए बहुत ज़्यादा सवाब बयान किया गया है।

पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि व आलिहि वसल्लम फ़रमाते हैं कि जो इल्म हासिल करने के क़ाबिल नही है उसको कोई चाज़ न सिख़ाओ क्योंकि अगर उसने कुछ सीख़ लिया ते वह उसको ग़लत कामों में इस्तेमाल करेगा और दुनिया को तबाह कर देगा क्योंकि जाहिल आदमी ना किसी जगह को ख़राब करता है न आबाद। मौजूदा ज़माने में इस्तेमारी हुकुमत के वह सरकरदा अफ़राद जो दुनिया में फ़साद फैला रहे हैं ऐसे ही आलिम हैं।

क़ुरआन में मुख़तलिफ़ ताबीरें पायी जाती हैं जो यह समझाती हैं कि तहज़ीब के बग़ैर इल्म का कोई फ़ायदा नही है। कहीँ इरशाद होता “हुदन लिल मुत्तक़ीन ”[३] यह मुत्तक़ीन के लिए हिदायत है। कहीँ फ़रमाया जाता है “....इन्ना फ़ी ज़ालिका लआयातिन लिक़ौमिन यसमऊन” [४] दिन और रात में उन लोग़ों के लिए निशानियाँ हैं जिनके पास सुनने वाले कान हैं।

इससे मालूम होता है कि हिदायत उन लोगों से मख़सूस है जो इसके लिए पहले से आमादा हों। इसी ताबीर की बिना पर गुज़िश्ता ज़माने में उलमा हर शागिर्द को

अपने दर्स में शिरकत की इजाज़त नही देते थे। बल्कि पहले उसको अख़लाक़ी ऐतबार से परखते थे ताकि यह ज़ाहिर हो जाये कि उसमें किस हद तक तक़वा पाया जाता है।

अलबत्ता किसी को भी अपने इल्म को छुपाना नही चाहिए बल्कि उसे अहल अफ़राद को सिखाना चाहिए और अपने इल्म के ज़रिये लोगों के दुख दर्द को दूर करना चाहिए, चाहे वह दुख दर्द माद्दी हो या मानवी। मानवी दुख दर्द ज़्यादा अहम हैं क्योंकि अल्लाह इस बारे में हिसाब लेगा। रिवायत में मिलता है कि " मा अख़ज़ा अल्लाहु अला अहलिल जहलि अन यतअल्लमु, हत्ता अख़ज़ा अला अहलिल इल्मि अन युअल्लिमु।" [५] अल्लाह ने जाहिलों से यह वादा लेने से पहले कि वह सीख़े, आलिमों से वादा लिया कि वह सिखायें।

इस्लाम में पढ़ना और पढ़ाना दोनो वाजिब हैं। और यह दोनों वाजिब एक दूसरे से जुदा नही हैं क्योंकि आपस में लाज़िम व मलज़ूम हैं।

अगर कोई ज़ालिम आप पर ज़ुल्म करे और आप उससे बदला लें तो आपकी अहमियत ख़त्म हो जायेगी और आप भी उसी जैसे हो जायेंगे। अलबत्ता यह उस

मक़ाम पर है जब ज़ालिम उस माफ़ी से ग़लत फ़ायदा न उठाये, या इस माफ़ी से समाज पर बुरा असर न पड़े।

4- अपने अमल को ख़ालिस और बग़ैर रिया के अंजाम दो। यह काम बहुत मुश्किल है, क्योंकि रिया, अमल के फसाद के सरचश्मों में से फ़क़त एक सर चश्मा है वरना दूसरे आमिल जैसे उज्ब, शहवाते नफ़सानी वग़ैरह भी अमल के फ़साद में दख़ील हैं और अमल को तबाह व बर्बाद कर देते हैं। मसलन कभी मैं इस लिए नमाज़ पढ़ूँ कि खुद अपने आप से राज़ी हो जाऊँ, दूसरे लोगों से कोई मतलब वास्ता नही, ख़ुद यह काम भी अमल के फ़साद की एक किस्म का सबब बनता है। या नमाज़ को आदतन पढ़ूँ या नमाज़े शब को इस लिए पढ़ूँ ताकि दूसरों से अफ़ज़ल हो जाऊ....., यह इल्लतें भी अमल को फ़ासिद करती हैं।

5- अगर कोई तुम से कोई चीज़ माँगे और वह चीज़ आपके पास हो तो देने से मना न करो। क्योंकि अगर देने से मना करोगे तो अल्लाह आपके ख़ैर को कम कर देगा। क्योंकि “कमालुल जूदि बज़लुल मौजूद ” है यानी जो चीज़ मौजूद हो उसको दे देना ही सख़ावत का कमाल है। मेज़बान के पास जो चीज़ मौजूद है अगर मेहमान के सामने न रख़े तो ज़ुल्म है, और इसी तरह अगर मेहमान उससे ज़यादा माँगे जो मेजबान के पास मौजूद है तो वह ज़ालिम है।

हदीस का दूसरा हिस्सा

हदीस के दूसरे हिस्से में कामों की सहगाना तकसीम की तरफ़ इशारा किया गया है।

1- वह काम जिनका सही होना ज़ाहिर है।

2- वह काम जिनका ग़लत होना ज़ाहिर है।

3- वह काम जो मुश्तबेह हैं। यह मुश्तबेह काम भी दो हिस्सों में तक़सीम होते हैं।

अ- शुबहाते मोज़ूय्यह

आ- शुबहाते हुक्मिय्यह

यह हदीस शुबहाते हुक्मिय्यह की तरफ़ इशारा कर रही है। कुछ रिवायतों में " अल्लाह की तरफ़ पलटा दो " की जगह "मुश्तबेह कामों में एहतियात करो क्योंकि मुश्तबिहात मुहर्रेमात का पेश ख़ेमा है।" बयान हुआ है। कुछ लोगों को यह कहने

की आदत होती है कि " कुल्लु मकरूहिन जायज़ुन" यानी हर मकरूह जायज़ है। ऐसे लोगों से कहना चाहिए कि सही है आप जाहरी हुक्म पर अमल कर सकते हैं लेकिन जहाँ पर शुबहा क़तई है अगर वहाँ पर इंसान अपने आपको शुबहात में आलूदा करे तो आहिस्ता आहिस्ता उसके नज़दीक गुनाह की बुराई कम हो जायेगी और वह हराम में मुबतला हो जायेगा। अल्लाह ने जो यह फ़रमाया है कि "शैतानी अक़दाम से डरो" शैतानी क़दम यही मुश्तबेहात हैं। नमाज़े शब पढ़ने वाले मुक़द्दस इंसान को शैतीन एक ख़ास तरीक़े से फ़रेब देता है । वह उससे यह नही कहता कि जाकर शराब पियो, बल्कि पहले यह कहता है कि नमाज़े शब को छोड़ो यह जुज़े वाजिबात नही है। अगर इस बात को क़बूल कर लिया तो आहिस्ता आहिस्ता वाजिब नमाज़ को अव्वले वक़्त पढ़ने के सिलसिले में क़दम बढ़येगा और कहेगा कि अव्वले वक़्त पढ़ना तो नमाज़ की शर्त नही है। और फिर इसी तरह धीरे धीरे उसको अल्लाह से दूर कर देगा।

अगर इंसान वाक़ियन यह चाहता हो कि निशाते रूही और मानवी हालत हासिल करे तो उसे चाहिए कि मुश्तबेह ग़िज़ा,जलसात व बातों से परहेज़ करे और मक़ामे अमल में एहतियात करे।

****

****

[1] बिहार जिल्द ७४/१७७

[2] बिहारुल अनवार जिल्द ७४/१७९

[3] सूरए बक़रह आयत न.२

[4] सूरए यूनुस आयत न. ६७

[5] बिहारुल अनवार जिल्द २/८०

अक़्ल और अख़लाक

पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने फ़रमायाः

احسنكم عقلا احسنكم خلقا तुम में सबसे ज़्यादा अक़्लमंद वह है जो तुम में सबसे ज़्यादा खुश अख़लाक़ है।

अक़्ल व खुश अखलाक़ी और इन दोनों की फ़ज़ीलत के बारे में बहुत सी हदीसें व रिवायतें मुख़्तलिफ़ ताबीरों के साथ मौजूद हैं। इनमें से हर हदीस या रिवायत पर तवज्जो देने से यह बात सामने आती है कि अक़्ल या खुश अख़लाक़ी आलीतरीन कमालात हैं और इनकी बहुत ज़्यादा अहमयत है। यहाँ पर यह सवाल पैदा होता है कि अक़्लमंदी और ख़ुश अख़लाक़ी के दरमियान क्या राब्ता है? क्या यह दावा किया जा सकता है कि इनमें से एक इल्लतऔरदूसरा मालूल है ? अगर ऐसा है तो क्या इनमें से एक के बढ़ने के बाद दूसरे को बढ़ाया जा सकता है ? इससे भी अहम यह कि अक़्ल इंसान को बद अख़लाक़ी से किस तरह रोकती है ?

जो रिवायतें अक़्ल की अहमियत के बारे पाई जाती हैं वह हस्वे ज़ैल हैं।

रावी ने हज़रत इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम की ख़िदमत में अर्ज़ किया :

फ़लाँ इंसान इबादत व दीनदारी के एतेबार से बहुत बलंद मर्तबा है। इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम ने सवाल किया कि वह अक़्ल के एतेबार से कैसा है ? रावी ने जवाब दिया कि मैं नही जानता कि वह अक़्ली लिहाज़ किस मर्तबे पर है। यह सुनकर इमाम अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया :

ان الثواب علی قدر العقل बेशक हर इंसान का सवाब उसकी अक़्ल से मरबूत है। यानी अगर कोई अक़्ली के एतेबार से क़वी होगा तो उसका सवाब ज़्यादा होगा और अगर कोई अक़्ली एतेबार से कमज़ोर होगा तो उसका सवाब कम होगा। इसके बाद इमाम अलैहिस्सलाम ने बनी इस्राईल के उस इंसान की दास्तान बयान फ़रमाई जो एक जज़ीरे में अल्लाह की इबादत में मशग़ूल था। उसने फ़ुरसत के लमहात में एक आह भर कर कहा कि काश मेरे रब के पास जानवर होते तो वह इस जज़ीरे की घास से फ़ायदा उठाता।

हज़रत इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम ने एक दिगर रिवायत में फ़रमाया कि :

من کان عاقلا ختم له بالجنة जो अक़्लमंद होगा वह आख़िरकार जन्नत में जायेगा।

पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने फ़रमाया:

ما قسم الله للعباد شيئاافضل من العقل فنوم العاقل افضل من سهر الجاهل و افطار العاقل افضل من صوم الجاهل

अल्लाह ने अक़ल से ज़्यादा अहम कोई भी चीज़ बंदों में तक़्सीम नही की है, अक़्लमंद का सोना जाहिल के जागने (जाग कर इबादत करने) से बेहतर है और इसी तरह अक़लमंद का खाना पीना जाहिल के रोज़े रखने से बेहतर है।

हज़रत इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम से सवाल किया गया कि अक़्ल क्या है ?

قال قلت له ما العقل قال ما عبد به الرحمان واكتب به الجنان

इमाम अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि अक़्ल वह है जिसके ज़रिये इंसान अल्लाह की इबादत करके ख़ुद को जन्नत में पहुँचायेगा।

इमाम अलैहिस्सलाम ने हुस्ने अख़लाक़ व नर्मी के बारे में पैग़म्बरे इस्लाम (स.) से नक़्ल करते हुए फ़रमाया कि :

ما اصطحب اثنان الا كان اعظمهما اجرا و احبهما الى الله تعالى ارفقهما بصاحبه

जब दो इंसान एक दूसरे के मुसाहिब बनते हैं तो उन दोनों में से अल्लाह का ज़्यादा महबूब और सवाब का ज़्यादा हक़दार वह क़रार पाता है जिसके अन्दर नर्मी ज़्यादा पाई जाती है।

एक दूसरे मक़ाम पर पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने फ़रमाया :

لو كان الرفق خلقا يرى ما كان فيما خلق الله شئ اخسن منه

अगर रिफ़्क़ व मदारा एक जिस्म की सूरत में ज़ाहिर होता तो मख़लूक़ात के दरमियान कोई भी हुस्ने अख़लाक़ से ज़्यादा ख़ूबसूरत न होता।

जो रिवायतें अक़्ल की फ़ज़ीलत के बारे में पाई जाती हैं उनका मुतालेआ करने के बाद और हुस्ने अख़लाक़ की अहमियत पर तवज्जो देने के बाद यह सवाल पैदा होता है कि इन दोनों में से किस की अहमियत ज़्यादा है, अक़ल की या हुस्ने अख़लाक़ की ?

इस सवाल का जवाब तलाश करने के लिए हमें इस नुक्ते पर तवज्जो देनी चाहिए कि मुशकिलों और परेशानियों में घिरे हर इंसान का रुझान यह होता है कि नर्मी और बुर्दुबारी के साथ मसाइल को हल किया जाये। इसमें कोई शक नही है

कि इस काम में एक गिरोह कामयाब है और वह दूसरों के साथ हुस्ने अख़लाक़ से मिलते हैं। लेकिन दूसरा गिरोह उन लोगों का भी है जो इस तरह का बरताव नही कर पाते हैं।

दक़ीक़ मुताले और तहक़ीक़ से यह बात सामने आती हैं कि नर्मी, अक़्ली रुश्द का नतीजा है। जिन लोगों में अक़्ल ज़्यादा पाई जाती है या जिन्होंने अपनी अक़्ल को मुकम्मल तौर पर परवान चढाया है, उनमें खुद को कन्ट्रोल करने की सलाहियत दूसरों से ज़्यादा होती है। इसके बरअक्स जिन लोगों के पास यह ख़ुदा दाद नेमत कम होती है, उनमी नर्मी भी कम पाई जाती है। इस क़ूवत का राज़ यह है कि आक़्लमंद इंसान मसाइल व मुशकिल को तजज़िये व तहलील के ज़रिये हल करने और टकराव से बचते हुए बारूद के ढेर से गुज़रने की कोशिश करते हैं। हक़ीक़त में इंसान की अक़्ल किसी गाड़ी के फ़नर की तरह होती है। जब गाड़ी ऊँची नीची ज़मीन में दाख़िल होती है तो वह फ़नर नर्मी और लचक के साथ अपनी जगह पर हरकत करते हैं और गाड़ी को टूट फ़ूट से महफ़ूज़ रखते हैं। वह तन्हा आमिल जो इंसान को टकराव व हिजान से बचाते हुए उसके तआदुल को बाक़ी रखता है, उसकी अक़्ल है।

पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने फ़रमाया :

احسنکم عقلا احسنکم خلقا यानी जिसमें अक़्ल ज़्यादा होती है, वह अख़लाक़ी एतेबार से दूसरों से ज़्यादा ख़ुश अख़लाक़ होता है।

इस मज़कूरा हदीस पर तवज्जो देने से मालूम होता है कि तबियत की नर्मी बहुत अहम होती है और इसके ज़ेरे साया इंसान दुनिया और आख़ेरत के तमाम कमाल हासिल करता है।

इससे ज़्यादा वज़ाहत यह कि नर्म तबियत के इंसान के सामने जब कोई मुशकिल आती है तो वह अक़्ल के ज़रिये उस पर ग़ौर व फ़िक्र करता है और आपे से बाहर हुए बग़ैर, मसाइल का तजज़िया व हलील करते हुए, ज़ोर ज़बर्दस्ती व तुन्दी के बिना एक के बाद एक मुश्किल को हल करता है, चाहे यह मुशकिलात उसकी घरेलू ज़िन्दगी से मरबूत हों या समाजी व इजतेमाई ज़िन्दगी से।

इस बिना पर अक़्ल हुस्ने अख़लाक़ की बुनियाद है, लिहाज़ा जिसके पास अक़्ल ज़्यादा होगी उसके अन्दर ख़ुश अख़लाक़ी भी कामिल तौर पर पाई जायेगी। इस दावे का सच्चा गवाह पैग़म्बरे इस्लाम (स.) का वजूद मुबारक है, वह अक़्ले कुल थे और अखलाक़ी एतेबार से भी से सबसे आला थे।

वह अखलाक़ी एतेबार से बहुत नर्म तबियत और तमाम अफ़राद के दरमियान सबसे ज़्यादा ख़लीक़ थे। लिहाज़ा खुश अख़लाक़ बनने के लिए सबसे पहले अक़्ल की परवरिश करनी चाहिए ताकि उसके साये में ख़ुश अख़लाक़ बन सके।

दिक़्क़त

يا ويلتى ليتنى لم اتخذ فلانا خليلا

वाय हो मुझ पर, काश फ़लाँ शख़्स को मैंने अपना दोस्त न बनाया होता।

(सूरा ए फ़ुरक़ान आयत न. २८)

इंसान की कुछ परेशानियाँ, उसके अपने इख़्तियार से बाहर होती हैं जैसे सैलाब व तूफ़ान का आना, वबा जैसी बीमारियों का फैलना वग़ैरा । यह ऐसी मुसीबतें हैं कि इंसान ख़ुद को उसूले इजतेमाई से बहुत ज़्यादा आरास्ता करने के बाद भी इनसे नही बच सकता।

लेकिन इंसानी समाज की कुछ परेशानियाँ ऐसी हैं कि जो ख़ुद इंसान के वुजूद से जन्म लेती हैं। मिसाल के तौर पर इंसान कभी - कभी दिक़्क़त किये बग़ैर कुछ ऐसे फ़ैसले लेता है या अमल अंजाम देता है कि उसकी ज़िन्दगी ख़तरे में पड़ जाती है।

ऐसे इत्तेफ़ाक़ बहुत ज़्यादा पेश आते हैं कि इंसान बग़ैर सोचे समझे कोई मुआहेदा कर लेता है, शादी कर लेता है, किसी प्रोग्राम में शरीक हो जाता है, किसा काम को करने पर राज़ी हो जाता है, या किसी ओहदे को क़बूल कर लेता है, इसके नतीजे में जो परेशानियाँ इंसान के सामने आती हैं, उन्हें इंसान खुद ही अपने लिए जन्म देता है।

बतौरे मुसल्लम कहा जा सकता है कि अगर इंसान उनको आसान समझने के बजाये उनमें ग़ौर व ख़ोज़ से काम ले तो परेशानियों में मुबतला न हो।

आल्लाह ने क़ुरआने करीम के सूराए फ़ुरक़ान की आयत न. २८

يا ويلتى ليتنى لم اتخذ فلانا خليلا में दर हक़ीक़त दोस्त के इन्तेख़ाब के बारे में बरती जाने वाली सहल अन्गेज़ी यानी ग़ौर व ख़ोज़ न करने को बयान फ़रमाया है।

इसके बारे में इंसान क़ियामत के दिन समझेगा कि उसने अपने ईमान की दौलत को अपने दोस्त की वजह से किस तरह बर्बाद किया है। उस वक़्त वह आरज़ू करेगा कि काश मैंने उसे अपना दोस्त न बनाया होता।

सहल अंगारी और उसके नुक़्सान

हम में से जब भी कोई अपनी ज़िन्दगी के वरक़ पलटता है तो देखता है कि हमने किसी मौक़े पर जल्दबाज़ी में ग़ौर व ख़ोज़ किये बग़ैर कोई ऐसा काम किया है जिसके बारे में आज तक अफ़सोस है कि काश हमने उसे करने से पहले ग़ौर व ख़ोज़ किया होता ! हमने बाल की खाल निकाली होती और उसके हर पहलु को समझने के बाद उसे अंजाम न दिया होता। ज़िमनन इस बात पर भी तवज्जो देनी चाहिए कि बड़े काम छोटे कामों से वुजूद में आते हैं। समुन्द्र छोटी छोटी नदियों से मिलकर बनता है। अपनी जगह से न हिलने वाले पहाड़ सहरा के छोटे छोटे संगरेज़ों से मिलकर वुजूद में आते हैं।

दुनिया के बड़े बड़े ज़हीन व बेनज़ीर इंसान इन्हीँ छोटे छोटे बच्चों के दरमियान से निकलते हैं। यह इतना बड़ा व बाअज़मत जहान बहुत छोटे छोटे अटमों (ज़र्रों) से मिलकर बना है।

हमें इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि छोटी चीज़, छोटी तो होती है लेकिन उनका अमल बड़ा और बहुत मोहकम होता है।

सिगरेट का एक टोटक या आग की एक चिंगारी एक बहुत बड़े गोदाम या शहर को जलाकर खाक कर सकती है। एक छोटा सा वैरस (जरसूमा) कुछ इंसानों या किसी शहर के तमाम साकिनान की सेहतव सलामती को ख़तरे में डाल सकता है।

मुमकिन है कि किसी बाँध में पैदा होने वाली एक छोटी सी दरार, उस बाँध के किनारे बसे शहर को वीरान करके उसके साकिनान को मौत के घाट उतार सकती है।

एक छोटा सा जुमला या इबारत दो बस्तियों के लोगों को एकदूसरे का जानी दुश्मन बना सकती है। इसी तरह हवस से भरी एक निगाह या मुस्कुराहट इंसान के ईमान की दौलत को बर्बादकर सकती है।

यतीम की आँख से गिरने वाला एक आँसू या दर्दमंद की एक आह या दुआ किसी इंसान या इंसानों को हलाकत से बचा सकती है।

एक लम्हे का तकब्बुर इंसान के मुस्तक़बिल को बर्बाद कर सकता है इसी तरह एक हिक़ारत भरी निगाह या तौहीन आमेज़ इबारत या ज़िल्लत का बर्ताव किसी इंसान, जवान या बच्चे के मुस्तक़बिल को तारीक बना सकता है।

इन मसालों के बयान करने का मक़सद यह है कि हमें इस बात पर तवज्जो देनी चाहिए कि इस आलम का निज़ाम अज़ीम होते हुए भी छोटो पर मुशतमिल है। छोटे आमाल ही बड़े अमल की बुनियाद बनते हैं। लिहाज़ा जिस तरह हमारी अक़्ल की आँखे इस अज़ीम जहान व इसके नक़्शे को देखती हैं, इसी तरह उनमें ज़रीफ़ व दक़ीक़ मसाइल को देखने की भी ताक़त होनी चाहिए।

इस बिना पर इजतेमाई ज़िन्दगी में हमारा जिस चीज़ से मुजहज़ होना ज़रूरी है और जिससे हर इंसान को मुसलेह होना चाहिए वह ग़ौर व ख़ोज़ की आदत है। क्योंकि कि सहलअंगारी या सुस्ती की वजह से इंसान की ज़िन्दगी के बर्बाद होने के इमकान पाये जाते हैं। मशहूर है कि तसादुफ़ात एक लम्हे में रूनुमा होते हैं। मुमकिन है एक लम्हे की अदमे तवज्जो, एक लम्हे की लापरवाही, एक लम्हे का मज़ाक़, एक लम्हे की नींँद, एक लम्हे का ग़ुस्सा, एक लम्हे का ग़रूर इंसान को जेल की सलाख़ों के पीछे पहुँचा दे या उसे मौत की नींँद सुला दे। जो अफ़राद जेल

की चार दीवारी में ज़िन्दगी बसर कर रहे हैं उनमें से अक़्सर लोग एक लम्हे के सताये हुए हैं, एक लम्हे की सहलअंगारी, एक लम्हे की ग़फ़लत या एक लम्हे की लापरवाही।

इस्लाम, मुसलमानों को तमाम कामों में ग़ौर व ख़ोज़ करने की नसीहत करता है। पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने फ़रमाया कि : "वाय हो उस इंसान पर जो बग़ैर सोचे समझे कोई जुमला अपनी ज़बान पर लाये।" इससे यह साबित होता है कि हर मुसलमान की ज़िम्मेदारी है कि वह जो बात भी कहना चाहे, कहने से पहले उस पर ग़ौर करे। दूसरे लफ़्जों में यह कहा जा सकता है कि जिस तरह हम खाने को इतना चबाते हैं कि वह दहन की राल में मिलकर नर्म हो जाता, इसी तरह हमें हर बात कहने से पहले अपने लफ़्ज़ों व जुमलों पर भी ग़ौर करना चाहिए और ऐब व इश्काल से खाली होने की सूरत में उसे कहना चाहिए।

لسان العاقل وراء قلبه و قلب الاسحمق وراء لسانه

अक़्लमंद की ज़बान उसके दिल के पीछे होती है और अहमक़ का दिल उसकी ज़बान के पीछे होता है। इस रिवायत से यह नुक्ता निकलता है कि अक़लमंद इंसान को चाहिए कि कोई बात कहने से पहले उसके बारे में पूरी तरह तहक़ीक़ करनी चाहिए, अगर दिल उस बात को कहने की ताईद करे तो उसे कहना चाहिए।

जब पैग़म्बरे इस्लाम (स.) सअद को दफ़्न कर रहे थे तो मुसलमानों का एक गिरोह इस काम में पैग़म्बर (स.) की मदद कर रहा था। पैग़म्बर (स.) ने एक मुसलमान को अपने काम में सहल अन्गारी करते देखा तो उसे घूरते हुए फ़रमाया मोमिन हर काम को दिक़्क़त व यक़ीन के साथ अंजाम देता है।

ग़ौर व फ़िक्र

و یتفکرون فی خلق السموات والارض ربنا ما خلقت هذا باطلا

और वह आसमान व ज़मीन की ख़िलक़त के बारे में ग़ौर व फ़िक्र करते हैं, परवर दिगार तूने इन्हें बेहूदा ख़ल्क़ नही किया है।

(सूरा ए निसा आयत न. १८९)

घर के माहौल में ज़िन्दगी बसर करना बहुत आसान है, क्योंकि घर में गिने चुने अफ़राद ही होते हैं। इसके अलावा माँ बाप, भाई बहन के साथ रहने में कोई परेशानी भी नही होती है, क्योंकि भाई बहन के दिल ख़ूनी रिश्ते की वजह से एक दूसरे के लिए मुहब्बत की कान होते हैं। इसी तरह माँ बाप के साथ रहना भी

आसान है क्योंकि वह भी अपनी पूरी क़ूवत व ताक़त के साथ अपनी औलाद की देख रेख करते हैं।

लेकिन समाजी ज़िन्दगी एक ला महदूद दरिया है। समाज में मुख़तलिफ़ क़िस्म के अफ़राद व गिरोह पाये जाते हैं, जैसे आलिम व जाहिल, मोमिन व काफ़िर, अक़्लमंद व अहमक़, इन तमाम अफ़राद के साथ रहना आसान काम नही है, इसी लिए समाज में रहने के लिए इंसान को अक़्ल की ज़रूरत होती है। इंसान में लोगों के मिज़ाज को समझने और ग़ौर व फ़िक्र करने की सलाहियत होनी चाहिए ताकि वह मुख़तलिफ़ तबक़ात के दरमियान ज़िन्दगी बसर कर सके। ज़ाहिर है कि दरिया में हर तैराक तैराकी नही कर सकता, बल्कि कुछ गिने चुने जियाले ही होते हैं जो दरिया में तैराकी करते हैं।

समाजी ज़िन्दगी के लिए क़ूवत व ताक़त की ज़रूरत होती है लेकिन इसके लिए सिर्फ़ ज़िस्मानी ताक़त ही काफ़ी नही है बल्कि ग़ौर व फ़िक्र की ताक़त की भी ज़रूरत है।

जो आमिल इंसान को समाजी ़िइन्दगी में कामयाब बना सकता है वह उसकी अक़्ल व फ़िक्र है। पढ़े लिखे आदमी भी अगर अक़्ल व फ़िक्र को छोड़ कर समाज

में ज़िन्दगी बसर करना चाहेंगे तो इसमें कोई शक नही है कि वह नाकाम हो जायेंगे। क्योंकि जज़बाती ज़िन्दगी इंसान की सआदत की ज़ामिन नही बन सकती है इस लिए समाजी ज़िन्दगी के लिए इंसान को ग़ौर व फ़िक्र की ज़रूरत होती है, ताकि उसके ज़रिये इंसान अपने नफ़े नुक़्सान और अंजामे कार को समझ कर किसी काम को करने या न करने का फ़ैसला कर सके। हर काम की ऊँच नीच को समझना और उसके तारीक पहलुओं को रोशन करना ग़ौर व फ़िक्र के ज़रिये ही मुमकिन है।

मिसाल के तौर पर इस्लाम हुक्म देता है कि जब इंसान अपना घर बसाना चाहे तो बीवी के इन्तेख़ाब में जज़्बात से काम न ले बल्कि पहले ग़ौर व फ़िक्र करे कि किस तरह की लड़की से शादी करनी चाहिए, वह किस लड़की को अपनी शरीके हयात बनाना चाहता है, किस लड़की को अपना राज़दार बना रहा है और किस लड़की को अपने बच्चों की तरबियत के लिए मुरब्बी मुऐयन कर रहा है।

हज़रत इमाम ज़ाफ़र सादिक़ अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि:

المراة قلادة فانظر ما تتقلده बीवी गले के हार की मिस्ल है, लिहाज़ा अच्छी तरह देखों व ग़ौर करो कि तुम अपने गले में किस तरह का हार डाल रहे हो।

थोड़ा ग़ौर करने पर यह बात ज़ाहिर हो जाती है कि इंसान जिस दिन से इजतेमाई ज़िन्दगी शुरू करना चाहता है इस्लाम उसी दिन से उसे अक़्ल से काम लेने और ग़ैर व फ़िक्र करने की नसीहत करता है।

इस्लाम का एक हुक्म यह है कि किसी काम को करने के लिए पहले मशवरा करो और उसे शुरू करने से पहले अच्छी तरह ग़ौर व फ़िक्र करो।

شاور قبل ان تعزم و فکر قبل ان تقدم

यानी अज़्म से पहले मशवरा करो और उसके बारे में इक़दाम करने से पहले ग़ौर व फ़िक्र।

ज़ाहिर है कि इल्म के हर पहलु से ग़ौर व फ़िक्र करने से अच्छाई, बुराई, तारीकी, रौशनी सब आशकार हो जायेंगी और इंसान बसीरत हासिल करने के बाद उस काम को करने या न करने का फ़ैसला करेगा।

जज़बात, अक़्ल के साथ तो मुफ़ीद होते हैं लेकिन अक़्ल के बग़ैर इंसान को गुमराह कर देते हैं। क्योंकि जज़बात किसी अमल के फ़कत एक पहलु पर नज़र

करते हैं और उस अमल की बुराईयों व तारीक गौशों को छुपाये रखते हैं जिसकी वजह से उस काम को करने के बाद उसकी बुराईयाँ ज़ाहिर होती हैं।

माँ बाप की ज़िम्मेदारी है कि अपनी औलाद की अक़्ली तौर पर बचपन से ही परवरिश करें और उनके ग़ौर व फ़िक्र को बेदार रखें ताकि वह तदरीजन अक़्लमंद बन जाये।

खाली वक़्त में उन्हें ग़ौर व फ़िक्र करने की फ़ुर्सत दें और उनकी ्च्छी फ़िक्र की तारीफ़ करें ताकि आहिस्ता आहिस्ता उनमें ग़ौर व फ़िक्र का शौक़ पैदा हो जाये।

कुछ मौक़ों पर बच्चों से काम के नतीजे को बयान न करें बल्कि पूरा काम उन्हीँ पर छोड़ दें जिससे कि वह उसके बारे में ख़ुद ग़ौर करें ताकि वह ग़ौर व फ़िक्र करना सीखें और ्गर वह नुक़्सान उठायें तो ग़ैरे मुस्तक़ीम तौर पर उनकी राहनुमाई करें ताकि वह आइन्दा अपनी उसी नाक़िस फ़िक्र के बल बूते पर काम करते हुए उसके बुरे नतीजों में गिरफ़्तार न हो सकें।

ज़िमनन इस नुक्ते पर भी तवज्जो देनी चाहिए कि ्ल्लाह ने तमाम बन्दों को ग़ौर व फ़िक्र की नेमत से नवाज़ा है। अक़्ल मंद अफ़राद वही हैं जो शुरू से ही ग़ौर व फ़िक्र से काम लेते हुए अपनी ्क़्ल को पुख़्ता बना लेते हैं। जो लोग जज़बात के तहत बग़ैर सोचे समझे काम करते हैं वह आहिस्ता आहिस्ता ग़ौर व फ़िक्र की कूवत को खो देते हैं।

उस्तादों और मुरब्बियों की ज़िम्मेदारी

मदर्से के उस्तादों और मुरब्बियों की ज़िम्मेदारी यह है कि वह तालीम व तरबियत के दौरान बच्चों को रटाने के बजाय सही तरह से ग़ौर व फ़िक्र करना सिखायें। इस बिना पर मदर्से की सबसे अहम ज़िम्मेदारी शागिर्दों को फ़िक्री एतेबार से मज़बूत बनाना है। मगर हम अफ़सोस के साथ यह बात क़बूल करने पर मजबूर हैं कि तालीमी मैदान में फ़िक्री तरबियत की तरफ़ कम तवज्जो दी जाती है और शागिर्दों के इल्मी इरतक़ा का मेयार शिर्फ़ रटी हुई चीज़ों को क़रार दिया जाता है और वह उसी के बल बूते पर वह यूनिवर्सिटी तक पहुँचते हैं।

आगाही के तौर पर तमाम ही वालदैन को सलाह दी जाती है कि हमारे बच्चों के मुस्तक़बिल की सआदत ग़ौर व फ़िक्र पर मुनहसिर हैं, असनाद पर नही।

बहुत ज़्यादा देखने में आया है कि कुछ लोग पढ़ लिखने के बाद भी इजतेमाई ज़िन्दगी में कामयाब नही हो सके हैं और कुछ लोग बग़ैर पढ़े लिखे होने के बावुजूद भी ग़ौर व फ़िक्र के नतीजे में इजतेमाई ज़िन्दगी में कामयाब रहे हैं। इससे यह बात ज़ाहिर होती है कि समाजी ज़िन्दगी के लिए ग़ैर व फ़िक्र की बहुत ज़रूरत है।

ग़ौर व फ़िक्र इस्लाम की नज़र में

क़ुरआने करीम की आयतों के मुताले से पता चलता है कि क़ुरान ने इंसानों को ग़ौर व फ़िक्र की बहुत ज़्यादा दावत दी है। उन्हें मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से आसमान, ज़मीन और तरह तरह की मख़लूक़ की ख़िलक़त के बारे में ग़ौर करने को कहा है।

क़ुरआने करीम की आयतों से यह बात भी ज़ाहिर होती है कि वही अफ़राद कामयाब हैं जो ग़ौर व फ़िक्र से काम लेते हैं और जो लोग ग़ौर व फ़िक्र नही करते वह कामयाब नही हो सकते।

जो अफ़राद अपनी अक़्ल से काम लेते हैं उन्हें क़ुरआने करीम में

اولوالالباب कहा गया है, यानी साहिबाने अक़्ल।

हज़रत इमाम ज़ाफ़र सादिक़ अलैहिस्सलाम से नक़्ल हुआ है कि :

قال انا لنحب من كان عاقلا فهما

बेशक हम अक़लमंद व फ़हीम अफ़राद से मुहब्बत करते हैं।

हज़रत अली अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि :

نبه بالتفكر قلبك यानी ग़ौर व फ़िक्र के ज़रिये अपने क़ल्ब को तन्बीह करो।

ज़ाहिर है कि इस हदीस से यही महफ़ूम निकलता है कि जो लोग ग़ौर व फ़िक्र नही करते उनके क़ल्ब ख़ाबे ग़फ़लत में हैं।

हज़रत इमाम अली रिज़ा अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि :

ليس العبادة كقرة الصلاة و الصوم انما العبادة التفكر فى امر الله عزو جل

ज़्यादा नमाज़ रोज़े का नाम इबादत नही है, बल्कि अल्लाह के अम्र में ग़ौर व फ़िक्र करना है। इससे मालूम होता है कि ग़ौर व फ़िक्र की अहमियत नमाज़ रोज़े से ज़्यादा है।

हज़रत इमाम जाफ़र अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि :

افضل العبادة ادمان التفكر فى الله و فى قدرته

सबसे अच्छी इबादत हमेशा अल्लाह और उसकी क़ुदरत के बारे में ग़ौर व फ़िक्र करना है।

बाज़ रिवायतों का मज़मून इस बात पर दलालत करता है कि एक लहज़े का ग़ौर व फ़िक्र एक साल की इबादत से अफ़ज़ल है।

ग़ौर व फ़िक्र की इस फज़ीलत के बारे में दो दलीलें पेश की जासकती है :

पहली यह कि इबादत की अहमियत का रब्त मुस्तक़ीमन इबादत करने वाले इंसान से है। यानी इबादत करने वाले की अक़्ल की जितनी अहमियत होगी उसके ज़रिये की गयी इबादत की अहमियत भी उतनी ही होगी। लिहाज़ा इबादत

की ्हमियत का मेयार पहले दर्जे में इबादत करने वाले की अक़्ल से मुरतबित है। इससे मालूम होता है कि अक़्ल व ख़िरद यानी ग़ौर व फ़िक्र का मक़ाम बहुत ऊँचा है।

दूसरी यह कि इंसान ने अपनी एक मुस्तक़िल नो बनाई है और ख़ुद को हैवानात के ज़ुमरे से बाहर निकाला है। ज़ाहिर है कि इस इस्तक़लाल की इल्लत व वजह इंसान की फ़िक्र करने की कूवत है। यानी इंसान में अक़्ल व ख़िरद की ताक़त इतनी है कि इसी ताक़त के बल बूते पर उसने अपने लिए हैवाने नातिक़ नामी एक मुस्तक़िल नो बनाली है। यह बात भी ज़ाहिर है कि नातिक़ होने से मुराद ग़ौर व फ़िक्र करना है। लिहाज़ा जो अफ़राद ग़ौर व फ़िक्र के मैदान से दूर रहते हैं वह रस्मी तौर पर तो इंसान गिने जाते है मगर उन्हें अपनी इंसानियत से कोई फ़ायदा नही होता।

दूसरी तरफ़ आदमी ग़ौर व फ़िक्र की ताक़त में जितना ज़्यादा सरशार होगा उसका इंसान कहलाना उतना ही ज़्यादा सही होगा। इसी लिए जिन लोगों ने अपनी ख़ुदा दाद अक़्ल से काम नही लिया है क़ुराने करीम में उन्हें हैवानात के ज़ुमरे में शुमार किया है बल्कि हैवानात से भी पस्ततर व बे अहमियत।

आख़िर में इस अहम नुक्ते की तरफ़ इशारा करते हैं कि औलाद की तरबियत में ख़ास तौर पर जवान लड़को लड़कियों की तरबियत में माँ बाप का किरदार बहुत अहम है। क्योंकि सभी लड़के और लड़कियाँ जब बालिग़ होने के क़रीब पहुँचते हैं या ताज़े बालिग़ हुए होते हैं तो वह जज़बात और एहसासात से सरशार होते हैं। ऐसे वक़्त में समाजी मसाइल में उनकी रहनुमाई करना और उन्हें ग़ैर व फ़िक्र के मैदान में दाख़िल करना एक सख़्त काम होता है।

हमें याद रखना चाहिए कि माँ बाप को अपने बच्चों से यह उम्मीद नही रखनी चाहिए कि वह अपने रोज़ मर्रा के कामों को बुज़ुर्गों की तरह अक़्ल व फ़िक्र के मीज़ान पर परखने के बाद अंजाम दें। क्योंकि जवानों के जज़बात को बिल्कुल नज़र अन्दाज़ नही किया जा सकता है बल्कि उनके अन्दर तदरीजन ग़ौर व फ़िक्र करने का शौक़ पैदा किया जाये और थोड़ा वक़्त गुज़रने का भी इन्तेज़ार किया जाये ताकि हमारे बच्चे अपने जज़बात को मोतदिल करके अपनी अक़्ल को पुख़्ता बनालें।

हमें यह बात नही भूलनी चाहिए कि जब हम अपनी औलाद की उम्र में थे तो हम भी जज़बात से खाली नही थे। हमें भी समाजी ज़िन्दगी के तजरबों ने ही जीने का अंदाज़ सिखाया। दूसरे लफ़्ज़ों में यह कहा जा सकता है कि तमाम बातों को

घर व मदरसे के अन्दर नही सीखा जा सकता है, बल्कि कुछ बातें हम समाज में रह कर ही सीखते हैं।

इताअत

تلك حدود الله فلا تعتدوها و من يتعد حدود الله فاولئك هم الظالمون

यह अल्लाह की हुदूद हैं इनसे आगे न बढ़ो जो आल्लाह की हुदूद से आगे बढ़े वह सब ज़ालेमीन में से हैं।

सूरः ए बक़रः आयत न. २३०

अगर हम यह मानलें कि यह पूरी ज़मीन एक इंसान के हाथ में है तो इसमें कोई शक नही है कि वह इंसान ज़िन्दगी के हर पहलु में बहुत ज़्यादा आज़ाद होगा। जहाँ उसका दिल चाहेगा मकान बनायेगा, जिस हिस्से में चाहेगा खेती करेगा, जिस जगह बाग़ लगाना चाहेगा लगा लेगा क्योंकि वह ज़मीन पर रहने वाला तन्हा इंसान होगा। लेकिन इसके बावजूद भी वह खाने पीने, काम करने वग़ैरा में महदूद ही रहेगा। इस बिन पर अगर इंसान इस ज़मीन पर तन्हा रहेगा तब भी उसे मजबूरन कुछ हुदूद की रिआयत करनी होगी। क्योंकि वह उस हालत में किसी ख़ास जगह पर आराम करने और कुछ खास चीज़े खाने पर मजबूर

होगा। इस मुक़द्दमे से यह बात ज़ाहिर होती है कि समाजी ज़िन्दगी में सबसे पहली ज़रूरत एक क़ानूनी ज़िन्दगी की है। दूसरे लफ़्ज़ों में इस तरह कहा जा सकता है कि जब इंसान की फ़रदी ज़िन्दगी इजतेमाई ज़िन्दगी में तबदील हो जाती है तो इंसानों के इख़्तियार महदूद हो जाते हैं क्योंकि समाज में एक निज़ाम व क़ानून का दौर दौरा हो जाता है।

इस अस्ले अव्वल के लिहाज़ से इजतेमाई ज़िन्दगी से जो चीज़ वुजूद में आती है, वह क़ानूनी ज़िन्दगी व हद व हुदूद की रिआयत है, चाहे यह इजतेमा दो इंसानों पर ही मुशतमिल हो। मिसाल के तौर पर अगर पूरी ज़मीन पर फ़क़त दो इंसान रहे तो उनकी ज़िम्मेदारी है कि वह क़ानून के मुताबिक़ ज़िन्दगी बसर करें, यानी उनमें से हर एक की ज़िम्मेदारी है कि अपनी हद व हुदूद की रिआयत करें और अपनी हद से आगे न बढ़ें।

लिहाज़ा इजतेमाई ज़िन्दगी का बुनियादी मसला क़ानून की ज़रूरत और उनकी रिआयत है।

ख़ुदा वन्दे आलम ने इस बारे में फ़रमाया है कि जो हुदूद से आगे बढ़े उसने खुद अपने ऊपर ज़ुल्म किया है। जाहिर है कि एक बेक़ानूनी समाज़ को मफ़लूज

बना देती है और जब समाज मफ़लूज हो जायेगा तो उसका नुक़्सान समाज के हर फ़र्द होगा। लिहाज़ा जो लोग क़ानून तोड़ते हैं, वह हक़ीक़त में अपने ऊपर ज़ुल्म करते हैं। इस लिए आराम व सुकून पाने के लिए समाज के हर फ़र्द को क़ानून का एहतेराम करते हुए उसकी पैरवी करनी चाहिए।

अफ़सोस है कि बाज़ समाज में समाजी ज़िन्दगी तो पाई जाती हैं लेकिन उनके अफ़राद को क़ानून की रिआयत की मालूमात नही है। इससे मालूम होता है कि उनका समाज तरकीब के लिहाज़ से तो इजतेमाई हो गया है लेकिन उसके अफ़राद में अभी तक इजतेमाई ज़िन्दगी की क़ाबिलियत पैदा नही हुई है। दूसरे लफ़्ज़ों में इस तरह कहा जा सकता है कि ऐसा समाज उस इंसान की तरह है जिसने जिस्मानी एतेबार से तो रुश्द कर लिया हो लेकिन अक़्ली व फ़िक्री एतेबार से रुश्द के मरहले तक न पहुँचा हो।

इस तरह के समाज़ में क़ानून तोड़ने की आदत पाई जाती है। ज़ाहिर है कि इंसानों के ज़ाती फ़ायदे इस बात का सबब बनते हैं कि ज़वाबित को नज़र अंदाज़ करके रवाबित को नज़र में रखा जाता है। इसे उसे देख कर क़ानून की रिआयत किये बिना अपना काम करने की कोशिश की जाती है। इस तरह के अफ़राद अपने

फ़ायदे के लिए समाजी निज़ाम व ज़वाबित को पामाल करके रवाबित से काम निकालते है।

आज एक ऐसी मुश्किल को हल करने की सआदत हासिल की है जो न ताग़ूत के ज़माने में हल हुई थी और न अब तक जमहूरी इस्लामी के दौर में और वह है ट्रैफिक की मुश्किल। आज तेहरान शहर में कुछ गिने चुने हज़रात के अलावा बाक़ी लोग ड्राइविंग के क़ानूनों की रिआयत नही करते। बल्कि हालत यह है कि ड्राइवर हर तरह की ख़िलाफ़ वरज़ी करते हुए आपना रास्ता साफ़ करके आगे बढ़ने की कोशिश करता है। जबकि ट्रैफ़िक पुलिस के अफ़सर क़ानूनों की ख़िलाफ़ वरज़ी करने वाले ड्राइवरों पर जुर्माना जहाँ तहाँ नक़द जुर्माना करते रहते हैं, लेकिन इसके बावजूद भी ड्राइवर ख़िलाफ़ वरज़ी करते रहते हैं। याद रखना चाहिए कि जुर्माने या जेल की सज़ा के ज़रिये किसी को क़ानून का ताबे नही बनाया जा सकता, बल्कि इसके लिए ज़रूरी है कि उसकी समाजी फ़िक्र को इतना वसी बना देना चाहिए कि उसके अन्दर क़ानून की पैरवी करने का जज़बा पैदा हो जाये। कोई ऐसा काम करना चाहिए कि ड्राइवर मुकम्मल तौर पर क़ानूनों की रिआयत करने पर ईमान ले आयें ताकि बाद में पुलिस के मौजूद रहने और जुर्माना करने की ज़रूरत न रहे। ड्राइवर अपने दिल के उस ईमान की वजह से ख़िलाफ़ वरज़ी की तरफ़ मायल न हों।

समाजी ज़िन्दगी यानी शख़्सी उम्मीदों की नफ़ी

हमारे समाज में कुछ अफ़राद को छोड़ कर सभी में तवक़्क़ो पाई जाती है। लोग, ख़ुद को समाज के दूसरे लोगों से बड़ा मानते हुए यह चाहते हैं कि सब काम ताल्लुक़ात की बिना पर हल हो जायें। इस तरह के लोग अपने आपको सबसे अलग समझते हैं और किसी भी समाजी पहलु में क़ानून की रिआयत नही करते और क़ानून तोड़कर अपनी चाहत को पूरा करते हैं। लोगों का यह रवैया इस बात की हिकायत करता है कि क़ानून कमज़ोर लोगों के लिए है, उन्हें हुकूमत के तमाम ख़र्चों को पूरा करना चाहिए और बदले में क़ानून की रिआयत भी। हक़ीक़त यह है कि क़ानून तोड़ने वाले अफ़राद ख़ुद को समाज के आम लोगों से बड़ा समझते हैं और अपने लिए एक ख़ास वज़अ के क़ायल होते हैं। उनका यह रवैया राजा, प्रजा और ग़ुलाम व मालिक के निज़ाम से पनपा है। आज इस्लाम तमाम लोगों को क़ानून के सामने बराबर समझता है और किसी को भी यह हक़ नही देता कि वह ख़ुद को किसी तरह भी दूसरों से बड़ा समझे। इस्लाम ने तबईज़ के तमाम अवामिल को इंसानों के दरमियान से ख़त्म करके तमाम मख़लूक़ को बराबर कर दिया है। जिस तरह इबादत में समाज का एक आली इंसान (ज़िम्मेदारी के एतेबार से) नमाज़े जमाअत की पहली सफ़ में खड़ा हो सकता है इसी तरह समाजके एक

सादे इंसान को भी उसकी बराबर में खड़े होकर नमाज़ पढ़ने का पूरा पूरा हक़ है। दूसरी जंगे जहानी के दौरान मग़रिबी मुमालिक के एक अख़बार में एक तस्वीर छपी जिसमें यह दिखाया गया कि ब्रितानी वज़ीरे आज़म लाइन में खड़ा अपनी बारी का इंतेज़ार कर रहा है ताकि अपने हिस्से का खाना ले सके। किसी भी समाज का तकामुल व तरक़्क़ी क़ानून व मुक़र्ररात की रिआयत में नहुफ़्ता हैं। जिस मुआशरे की समाजी सतह और नज़रियात ऊँचे होते हैं उसमें वसी पैमाने पर क़ानून की पैरवी का जज़्बा पाया जाता है। आख़िर में हम कह सकते हैं कि क़ानून तोड़ना जहाँ एक ग़ैरे इंसानी अमल है, वहीँ इस्लाम की नज़र में दूसरों के हुक़ूक़ की पामाली है। इस्लामी अहकाम में मिलता है कि अगर कोई इंसान नमाज़ की सफ़ में अपनी जानमाज़ बिछादे तो फिर दूसरों को वहाँ नमाज़ पढ़ने और अल्लाह की इबादत करने का हक़ नही है।

सलाह व मशवरा

و شاورهم في الا مر कामों में दूसरों से मशवरा करो।

समाजी तरक़्क़ी का एक पहलू मशवरा करना है। मशवरा यानी मिलकर फ़िक्र करना। इसमें कोई शक नही है कि जो लोग मशवरा करते हैं, उनमें अक़्ल व फ़िक्र ज़्यादा पाई जाती है। जो लोग राय मशवरा नही करते, वह अपनी फ़िक्र पर तकिया करते हैं। यह रवैया इस बात की हिकायत करता है कि उनकी फ़िक्र नाक़िस है। इसकी खुली हुई दलील यह है कि चार लोगों की फ़िक्र से जो बात हासिल होती है, वह एक इंसान की फ़िक्र के मुक़ाबले बेहतर और कामिल होती है। क्योंकि हर इंसान किसी भी मसले पर अपनी ख़ास रविश से ग़ौर व फ़िक्र करता है। लिहाज़ा जो इंसान दूसरों से मशवरा करता है हक़ीक़त में वह दूसरों की फ़िक्र को अपनी फ़िक्र में मिला लेता है। या दूसरे अलफ़ाज़ में इस तरह कहा जा सकता है कि उस मसले पर मुख़तलिफ़ पहलुओं से ग़ौर होता है और इस तरह उसके पोशीदा पहलुओं पर भी मुकम्मल तरह से बहस हो जाती है।

अक़्ले सलीम इस बात पर दलालत करती है कि जिस बात पर कुछ अहले नज़र मिलकर ग़ौर करते हैं, वह एक इंसान की फ़िक्र के मुक़ाबले, ग़लतियों से ज़्यादा महफ़ूज़ होती है। क्योंकि इस्लाम अक़्ल पर मबनी दीन है, इस लिए इसने इंसानों को राय मशवरे की तरफ़ तवज्जो दिलाई है।

अल्लाह ने पैग़म्बरे इस्लाम (स.) को, जो कि अक़्ले कुल थे, मशवरा करने का हुक्म देते हुए फ़रमाया :

و اشاورهم في الامر यानी किसी बात को तय करने के लिए (मुसलमानों से) मशवरा करो।

क़ुराने करीम की कुछ दूसरी आयतों में मशवरा करने को िस्लाम व मुसलमानों की ख़ुसूसियत माना गया है।

जैसे कि इरशाद होता है : و امرهم شوري بينهم

यानी मुसलमानो को इस तरह तरबियत हुई है कि वह सब कामों में एक दूसरे से मशवरा करते हैं।

लिहाज़ा मुसलमानों को सलाह मशवरे और सही फ़िक्र हासिल करते वक़्त हसबे ज़ैल नुकात की रिआयत करनी चाहिए।

1.इस राब्ते की वजह से मुसलमानों के आपसी ताल्लुक़ात बढ़ने चाहिए। यानी मुसलमानों तमाम रिश्तों को छोड़ते हुए भी सलाह मशवरे की बुनियाद पर एक दूसरे से राब्ता रखने और अपने ताल्लुक़ात बढ़ाने पर मजबूर हैं।

2.नफ़्सियाती तौर पर भी जब इंसान किसी से मशवरा करता है तो उसे एक बड़ा मक़ाम देता है। यानी मशवरा करने वाला अपने मशवरे के अमल के ज़रिये जिस इंसान से मशवरा लेता है, उसे एहतेराम देता है और अपने लिए मोरिदे एतेमाद व इत्मिनान मानता है।

ज़ाहिर है कि इस तरह के रवैये से आपसी ताल्लुक़ात में मज़बूती और शीरनी पैदा होती है।

3.मशवरा करने से, इंसान का ख़ुद महवरी का जज़बा जो फ़ितरी तौर से हर इंसान में पाया जाता है, कमज़ोर होता है। इस तरह इंसान ख़ुद महवरी के दायरे से निकल कर समाज से जुड़ जाता है और उसमें गिरौही जज़बा पैदा होता है।

4.इस्लाम ने इंसान को तन्हाई से बाहर निकाल कर, उसकी समाजी ज़िन्दगी को मज़बूत बनाया है।

इस्लाम ने ग़ौर व फ़िक्र के मैदान में भी इजतमाई फ़िक्र को फ़रदी फ़िक्र पर तरजीह दी है और इंसान को जमूदे फ़िक्री से बाहर निकाला है।

क्योंकि मशवरा करना, हक़ीक़त में कुछ फ़िक्रों को आपस में मिलाकर उनसे सही व बेहतरीन नतीजा निकालना है।

इस्लाम में मशवरे का मक़ाम

इस्लाम ने जिस तरह इबादत को इनफ़ेरादियत से निकाल कर ुसे इजतमाई क़ालिब ढाला है, उसी तरह मुसलमानों को मिलकर ग़ौर व फ़िक्र करने की भी दावत दी है।

ज़ाहिर है कि एक मुसलमान को उसी इंसान से मशवरा करना चाहिए जिसमें वह सलाहियत पाई जाती हो, हर मामले में हर इंसान से मशवरा करना सही है।

हज़रत इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया है कि

استشر العاقل من الرجال الورع فانه لا يامر الا بخير و اياك والخلاف فان خلاف الورع العقل مفسدة فى الدين و الدنيا

यानी अक़्लमंद व परहेज़गार इंसान से मशवरा करो क्योंकि ऐसा इंसान नेकी के अलावा किसी दूसरी चीज़ की सलाह नही देता और नेक व अक़्लमंद इंसान के मशवरे के ख़िलाफ़ काम न करना वरना तुम्हारा दीन व दुनिया बर्बाद हो जायेगी।

अहम बात यह है कि हम अपनी औलाद से कैसा बरताव करे कि वह सलाह मशवरे के आदि बन सकें।

इसमें कोई शक नही है कि घर के माहौल में शौहर व बीवी के दरमियान ऐसे मौक़े आते हैं जिनमें आपसी सलाह व मशवरे की ज़रूरत पेश आती है। माँ बाप को चाहिए कि ऐसे मौक़ो पर अपनी औलाद को भी मशवरों में शरीक करें और उनसे राय लें और इस तरह उनकी फ़िक्र को मज़बूत बनाये ताकि उनमें ज़ोक़ व शौक़ पैदा हो और वह अपनी शख़्सियत का एहसास करें।

माँ बाप एक दूसरी तरह से भी अपनी औलाद में मशवरे को अमली जामा पहना सकते हैं और वह यह है कि जो काम बच्चों से मख़सूस होते हैं, बुज़ुर्ग ुनको

बच्चों के हवाले करें और वह आपसी सलाह मशवरे से जिस नतीजे पर पहुँचे उसे अमल में लायें। इससे यह फ़ायदा होगा कि बच्चे आपस में सलाह मशवरा करना सीख जायेंगे।

ज़ाहिर है कि जैसे जैसे बच्चों की उम्र व अक़्ल बढ़ती जाती है वैसे वैसे बुज़ुर्गों को उन्हें अपने सलाह मशवरों के जलसों में शरीक करने की ज़रूरत पड़ती है।

सबसे ज़रीफ़ नुक्ता यह है कि जब बच्चे महसूस करेंगे कि घर में तमाम काम सलाह मशवरे से होते है और इनफ़ेरादी राय व इस्तबदाद से काम नही लिया जाता है तो वह अमली तौर पर बुज़ुर्गों से सलाह मशवरे का सबक़ लेगें और ख़ुद अहले मशवरा बन जायेंगे।

नज़्म व ज़ब्त

اوصیکم بتقوی اللہ و نظم امرکم हज़रत अली (अ.) नो फ़रमायाः

मैं तुम्हे तक़वे और नज़्म की वसीयत करता हूँ। हम जिस जहान में ज़िन्दगी बसर करते हैं यह नज़्म और क़ानून पर मोक़ूफ़ है। इसमें हर तरफ़ नज़्म व

निज़ाम की हुकूमत क़ायम है। सूरज के तुलूअ व गुरूब और मौसमे बहार व ख़िज़ा की तबदीली में दक़ीक़ नज़्म व निज़ाम पाया जाता है। कलियों के चटकने और फूलों के खिलने में भी बेनज़मी नही दिखाई देती। कुर्रा ए ज़मीन, क़ुर्से ख़ुरशीद और दिगर तमाम सय्यारों की गर्दिश भी इल्लत व मालूल और दक़ीक़ हिसाब पर मबनी है। इस बात में कोई शक नही है कि अगर ज़िन्दगी के इस वसीअ निज़ाम के किसी भी हिस्से में कोई छोटी सी भी ख़िलाफ़ वर्ज़ी हो जाये तो तमाम क़ुर्रात का निज़ाम दरहम बरहम हो जायेगा और कुर्रात पर ज़िन्दगी ख़त्म हो जायेगी। पस ज़िन्दगी एक निज़ाम पर मोक़ूफ़ है। इन सब बातों को छोड़ते हुए हम अपने वुजूद पर ध्यान देते हैं, अगर ख़ुद हमारा वुजूद कज रवी का शिकार हो जाये तो हमारी ज़िन्दगी ख़तरे में पड़ जायेगी। हर वह मौजूद जो मौत को गले लगाता है मौत से पहले उसके वुजूद में एक ख़लल पैदा होता है जिसकी बिना पर वह मौत का लुक़मा बनता है। इस अस्ल की बुनियाद पर इंसान, जो कि ख़ुद एक ऐसा मौजूद है जिसके वुजूद में नज़्म पाया जाता है और एक ऐसे वसीअ निज़ामे हयात में ज़िन्दगी बसर करता है जो नज़्म से सरशार है, इजतेमाई ज़िन्दगी में नज़्म व ज़ब्त से फ़रार नही कर सकता।

आज की इजतेमाई ज़िन्दगी और माज़ी की इजतेमाई ज़िन्दगी में फ़र्क़ पाया जाता है। कल की इजतेमाई ज़िन्दगी बहुत सादा थी मगर आज टैक्निक,

कम्पयूटर, हवाई जहाज़ और ट्रेन के दौर में ज़िन्दगी बहुत दक़ीक़ व मुनज़बित हो गई है। आज इंंसान को ज़रा सी देर की वजह से बहुत बड़ा नुक़्सान हो जाता है। मिसाल को तौर पर अगर कोई स्टूडैन्ट खुद को मुनज़्ज़म न करे तो मुमकिन है कि किसी कम्पटीशन में तीन मिनट देर से पहुँचे, ज़ाहिर है कि यह बेनज़मी उसकी तक़दीर को बदल कर रख देगी। इस मशीनी दौर में ज़िन्दगी की ज़रूरतें हर इंसान को नज़्म की पाबन्दी की तरफ़ मायल कर रही हैं। इन सबको छोड़ते हुए जब इंसान किसी मुनज़्ज़म इजतेमा में क़रार पाता है तो बदूने तरदीद उसका नज़्म व निज़ाम उसे मुतास्सिर करता है और उसे इनज़ेबात की तरफ़ खींच लेता है।

एक ऐसा ज़रीफ़ नुक्ता जिस पर तवज्जो देने में ग़फ़लत नही बरतनी चाहिए यह है कि नज़्म व पाबन्दी का ताल्लुक़ रूह से होता है और इंसान इस रूही आदत के तहत हमेशा खुद को बाहरी इमकान के मुताबिक़ ढालता रहता है। मिसाल के तौर पर अगर किसी मुनज़्ज़म आदमी के पास कोई सवारी न हो और उसके काम करने की जगह उसके घर से दूर हो तो उसका नज़्म उसे मजबूर करेगा कि वह अपने सोने व जागने के अमल को इस तरह नज़्म दे कि वक़्त पर अपने काम पर पहुँच सके।

इस बिना पर जिन लोगों में नज़्म व इनज़ेबात का जज़्बा नही पाया जाता अगर उनका घर काम करने की जगह से नज़दीक हो और उनके पास सवारी भी मौजूद वह तब भी काम पर देर से ही पहुँचेगा।

इस हस्सास नुक्ते पर तवज्जो देने से हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि नज़्म व पाबन्दी का ताल्लुक़ इंसान की रूह से है और इसे आहिस्ता आहिस्ता तरबियत के इलल व अवामिल के ज़रिये इंसान के वुजूद में उतरना चाहिए।

इसमें कोई शक नही है कि इंसान में इस जज्बे को पैदा करने के लिए सबसे पहली दर्सगाह घर का माहौल है। कुछ घरों में एक खास नज़्म व ज़ब्त पाया जाता है, उनमें सोने जागने, खाने पीने और दूसरे तमाम कामों का वक़्त मुऐयन है। जाहिर है कि घर का यह नज़्म व ज़ब्त ही बच्चे को नज़्म व निज़ाम सिखाता है। इस बिना पर माँ बाप नज़्म व निज़ाम के उसूल की रिआयत करके ग़ैरे मुस्तक़ीम तौर पर अपने बच्चों को नज़्म व इनज़ेबात का आदी बना सकते हैं।

सबसे हस्सास नुक्ता यह है कि बच्चों को दूसरों की मदद की ज़रूरत होती है। यानी माँ बाप उन्हें नींद से बेदार करें और दूसरे कामों में उनकी मदद करें। लेकिन यह बात बग़ैर कहे ज़ाहिर है कि उनकी मदद करने का यह अमल उनकी उम्र बढ़ने

के साथ साथ ख़त्म हो जाना चाहिए। क्योंकि अगर उनकी मदद का यह सिलसिला चलता रहा तो वह बड़े होने पर भी दूसरों की मदद के मोहताज रहेंगे। इस लिए कुछ कामों में बच्चों की मदद करनी चाहिए और कुछ में नही, ताकि वह अपने पैरों पर खड़ा होना सीखें और हर काम में दूसरों की तरफ़ न देखें।

माँ बाप को इस बात पर भी ध्यान देना चाहिए कि बच्चों का बहुत ज़्यादा लाड प्यार भी उन्हे बिगाड़ने और खराब करने का एक आमिल बन सकता है। इससे आहिस्ता आहिस्ता बच्चों में अपने काम को दूसरों के सुपुर्द करने का जज़्बा पैदा हो जायेगा फिर वह हमेशा दूसरों के मोहताज रहेंगे। ज़िमनन इस बात को भी ध्यान में रखना चाहिए कि नज़्म व निज़ाम एक वाक़ियत हैं लेकिन इसका दायरा बहुत वसीअ है। एक मुनज़्ज़म इंसान इस निज़ाम को अपने पूरे वुजूद में उतार कर अपनी रूह, फ़िक्र, आरज़ू और आइडियल सबको निज़ाम दे सकता है। इस बिना पर एक मुनज़्ज़म इंसान इस हस्ती की तरह अपने पूरे वुजूद को निज़ाम में ढाल सकता है।

निज़ाम की कितनी ज़्यादा अहमियत है इसका अन्दाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि हज़रत अली अलैहिस्सलाम ने अपनी उम्र के सबसे ज़्यादा बोहरानी हिस्से यानी शहादत के वक़्त नज़्म की रिआयत का हुक्म देते हुए फ़रमाया है।

اوصیکم بتقوی الله و نظم امرکم

तुम्हें तक़वे व नज़्म की दावत देता हूँ।

अरबी अदब के क़वाद की नज़र से कलमा ए अम्र की ज़मीर की तरफ़ इज़ाफ़त इस बात की हिकायत है कि नज़्म तमाम कामों में मनज़ूरे नज़र है, न सिर्फ़ आमद व रफ़्त में। क्योंकि उलमा का यह मानना है कि जब कोई मस्दर ज़मीर की तरफ़ इज़ाफ़ा होता है तो उमूम का फ़ायदा देता है। इस सूरत में मतलब यह होगा कि तमाम कामों में नज़्म की रिआयत करो। यानी सोने,जागने, इबादत करने, काम करने और ग़ौर व फ़िक्र करने वग़ैरा तमाम कामों में नज़्म होना चाहिए।

इस्लाम में नज़्म व निज़ाम की अहमियत

इस्लाम नज़्म व इन्ज़ेबात का दीन है। क्योंकि इस्लाम की बुनियाद इंसान की फ़ितरत पर है और इंसान का वुजूद नज़्म व इन्ज़ेबात से ममलू है इस लिए ज़रूरी है कि इंसान के लिए जो दीन व आईन लाया जाये उसमे नज़्म व इन्ज़ेबात पाया जाता हो। मिसाल के तौर पर मुसलमान की एक ज़िम्मेदारी वक़्त की पहचान है।

यानी किस वक़्त नमाज़ शुरू करनी चाहिए ? किस वक़्त खाने को तर्क करना चाहिए ? किस वक़्त इफ़्तार करना चाहिए ? कहाँ नमाज़ पढ़नी चाहिए और कहाँ नमाज़ नही पढ़नी चाहिए? कहाँ नमाज़ चार रकत पढ़नी चाहिए कहाँ दो रकत ? इसी तरह नमाज़ पढ़ते वक़्त कौनसे कपड़े पहनने चाहिए और कौन से नही पहनने चाहिए ? यह सब चीज़ें इंसान को नज़्म व इन्ज़ेबात से आशना कराती हैं।

इस्लाम में इस बात की ताकीद की गई है और रग़बत दिलाई गई है कि मुसलमानों को चाहिए कि अपनी इबादतों को नमाज़ के अव्वले वक़्त में अंजाम दें।

हज़रत इमाम हसन अलैहिस्सलाम ने अपने बेटे को अव्वले वक़्त नमाज़ पढ़ने की वसीयत की।

انه قال یا بنی اوصك با لصلوة عند وقتها

ऐ मेरे बेटे नमाज़ को नमाज़ के अव्वले वक़्त में पढ़ना।

ज़ाहिर है कि फ़राइज़े दीने (नमाज़े पनजगाना) को अंजाम देने का एहतेमाम इंसान में तदरीजी तौर पर इन्ज़ेबात का जज़्बा पैदा करेगा।

ऊपर बयान किये गये मतालिब से यह बात सामने आती है कि पहली मंज़िल में जज़्बा ए नज़्म व इन्ज़ेबात माँ बाप की तरफ़ से बच्चों में मुन्तक़िल होना चाहिए। ज़ाहिर है कि स्कूल का माहौल भी बच्चों में नज़्म व इन्ज़ेबात का जज़्बा पैदा करने में बहुत मोस्सिर है। स्कूल का प्रंसिपिल और मास्टर अपने अख़लाक़ व किरदार के ज़रिये शागिर्दों में नज़्म व इन्ज़ेबात को अमली तौर पर मुन्तक़िल कर सकते हैं। इसको भी छोड़िये, स्कूल का माहौल अज़ नज़रे टाइम टेबिल ख़ुद नज़्म व ज़ब्त का एक दर्स है। शागिर्द को किस वक़्त स्कूल में आना चाहिए और किस वक़्त सकूल से जाना चाहिए ? स्कूल में रहते हुए किस वक़्त कौनसा दर्स पढ़ना चाहिए ? किस वक़्त खेलना चाहिए ? किस वक़्त इम्तेहान देना चाहिए ? किस वक़्त रजिस्ट्रेशन कराना चाहिए ? यह सब इन्ज़ेबात सिखाने के दर्स हैं।

ज़ाहिर है कि बच्चों और शागिर्दों नज़्म व इन्ज़ेबात का जज़्बा पैदा करने के बारे में माँ बाप और उस्तादों की सुस्ती व लापरवाही जहाँ एक ना बख़शा जाने वाला गुनाह हैं वहीँ बच्चों व जवानों की तालीम व तरबियत के मैदान में एक बड़ी ख़ियानत भी है। क्योंकि जो इंसान नज़्म व इन्ज़ेबात के बारे में नही जानता वह ख़ुद को इजतेमाई ज़िन्दगी के मुताबिक़ नही ढाल सकता। इस वजह से वह शर्मिन्दगी के साथ साथ मजबूरन बहुत से माद्दी व मानवी नुक़्सान भी उठायेगा।

नसीहतें

सैरो सलूक की राह बहुत दुशवार है इसमें बहुत से नशेबो फ़राज़ व पेचो ख़म पाये जाते हैं अगरचे इस राह में हर मंज़िल पर जलवे हैं और मोमिने सालिक को(बेदारी या ख़वाब की हालत में शाद कर देने वाले उन्स, माअरेफ़त और यक़ीन) के दिल कश नज़ारों का मुशाहेदा होता रहता है, लेकिन यह जलवे और मन्ज़र उस वक़्त अपने कमाल को पहुँचते हैं जब सालिके ख़ुदा जू अपनी ज़िन्दगी का एक बड़ा हिस्सा इस राह में सर्फ़ कर देता है और इस राह का पुराना राही हो जाता है। क्योंकि-

1- इन मनाज़िल में, सबसे ज़्यादा रंज लिक़ा उल्लाह की नशोबो फ़राज़ वाली राह में(या अय्युहल इंसानु इन्नका कादिहुन इला रब्बिका कदहन फ़मुलाक़ीहि)[१] की शक्ल में, हरमें रब के दिफ़ाअ और उसके दीन की हिफ़ाज़त में बर्दाश्त करने पड़ते हैं लिहाज़ा यह बात तबई है कि उसको लिक़ा उल्लाह से ख़ुशी भी उतनी ही ज़्यादा होगी और उसको अपने महबूब के जमाल का दीदार भी उतना ही ज़्यादा होगा।

2- इस मुद्दत में उसके वुजूद में जो ज़रफ़ियत और वुसअत पैदजा होती है वह गुज़िश्ता की निसबत कहीँ ज़्यादा होती है। और इस कहावत की बुनियाद पर “हर के बामश बीश, बर्फ़श बीशतर ” उसके वुजूद की सरज़मीन पर आसमाने मलाकूत से नज़ूलात भी ज़्यादा होते है।

3- इस मुद्दत में वह पुख़्ता और तजर्बे कार हो जाता है उसके पास तजर्बों का एक ख़ज़ाना होता है दुनिया की बेवफ़ाईयों और अहले दुनिया की मक्कारियों के तजुर्बे,इंसान को बेदार करने वाली मातों के तजुर्बे, सराबों के तजुर्बे “कसराबिन बिक़ीअतिन यहसबुहु अज़्ज़मानु माअन”[२] ग़रूरों के तजुर्बे “मा अल हयातिद्दुनिया इल्ला मताईल ग़रूर ”[३], अन्दर से ख़ाली और दूर से अच्छी लगने वाली दुनिया के तजुर्बे “कुल्लु शैइन मिन अद्दुनिया समाउहु आज़मु मिन अयानिहि.... ”[४], यह तजुर्बे उसके ज़ाती तजुर्बे हैं उसके वुजूद के ज़र्रा ज़र्रा इन तजुर्बात से आशना है उसने इनको अपनी या दूसरों की ज़िन्दगी में नज़दीक से महसूस किया है। ज़ाहिर है कि इन तजुर्बों का नतीजा इस फ़ानी दुनिया की तमाम रंगीनियो, सराबों और वाबस्तगीयों से क़तए ताल्लुक़ हो कर कभी फ़ना न होने वाली ज़ात से क़ल्बी लगाव पैदा करना है। “कुल्लु शैइन हालिकुन इल्ला वजहुहु

ज़हिर है कि उपर बयान किये गये तीनों आमिल और कुछ दिगर अवामिल सालिक राहे ख़ुदा की ख़वाब की सदाक़त, हज़ूरो शहूद की हक़्क़ानियत, यक़ीनो माअरफ़त की ख़ुशियों को एक नया रंग देते है और उसको एक अनोखी क़िस्म की कुव्वत, एतबार व शिद्दत अता करते हैं। इसमें कोई शक नही है कि दो चीज़ें ऐसी है जो इस तकामुल, पुख़्तगी, सफ़ा व शफ़्फ़ाफ़ियत के लिए तजल्ली गाह बन सकती हैं इनमें से एक नसीहतें हैं।

वह रंज और ज़हमते जो सालिके मोमिन अहयाए दीने ख़ुदा और मकतबे अहले बैत अलैहिमुस्सलाम में बर्दाश्त करता है इस से उसके अन्दर जहाँ ज़रफ़ियत का इज़ाफ़ा होता है वहीं दुनिया से बहुत ज़्यादा ला तअल्लुक़ी पैदा हो जाती है। इस बात से कतए नज़र कि आम तौर पर मोमिन सालिक के बयान और तहरीर में शऊर, हिकमत व हक़्क़ानियत का इज़ाफ़ा हो जाता (इस तरह कि जहाँ उसकी नस्र में सोज़ व पयाम पैदा हो जाता है वहीं उसकी नज़्म भी हिकमत व माअरफ़त से माला माल होती है। इसकी वज़ाहत अगले हिस्समें की जायेगी) उसकी नसीहतों में एक ख़ास क़िस्म का जलवा पैदा हो जाता है जो नसीहत की तासीर को बढ़ा देता है। क्यों कि उम्र के इस मरहले में वह दिल की गहराईयों से नसीहतें करता है जो कि सिद्क़ो सदाक़त व सोज़ो गुदाज़ से पुर होती है लिहाज़ उसके कलाम में

तसन्नो व तकल्लुफ़ नही पाये जाते और वह पढ़ने व सुन ने वाले को उलझन में डालने वाली बे फ़साहतो बलाग़त लफ़्फ़ाजीयो से दूर रहता है।

इस छोटे से मुक़द्दमें के बाद अब अगर आप यह चाहते हो कि और इन सतरों के लिखने वाले की तरह रोते हुए अपनी थकी हारी रूह पर सैक़ल करो और अपने नफ़्स की प्यास को पीरे राह रफ़ता के कौसरे ज़ुलाल से सेराब करो तो हमारे उस्ताद की नसीहतों को सुन ने के लिए बैढो और इसके हर बन्द व हर सतर को ग़ौर से सुनो और उनके "नसीहत नामें" को पढ़ कर मसीरे क़ुर्बे ख़ुदा पर चलो, तक़वाए इलाही की रिआयत करते हुए माद्दियात की दुनिया से बाहर आओ क्योँ कि उसकी इतनी अहमियत नही है जितनी तुम समझते हो, अपने तजुर्बात से ग़ाफ़िल न हो, अपनी ग़लतीयों का इयादा करो। अच्छी तरह समझ लो कि हर रोज़ एक नया क़दम उठाओ और वसवसों से जंग करते हुए सकून व इतमिना हासिल करो, हमेशा अपने खोये हुए असली सरमाये को तलाश करने की जुस्तुजू मे लगे रहो। ख़ुद ख़वाही, ख़ुद पसंदी, ख़ुद महवरी और तकब्बुर को छोड़ कर अपनी आँखों के सामने से हिजाबे अकबर को हटा दो और फिर औलिया ए ख़ुदा की तरह गिड़गिड़ाते हुए ज़ाते अक़दस के सामने अपनी वाबस्तगी व फ़क्र को पूरी तरह ज़ाहिर करो और शिर्को रिया को छोड़ कर इस राह के आखिरी मानेअ को ख़त्म कर दो।

(यह इबारत “नीम क़र्ने ख़िदमत बेह मकतबे अहलिबैत (अ.) ” नामक किताब से ली गई है जिसके लेखक हुज्जतुल इस्लाम वल मुस्लेमीन अहमद क़ुदसी हैं।

उस्ताद नसीहत नामा

“बहुत से अफ़राद मखसूसन जवान जब हमारे पास आते हैं तो नसीहतें चाहते हैं ताकि उनको अपनी ज़िन्दगी के लिए मशले राह बना कर क़ुर्बे ख़ुदा के रास्ते पर आगे बढ़ें। (इस गुमान के साथ के हमने यह रास्ता पा लिया है और हम इसके शाह राहों व गली कूचों से आगाह हैं, काश के ऐसा होता !) लेकिन जहाँ से हर दरख़वास्त का जवाब मिलता है वहाँ से किसी को बग़ैर जवाब के नही पलटाना चाहिए मखसूसन अहले ईमान, हक़ीक़त जू और राहे हक़ से मुतमस्सिक होने वाले अफ़राद को आयात क़ुरआने करीम की आयात,मसूमीन के अक़ावाल,बुज़ुर्गाने दीन के हालात से इस्तेफ़ादा करते हुए और अपनी ज़िन्दगी के तजर्बों की बिना पर यह चन्द सतरें लिखीं जिनको “बिज़ाअत मज़जात” की शक्ल में आप हज़रात को हदिया कर रहाँ हूँ मैं तमाम हज़रात से इस बात की गुज़ारिश करता हूँ कि जिस तरह मैं आपकी कामयाबी की दुआ करता हूँ इसी तरह आप भी मुझे दुआए ख़ैर में याद रखें।

1-तक़वाए इलाही

सब से पहले मैं अपनी ज़ात को और आप तमाम हज़रात को तक़वाए इलाही की वसीयत करता हूँ उस तक़वे की वसीयत जो अल्लाह का मोहकम क़िला और रोज़े क़ियामत का बेहतरीन सरमाया ही नही बल्कि “ख़ैर उज़्ज़ाद इला ख़ालिक़िल इबाद ” है। वह तक़वा जो हमारी रगो जाँ मे सरायत कर जाता है और हमारी तमाम हरकातो सकनात को अपने रंग मे रंग लेता है। “मन अहसना मिन सिबग़ति अल्लाह ” ऐसा तक़वा जो हमारी तमाम आरज़ूओं को पूरा करता है,हमारी ज़िन्दगी की राह को मुशख़्ख़स करता है और फिर राह को रौशन कर के हमारे हदफ़ को आली बनाता है।

वह तक़वा जो सब से बड़ा सरमाया और बुलन्द तरीन इफ़तेख़ार है, वह तक़वा जो इंसान को अल्लाह से जोड़ता और उसके ख़ास बन्दों मे शामिल करा देता है फ़िर उसके दिल की गहराईयों से यह सदा बलन्द होती है “इलाही कफ़ा बी इज़्ज़न अन अकूना लका अब्दन व कफ़ा बी फ़ख़रन अन तकूना ली रब्बन” ऐ मेरे अल्लाह मेरी इज़्ज़त के लिए यह काफ़ी है कि मैं तेरा बन्दा हूँ और मेरे फ़ख़्र के लिए यह काफ़ी है कि तू मेरा रब है। यानी मेरी सबसे बड़ी इज़्ज़त तेरी बन्दगी में और मेरा सबसे बड़ा फ़ख़्र तेरी रबूबियत है।[५]

2-माद्दी मक़ामात उस से कहीँ ज़्यादा कम अहमियत हैं जितना तुम सोचते हो

मेरे अज़ीजो ! मैने अपनी इस मुख़तसर सी ज़िन्दगी में जिन्दगी के नशेबो फ़राज़ को देख है और इस ज़िन्दगी की तलख़ीयों, इज़्ज़त व ज़िल्लत, मालदारी व फ़क़ीरी, ऐशो इशरत व परेशानियों का तजुर्बा करने के बाद क़ुरआने करीम में बयान की गई इस हक़ीक़त को महसूस किया है कि " व मा अल हयातु अद्दुनिया इल्ला मताउल गुरूर" [६] हाँ दुनिया मताए गुरूर व फ़रेब है जो तुम सोचते हो ऐसा नही है बल्कि यह अन्दर से ख़ाली है।

फ़ार्सी ज़बान में शाईर ने क्या ख़ूब कहा है-

ज़िन्दगी नुक़्तए मरमूज़ी नीस्त।

ग़ैरे तबदील शबो रोज़ी नास्त ।।

तलख़ो शौरी के बे नामे उम्र अस्त ।

रास्ती आश दहन सोज़ी नीस्त।।

आख़ेरत की हयाते जावेदीनी का अक़ीदह ही वहब तन्हा आमिल है जो इस दुनिया की ज़िन्दगी को वा मफ़हूम बनाता है और अगर हयाते उख़तवी न होती तो इस दुनिया की ज़िन्दगी का न कोई मफ़हूम होता न हदफ़ !

मैने अपनी तमाम उम्र मे उन चीज़ों के अलावा जिन में मानवीयत पाई जाती है या इंसानी अक़दार मौजूद है कोई बा अहमियत चीज़ नही देखी। तमाम माद्दी अरज़िशें सराब की तरह हैं, इंसान सो रहा है, उसके तमाम ख़यालात पानी पर नक़्शा बनाने की मानिन्द हैं, इंसान इस ज़िन्दगी में हमेशा रंजो ग़म व परेशानियो में घिरा रहता है।

कल के बच्चे आज के जवान हैं और आज के जवान कल के बूढ़े हैं, और कल के बूढ़े अपनी क़ब्रो में सो रहे हैं, तुम जो कहते हो ऐसा हर गिज़ नही है।

जब हम माज़ी के किसी बुज़ुर्ग आलिम दीन या किसी और अहम शख़्सित के माकान के पास से गुज़रते हैं तो याद आता है कि कल इस मकान में कैसी चहल पहल रौनक़ थी लेकिन आज इसी मकान पर उदासी और ख़ामौशी छायी हुई है।

कभी नहजुल बलाग़ा में मौजूद हज़रत अली अलैहिस्सलाम का मुतनब्बेह करने वाला यह क़ौल याद आता है कि “फ़कअन्नाहुम लम यकूनू लिद दुनिया उम्मारन व कअन्ना अल आख़िरता लम तज़ल लहुम दारन” [७] गौया यह लोग हरगिज़ इस दुनिया के रहने वाले नही थे और हमेशा से आख़िरत ही उनका ठिकाना था।

हम बलन्द क़ामत दोस्तों की झुकी हुई कमरों को देखते हैं, जो आज कल छड़ी के सहारे चल रहे हैं, वह चन्द क़दम चलते हैं और थक कर रुक जाते हैं, फिर थोड़ा सा सस्ताने के बाद आहिस्ता आहिस्ता आगे क़दम बढ़ाने लगते हैं। उनकी जवानी का ज़माना नज़रों में घूमने लगता है कि वह कितना बलन्द क़द थे, उनमें कितना जोश व जज़बा पाया जाता था, वह किस तरह हंस हंस कर बाते किया करते थे लेकिन आज उनके चेहरों पर इस तरह मायूसी छायी हुई है जैसे इन को कभी ख़ुशियाँ ने दूर से भी न छूआ हो।

यह सब चीज़ों देख कर अल्लाह के बेदार करने वाले कलाम “व मा हाज़िहि अल हयातु अद्दुनिया इल्ला लहवुन व लइबुन” [८] (इस दुनिया की ज़िन्दगी लहबो लअब के अलावा कुछ नही है) के मफ़हूम को अच्छी तरह दर्क करता हूँ और मुतमइन हो जाता हूँ कि दूसरे लोग मेरी उम्र मे पहुँच कर अगर थोड़ भी ग़ौरो फ़िक्र करेंगे तो वह भी सब कुछ समझ जायेंगे। इन सब बातों के ज़ाहिर होने के

बाद मालो मक़ाम, जाहो जलाल के लिए आपस में लड़ाई झगड़े क्यों है ? यह हंगामे किस लिए हो रहे है ? यह ग़फ़लत क्यों तारी रही हो है ?

मखसूसन आज का यह दौर जो तग़य्युरात को बहुत जल्द क़बूल करता है और जिसमें बहुत से बदलाव आ चुके हैं।

मैं बहुत से ऐसे ख़ानदानों को जानता हूँ जिनकी अपना एक अलग ही दुनिया थी, तमाम अफ़राद एक साथ रहते थे लेकिन आज सब बिखर गये हैं कोई अमरीका में है तो कोई यूरोप में जिन्दगी बसर कर रहा है और बूढ़े माँ बाप घर में तन्हाँ रह गये हैं। महीनों गुज़र जाते हैं न माँ बाप को औलाद की ख़ैरियत मिल पाती है और न औलाद को माँ बाप की, यह सब देख कर इमाम का पुर नूर कलाम याद आता है कि “इन्ना शैयन हाज़ा आख़िरुहु लहक़ीक़ुन अन युज़हदा फ़ी अव्वलिहि ” जिस चीज़ का नतीजा यह हो बेहतर है कि उससे शुरु से ही परहेज़ किया जाये।

कभी-कभी मुरदों की ज़ियारत के लिए क़ब्रिस्तान जाता हूँ मख़सूसन उलमा व फ़ुज़ला के मक़बरों पर तो देखता हूँ कि वहाँ पर क़दीमी दोस्त और आशना अफ़राद एक बहुत बड़ी तादाद में यहाँ पर आराम कर रहे है। उन की कब्रो पर लगे हुए

फ़ोटो देख कर माज़ी में गुम हो जाता हूँ। कहीँ ऐसा तो नही है कि मैं भी उन्हीँ के दरमियान मौजूद हूँ लेकिन ख़ुद को ज़िन्दा तसव्वुर कर रहा हूँ और फिर मुझे शाइर का यह शेर याद आ जाता है कि-

हर के बाशी व हर जा बेरसी।

आख़रीन मन्ज़िले हस्ति ईन अस्त।।

3-तजुर्बे

अज़ीजों ज़िन्दगी तजुर्बों का ही नाम है, तजर्बे इंसान की ग़लतीयो की इस्लाह करते हैं और इंसान को ज़िन्दगी बसर करने के बेहतरीन तरीक़े सिखाते हैं। तजर्बे, हर तरह की शको तरदीद को दूर कर के इंसान के सामने ज़िन्दगी की हक़ीक़त को आशकार कर देते हैं। यही वजह है कि कुछ साहिबाने इल्मो फ़हम हज़रात ने अल्लाह से दुबारह ज़िन्दगी की भीख माँगी है।

लेकिन यह उम्र मुजद्दद, सिर्फ़ ख़वाबो ख़याल है। जब इंसान पुख़्ता हो जाता है और जब वह अपनी उम्र की आख़री मन्ज़िल में होती है तो उसकी वही कौफ़ियत होती है जो इस नुक्ता दाँ शाइर ने कहा कि-

अफ़सोस के सौदा-ए- मन सौख़ता-ए-, ख़ाम अस्त।

ता पुख़्ता शवद ख़ामी-ए- मन, उम्र तमाम अस्त।।

हमें दूसरा रास्ता तय करना चाहिए वह रास्ता जो हमारे मौला व मुक़्तदा हज़रत अली अलैहिस्सलाम ने हमें बताया है और उम्र मुजद्दद की मुश्किल को हमारे लिए बेहतरीन तरीक़े से हल कर दिया है। आपने अपने फ़रज़न्दे अरजुमन्द हज़रत इमाम हसने मुजतबा अलैहिस्सलाम से फ़रमाया कि “ऐ बेटे मैंने गुज़िश्ता लोगों की तारीख़ पर ग़ौरो फ़िक्र किया, उनके अहवाल से आगाही हासिल की, उनके बे शुमार तजर्बों से फ़ायदा उठाया और इस नज़र से मैंने उनकी हज़ारों साल की उम्र को अपनी उम्र में इस तरह ज़मीमा कर लिया कि जैसे इंसान की ख़िलक़त के पहले दिन से आज तक मैंने उन्हीं के साथ ज़िन्दगी बसर की हो। मैं उनकी ज़िन्दगी का

शीरनी और तल्ख़ीयों से, उनकी कामयाबी के अवामिल और शिकस्त के असबाब से आगाह हो गया हूँ।" [९]

अज़ीज़म मैं तुम को ताकीद करता हूँ कि क़ुरआने करीम ने अम्बियाए सलफ़ और गुज़िश्ता उम्मतों के जो हालात तारीख़ के दामन से बयान किये हैं उनको बहुत ज़्यादा अहमियत दो क्योँ कि उन में वह अज़ीम हक़ाइक़ छुपे हुए हैं जो रहबरान व सालिकाने तरीक़े इला अल्लाह का अज़ीम सरमाया माने जाते हैं। लेकिन कुछ लोग बहुत ज़िद्दी और बद सलीक़ा होते हैं वह हर चीज़ का ख़ुद तजर्बा करना चाहते हैं पता नही वह दूसरों के तजर्बों को क्योँ क़बूल नही करते जबकि वह इस हालत में अपनी तमाम उम्र के तजर्बों से चन्द सतरें या चन्द सफ़हे ही दूसरों की तरफ़ मुन्तक़िल करते हैं। इस तरह के ग़ाफ़िल लोग अभी चन्द तजर्बे भी नही कर पाते कि उनकी उम्र तमाम हो जाती है और वह इस दुनिया को अल विदा कह देते हैं।

अज़ीज़म तुम यह अमल अंजाम न देना ,बल्कि साहिबाने अक़्ल की रविश पर चलना, जिन के बारे में क़ुरआने करीम फ़रमाता है कि "लक़द काना फ़ी क़िससे हिम इबरतुन लि उलिल अलबाबि।" [१०] (उनके क़िस्सों में साहिबाने अक़्लो फ़हम

के लिए इबरतें हैं।) लिहाज़ा गुज़िश्ता लोगों की ज़िन्दगीयों के बारे में ग़ौरो फ़िक्र कर के उनसे इबरत हासिल करो।

मख़सूसन गुज़िश्ता उलमा, साहिबाने इल्मो अदब, साहिबाने तक़वा, सालिकाने राहे ख़ुदा की ज़िन्दगी के हालात को ज़रूर पढ़ो उनमें बहुत से नुक्तें पौशीदा हैं और हर नुक्ता एक गौहरे गराँ बहा की हैसियत रखता है। मैंने उनकी ज़िन्दगी के मुताले से हमेशा बहुत अहम तजर्बों को हासिल किया है।

4-ग़लतियों का इज़ाला

इस के बाद इस बात की मंज़िल है कि हम यह जानें कि मासूम के अलावा तमाम इंसान ख़ाती हैं और उनसे बहुत सी ग़लतियाँ सर ज़द होती हैं।

इस मंज़िल पर अहम बात यह है कि इंसान अपनी ग़लतियों की इस्लाह के बारे में भी ग़ौर करे, ग़लतियों व गुनाहों की तकरार न करे, तास्सुब और ज़िद को छोड़े,

ख़ुद अपने गुनाहों से चश्म पोशी करने और अपने बारे में हुस्ने ज़न रखने को एक बड़ी ग़लती तसव्वुर करे।

शैतान जो कि एक बड़े गुनाह का मुरतकिब हुआ, जिसने अल्लाह की हिकमत पर एतराज़ किया, हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को सजदे के हुक्म को ग़ैरे हकीमाना माना, जो सरकशी की आख़री मंज़िलों को भी अबूर कर गया, अगर वह भी अपनी अक़्ल के सामने से तास्सुब व ज़िद के पर्दों को हटा कर किब्रो ग़ुरूर को छोड़ देता तो उस के लिए भी तौबा का दरवाज़ा खुला हुआ था। लेकिन उसकी ज़िद्द व ग़रूर तौबा की राह मे माने क़रार पाये नतीजा यह हुआ कि आज तमाम गुनाहगारों के गुनाह में शरीक रहता है और सब के गुनाहों के बार को अपने दोश पर उठाये फिरता है, उस बार को जिसको उठाने की किसी में भी ताक़त नही है।

इसी वजह से हमारे मौला अमीरुल मोमेनीन हज़रत अली अलैहिस्सलाम ने ख़ुत्ब-ए-क़ासिया में उसको "फ़अदुवु अल्लाहि इमामुल मुतास्सेबीन व सलाफ़ुल मुस्तकबरीन" [११] अल्लाह का दुश्मन, मुतास्सिब लोगों का इमाम,तकब्बुर करने वालों का पेशवा कहा है। और आपने नसीहत भी फ़रमाई है कि उसके हालात से सब को इबरत हासिल करनी चाहिए कि उसने थोड़ी देर की ज़िद्द और तकब्बुर के

ज़रिये अपनी हज़ारों साल की इबादत को इस तरह ख़ाक में मिला दिया, कि उसको बज़्में मलाएका से निकाल कर असफ़ालु अस्साफ़ेलीन में में डाल दिया गया।

ऐ अज़ीज़म अगर तुम से कोई ग़लती या गुनाह सरज़द हो जाये, तो अल्लाह की बारगाह में शुजाअत के साथ उसका इक़रार करो और साफ़ साफ़ कहो कि ऐ अल्लाह मुझ से ख़ता हुई है इसको बख़्श दे, मेरे उज़्र को क़बूल कर ले और मुझे हवाए नफ़्स व शैतान के जाल से रिहाई दे, माबूद तू तो अरहमुर्राहीमीन और ग़फ़्फ़ारज़ ज़नूब है।

इस तरह ग़लती के इक़रार और माफ़ी की इलतजा जहाँ तुम को सुकून हासिल होगा वहीँ तुम्हारे लिए इस्लाह और कुर्बे ख़ुदा का रास्ता भी हमवार हो जायेगा। इस के बाद ग़लतीयों के इज़ाले और अपनी इस्लाह के लिए कोशिश करो, और यह भी जान लो कि इस काम से इंसान का मक़ाम तनज़्ज़ुली नही आती बल्कि इसके बर अक्स इंसान का मक़ाम और बढ़ जाता है।

अल्लाह से क़ुर्ब का रास्ता वह रास्ता है जिसमें तकब्बुर और ज़िद्द की कोई गुंजाइश नही है, ऐसे बहुत से लोग लोग मौजूद हैं जो इस राह पर चलने में दूसरों से सबक़त हासिल कर सकते थे लेकिन इन्हीँ अख़लाक़ी बुराईयों (ज़िद्द व ग़ुरूर)

की वजह से इस राह पर नही चल सके और गुमराही में मुबतला हो गये। यही नही कि तकब्बुर और ज़िद इंसान की ख़ुद साज़ी की राह के असली मानें(रुकावटें) हैं बल्कि यह इंसान को समाजी, सियासी और इल्मी कामयाबी के मैदान में भी आगे नही बढ़ने देते। ऐसे लोग हमेशा ख़यालात की दुनिया में रहते हैं यहाँ तक की उनको इसी हालत में मौत आ जाती है। अजीब बात यह है कि इस तरह के लोग अपनी नाकामी और शिकस्त के असबाब को हमेशा बाहर तलाश करते हैं जबकि इनकी नाकामी और बदनसीबी का असली सबब ख़ुद उन्हीँ के वुजूद में छुपा होता है, और यह उनकी बद बख़ती को और बढ़ा देता है।

5-हर रोज़ एक नया क़दम उठाना चाहिए

अज़ीज़ो ! किसी भी वुजूद के ज़िंदा होने की सब से आसान और साफ़ निशानी उसका नमुव्व व रुश्द करना है। जब भी उसका नमुव्व रुक जाये समझलो कि उसकी मौत का ज़माना क़रीब आ गया है। और जब भी कोई ज़िन्दा वुजूद इंहेतात (गिरावट) के किनारे पर जा खड़ा हो तो समझलो कि उसकी तदरीजी मौत का

आग़ाज़ हो गया है। और यह क़ानून किसी एक इंसान की मानवी और माद्दी ज़िन्दगी पर ही नही बल्कि पूरे समाज पर लागू है। (इस बात पर ग़ौर करने की ज़रूरत है।)

इस नुक्ते से फ़ायदा उठाते हुए- अगर हम हर रोज़ एक क़दम आगे न बढ़ायें और अज़ नज़रे ईमान, तक़वा, अखलाक़, अदब ,पाकीज़गी व दुरुस्त कारी के मैदान में रुश्दो तकामुल हासिल न करें और हर साल गुज़रे हुए साल पर अफ़सोस करें तो हमें समझ लेना चाहिए कि हमने एक बहुत बड़ा नुक़्सान हुआ है और हम अपनी राह से भटक गये हैं। लिहाज़ा इस हालत में हमें ला परवाही नही बरतनी चाहिए बल्कि संजीदगी के साथ ख़तरे को महसूस करना चाहिए।

अमीरुल मोमेनीन हज़रत अली अलैहिस्सलाम ने इस बारे में कितना अच्छा जुमला बयान फ़रमाया है, एक मशहूर रिवायत में है कि आपने फ़रमाया “मन इस्तवा यौमाहु फ़हुवा मग़बून” [१२] यानी जिसके दो दिन एक से हो गये हो ग़ब्न हो गया(क्यों कि उसने ज़िन्दगी के सरमाये को तो अपने हाथ से गवाँ दिया मगर कोई तिजारत नही की नतीजा में हसरत और रंज के अलावा उसे कुछ भी नही मिला।) “व मन काना फ़ी नक़सिन फ़ल मौतु ख़ैरुन लहु।” [१३] यानी जो नुक़्सान की मंज़िल में चला गया उसके लिए तो मौत ही बेहतर है(क्योँ कि कम से कम

इंसान नुक़्सान से ही बचा रहे, इस लिए कि नुक़्सान से बचा रहना भी एक बहुत बड़ी नेअमत है।)

आरिफ़ाने ख़ुदा और सालिकाने राहे ख़ुदा हर सालिक के लिए हर रोज़ सुबह के वक़्त "मुशारेते" पूरे दिन "मुहासेबे" और फिर शाम को "मुआक़िबे" को जो ज़रूरी मानते हैं तो वह इस लिए है ताकि राहरवाने राहे हक़ ग़ाफ़िल न होने पाये और अगर कहीँ पर कोई ऐब या नक़्स वाकेअ हो तो उसका इज़ला कर सकें। और इस तरीक़े से हर रोज़ अपने चेहरे को अनवारे इलाहिय्या का उफ़ुक़ क़रार दे और जन्नती अफ़राद की तरह सुबह शाम अल्लाह के लुत्फ़ शाहिद बनें। "व लहुम रिज़्क़ु हुम फ़ीहा बुकरतन व अशीय्यन "[१४] यानी उनके लिए जन्नत में सुबह शाम रिज़्क़ है।

लिहाज़ा ऐ अज़ीज़म अपने हाल से ग़ाफ़िल न रहो ताकि ज़िन्दगी की तिजारत में उम्र के बेतरीन सरमाये को बलन्दतरीन अर्ज़िशों से बदला जा सके। और "इन्नल इंसाना लफ़ी ख़ुसरिन" (जान लो कि तमाम इंसान घाटे में है।) का मिसदाक़ न बनो। और यह तिजारत तो वह है जिस में हर इंसान एक बड़ा नफ़ा हासिल कर सकता है। अपने नफ़्स के मुहासबे से ग़ाफ़िल न रहो और इस से पहले

कि तुम से तुम्हारे आमाल का हिसाब लिया जाये हर रोज़ व हर माह अपने आमाल का हिसाब करते रहो।

हवाले

[1] सूरए इंशेक़ाक़ आयत न. ६

[2]सूरए नूर आयत न.३९

[3] सूरए आलि इमरान आयत न. १८५

[4] बिहार उल अनवार जिल्द ८ पेज न.१९१ हदीस १६४

[5] बिहारुल अनवार जिल्द ७६ पेज न. ४०२ हदीस न. २३ क़ौले अमीरूल मोमेनीन हज़रत अली अलैहिस्सलाम।

[6] सूरए आलि इमरान आयत न. १८५

[7] नहजुल बलाग़ा ख़ुत्बा न. १८८

[8] सूरए अनकबूत आयत न. ६४

[9] नहजुल बलाग़ा नामा न. ३१ वसीयत बे इमामे हसन मुजतबा अलैहिस्सलाम।

[10]सूरए यूसुफ़ आयत न. १११

[11] नहजुल बलाग़ा ख़ुत्बा न.१९२

[12] बिहारुल अनवार जिल्द ६८ पेज न.१७३ हदीस न. ५

[13] बिहारुल अनवार जिल्द न. ६७ पेज न. ६४ हदीस न. ३

[14] सूरए मरयम आयत न. ६२

6-लोगों के रंग में रंगा जाना रुसवाई है

अक्सर ऐसा होता है कि इंसान किसी इस्लामी या ग़ैरे इस्लामी मुल्क में शरीयत के क़ानून की पाबन्दी न करने वाले किसी गिरोह में फँस जाता है और इस गिरोह के अफ़राद उसे अपने रंग में रंगना चाहते हैं। बस शैतानी और नफ़्सी वसवसे यहीँ से शुरू होते हैं जैसे यह कि इनके रंग में रगें जाने के अलावा और कोई रास्ता ही नही है, और इस काम को करने के लिए बहुत से फज़ूल बहाने घढ़ लेता है।

इंसान के अखलाक़ी रुश्द, शख़्सियत के इस्तक़लाल और ईमान की पुख़्तगी का इल्म ऐसे ही माहोल में होता है। वह अफ़राद जो तिनको की तरह हवा के रुख़ पर उड़ते हैं बुराईयों में ग़र्क़ हो जाते हैं इस तरह के अफ़राद बुरे लोगों के रंग में रगें जाने को ही रुसवाई से बचने का ज़रिया समझते हैं। ऐसे लोग बे अहमियत होते हैं उनके शक्लो सूरत तो आदमीयों वाले होते हैं मगर उनमें जोहरे आदमीयत नही पाया जाता।

लेकिन अज़ीज़म अगर तुम ऐसे माहोल में जाना तो अपनी अहमियत का मुज़ाहिरा करना अपने ईमान की क़ुदरत, तक़वे की ताक़त और शख़्सियत के इस्तक़लाल को ज़ाहिर करना और अपने आप से कहना कि “दूसरों के रंग में रगें जाना ही रुसवाई है।”

अम्बिया, औलिया और उनकी राह पर चलने वाले अफ़राद अपने अपने ज़मानों में इसी मुशकिल से रू बरू थे। लेकिन उन्होने सब्रो इस्तेक़ामत के ज़रिये न सिर्फ़ यह कि उनके रंग को क़बूल नही किया बल्कि सब को अपने रंग में रंग कर पूरे माहौल को ही बदल दिया।

अपने आप को माहोल के मुताबिक़ ढाल लेना और दूसरों के रंग में रगाँ जाना कमज़ोर इरादा लोगों का काम है, लेकिन माहोल को बदल कर उसको एक नया मुसबत रंग दे देना ताक़तवर और शुजा मोमिनों का काम है।

पहला गिरोह (दूसरों के रंग में रगँ जाने वाला) अँधी तक़लीद करता है और नारा लगाता है कि " इन्ना वजदना आबाअना अला उम्मतिन व इन्ना अला आसारि हिम मुक़तदूना "[१](हमने अपने बाप दादा को एक तरीक़े पर पाया और हम यक़ीनन उनके क़दम ब क़दम चल रहे हैं।) लेकिन दूसरे गिरोह के अफ़राद तदब्बुर व तफ़क्कुर कर के अच्छाई का इंतख़ाब करते है। इन लोगों का नारा है कि " ला तजिदु क़ौमन युमिनूना बिल्लाहि व अलयौमिल आख़िरि युवाद्दूना मन हाद्दा अल्लाह व रसूलहु व लव कानू आबा अहुम अव अबना आहुम व अशीरता हुम उलाइका कतबा फ़ी क़ुलूबिहिम अलईमान व अय्यदा हुम बिरुहिन मिन्हु" [२] (जो लोग ख़ुदा और रोज़े आख़ेरत पर ईमान रखते हैं तुम उनको ख़ुदा और उसके रसूल के दुश्मनों से दोस्ती करते हुए नही देख़ोगो, अगरचे वह उनके बाप या बेटे या भाई या ख़ानदान वाले ही क्योँ न हो, यही वह लोग हैं जिनके दिलों में अल्लाह ने ईमान को साबित कर दिया है और रूह के ज़रिये उनकी ताईद की है।) हाँ रुहुल क़ुद्स उनकी मदद के लिए आता है, अल्लाह के फ़रिश्ते उनकी हिफ़ाज़त करते हैं, उनकी हिम्मत बढ़ाते हैं और उनको डटे रहने के लिए तशवीक़ करते है।

ऐ अज़ीज़म अगर कभी ऐसे माहोल में रहने पर मजबूर हुए तो अपने आप को अल्लाह के हवाले कर देना, उसकी ज़ात पाक पर तवक्कुल रखना, ख़बासतों (बुराईयों) की कसरत से न घबराना और इस आज़माइश से कामयाबी के साथ गुज़रजाना ताकि अल्लाह की बरकतों से फ़ैज़याब हो सको और कहना कि " क़ुल ला यस्तवा अलख़बीसो व अत्तय्यिबु व लव आजबका कस्रतुल ख़बीसि फ़अत्तक़ु अल्लाहा या उलिल अलबाबा लअल्लाकुम तुफ़लिहूना "[३](ऐ रसूल कह दो कि पाक और नापाक बराबर नही हो सकता चाहे नापाकों की कसरत तुम को ताज्जुब में ही क्योँ न डाल दे, तो ऐ साहिबाने अक़्ल अल्लाह से डरते रहो ताकि कामयाब हो सको।) पाक और नापाक एक जैसे नही हैं जब भी तुम्हें नापाक लोगों की कसरत ताज्जुब में डाले तो ऐ साहिबाने अक़्ल तुम तक़वाए ईलाही को इख़्तियार करना ता कि कामयाब हो सके।

अल्लाह की तरफ़ से होने वाली यह आज़माइश आज के ज़माने में बहुत अहम है ख़ास तौर पर जवानों के लिए, क्योँ कि जवान अफ़राद वह हैं जो इस अज़ीम इम्तेहान में कामयाबी हासिल कर के, फ़रिश्तगाने रहमत के परों पर सवार हो कर आसमाने क़ुर्बे ख़ुदा की बुलन्दियों पर परवाज़ कर सकते हैं।

7-अपनी खोई हुई असल चीज़ की जुस्तुजू करो

जब इंसान अपने दिल में झाँक कर देखता है तो महसूस करता है कि उसकी कोई चीज़ खोई हुई है जिसकी उसे तलाश है, और चूँकि वह अपनी खोई हुई चीज़ के बारे मे सही से नही जानता इस लिए उसको हर जगह और हर चीज़ में तलाश करने की कोशिश करता है।

वह कभी तो यह सोचता है कि मेरी खोई हुई असली चीज़ मालो दौलत है, लिहाज़ा अगर इसको जमा कर लिया जाये तो दुनिया का सब से ख़ुश क़िस्मत इंसान बन जाउँगा। लोकिन जब वह एक बड़ी तादाद में दौलत जमा कर लेता है तो एक रोज़ इस तरफ़ मुतवज्जेह होता है कि लालची लोगों की निगाहें, चापलूस लोगों की ज़बानें, चोरों के संगीन जाल और हासिद लोगों की ज़ख़्मी कर देने वाली ज़बानें उसकी ताक में हैं।और कभी कभी तो ऐसा होता है कि उस माल की हिफ़ाज़ उस को हासिल करने से ज़्यादा मुश्किल हो जाती है जिस से इज़तराब में इज़ाफ़ा हो जाता है। तब वह समझता है कि मैनें ग़लती की है, मेरी खोई हुई असली चीज़ मालो दौलत नही है।

कभी वह यह सोचता है कि अगर एक ख़ूबसूरत और माल दार बीवी मिल जाये तो मेरी ख़ुशहाली में कोई कमी बाक़ी नही रहेगी। लेकिन उस को हासिल कर ने के बाद जब उसके सामने उसकी हिफ़ाज़त, और ला महदूद तमन्नाओं को पूरा करने का मसला आता है तो उस की आँख़े खुल रह जाती हैं और वह समझता है कि उसने जो सोचा था वह तो सिर्फ़ एक ख़वाब था।

शोहरत व मक़ाम, का मंज़र इन सबसे ज़्यादा लुभावना है इनके ज़रिये खुश हाल बनने का ख़्याल कुछ ज़्यादा ही पाया जाता है जबकि हक़ीक़त यह है कि मक़ाम हासिल करने के बाद उसकी मुश्किलात, सर दर्दीयों ,ज़िम्मेदारियोँ में (चाहें वह इंसानों के लिए जवाब देह हो या अल्लाह के सामने) इज़ाफ़ा हो जाता है।

पाको पाकीज़ा आलिमे दीन मरहूम आयतुल्लाहि अल उज़मा बरूजर्दी जो कि जहाने तशय्यु के मरजाए अलल इतलाक़ और अपने ज़माने के बे नज़ीर आलम थे जब उन्होंने मक़ामो शोहरत की मुशकिलों को महसूस किया तो फ़रमाया कि “ अगर कोई रिज़ायत खुदा के लिए नही, बल्कि हवाए नफ़्स की ख़ातिर इस मक़ामों मंज़िल को हासिल करने की कोशिश करे जिस पर मैं हूँ तो उसके कम अक़्ल होने के बारे में शक न करना। ”

यह तमाम मक़ामात सराब की तरह हैं जब इंसान इन तक पहुँचता है तो न सिर्फ़ यह कि, उसकी प्यास नही बुझती बल्कि वह इस ज़िन्दगी के बयाबान में और ज़्यादा प्यासा भटकने लगता है। क़ुरआने करीम इस बारे में क्या ख़ूब बयान फ़रमाता है "कसराबिन बक़ीअतिन यहसबुहु अज़्ज़मानु माअन हत्ता इज़ा जाअहु लम यजिदहु शैयन..... "[४](वह सराब की तरह है कि प्यासा उसको दूर से तो पानी ख़याल करता है लेकिन जब उसके क़रीब पहुँचता है तो कुछ भी नही पाता)

क्या यह बात मुमकिन है कि हिकमते ख़िल्क़त के तहत तो इंसान के वुजूद में किसी चीज़ के गुम होने के एहसास को तो रख दिया गया हो, लेकिन उस गुम हुई चीज़ के मिलने कोई ठिकाना न हो ? बे शक प्यास पानी के वजूद के बग़ैर अल्लाह की हिकमत में ठीक उसी तरह ग़ैर मुमकिन है जिस तरह प्यास के बग़ैर पानी का वुजूद बे माअना है !

मगर होशियार इंसान आहिस्ता आहिस्ता समझ जाते हैं कि उनकी वह खोई हुई चीज़ जिसकी तलाश में वह चारो तरफ भटक रहे हैं और नही मिल रही है वह तो हमेशा से उनके साथ है, उनके पूरे वजूद पर छायी हुई है और उनकी रगे गर्दन से

भी ज़्यादा क़रीब है। बस उन्होंने कभी उसकी तरफ़ तवज्जोह नही दी है। “ व नहनु अक़रबु इलैहि मिन हबलिल वरीदि ”[५]

हाफ़िज़ शीराज़ी ने क्या खूब कहा है कि -

सालहा दिल तलबे जामे जम अज़ मा मी कर्ज।

आनचे ख़ुद दाश्त अज़ बेगाने तमन्ना मी कर्द।।

गौहरी के अज़ सदफ़े कोनो मकाँ बीरून बूद।

तलब अज़ गुमशुदेगाने लबे दरिया मी कर्द।।

और सादी ने भी क्या खूब कहा है कि-

ईन सुख़न बा के तवान गुफ़्त के दोस्त।

दर किनारे मन व मन महजूरम !

हाँ इंसान की खोई हुई चीज़ हर जगह और हर ज़माने में उसके साथ है लेकिन हिजाब (पर्दे) उसको देखने की इजाज़त नही देते, क्योँ कि इंसान तबीअत के पंजो में जकड़ा हुआ लिहाज़ वह उसे हक़ीक़त जान ने से दूर रखती हैं।

तू के अज़ सराई तबीअत नमा रवी बीरून।

कुजा बे कूई हक़ीक़त गुज़र तवानी कर्द ?!।।

ऐ अज़ीज़म तुम्हारी खोई हुई चीज़ तुम्हारे पास है , बस अपने सामने से हिजाब को हटाने की कोशिश करो ताकि दिल के हुस्ने आरा को देख सको, आप की रूहो जान उस से सेराब हो सके, आप अपने तमाम वुजूद में चैनों सकून का एहसास कर सको और ज़मीनों आसमान के तमाम लश्करो को अपने इख़्तियार में पा सको। आप की खोई हुई चीज़ वाक़ेअन वह वुजूद है जिसका परतू यह तमाम आलमे हस्ति है। “ हुवल लज़ी अनज़ला अस्सकीनता फ़ी क़ुलूबि अलमोमेनीना लियज़दादू ईमानन मअ ईमानिहिम व लिल्लाहि जुनूदु अस्समावाति वल अर्ज़ि व काना अल्लाहु अलीमन हकीमन।” [६]

8-वसवसों से मुक़ाबला

अज़ीज़ो ! रूहो रवान के सकून की बात हो रही थी, यह एक ऐसा गोहरे बे बहा है जिसको हासिल करने के लिए ख़लील उल अल्लाह (हज़रत इब्राहीम अ.) कभी आसमाने मलाकूत की तरफ़ देखते थे और कभी ज़मीन पर नज़र करते थे।

“व कज़ालिका नुरिया इब्राहीमा मलाकूता अस्समावाति व अल अर्ज़िव लि यकूना मिन अल मोक़िनीना ”[७] (और इसी तरह हमने इब्राहीम को ज़मीनो आसमान के मलाकूत दिखाए ताकि वह यक़ीन करने वालों में से हो जाये।)

और कभी उन्होंने चार परिन्दों के सरों को काटा और फिर उनका क़ीमा बना कर सबको आपस में मिला दिया ताकि ज़िन्दगीए मुजद्दद और मआद के बारे में मुतमइन हो कर सकूने क़ल्ब हासिल कर सकें। “लियतमाइन्ना क़ल्बी। ”[८] कुछ मुफ़स्सेरीन ने कहा है कि यह चारो परिन्दे वह थे जिनमें से हर एक में इंसान की एक बुरी सिफ़त पायी जाती थी जैसे -(मोर जिसमें ख़ुद नुमाई और ग़ुरूर पाया जाता है, मुर्ग़ जिसमें बहुत ज़्यादा जिन्सी रुझान पाया जाता है, कबूतर जिसमें लहबो लअब पाया जाता है, कोआ जो कि बड़ी बड़ी आरज़ुऐं रखता है।)

अब सवाल यह है कि सकून के इस गोहरे गरान बहा को कैसे हासिल किया जाये ?और इस को किस समुन्द्र में तलाश किया जाये ?

आप की ख़िदमत में अर्ज़ करता हूँ कि इसको हासिल करना बहुत आसान भी है और बहुत मुश्किल भी और इस बात को आप इस मिसाल के ज़रिये आसानी के साथ समझ सकते हैं।

क्या आप ने कभी ऐसे वक़्त हवाई जहाज़ का सफ़र किया है जब आसमान पर घटा छाई हो ? ऐसे में हवाई जहाज़ तदरीजन ऊपर की तरफ़ उड़ता हुआ आहिस्ता आहिस्ता बादलों से गुज़र कर जब उपर पहुँच जाता है, तो वहाँ पर आफताबे आलम ताब अपने पुर शिकोह चेहरे के साथ चमकता रहता है और सब जगह रौशनी फैली होती है। इस मक़ाम पर पूरे साल कभी भी काले बादल नही छाते और सूरज अपनी पूरी आबो ताब के साथ चमकता रहता है क्योँ कि यह मक़ाम बादलों से ऊपर है।

ख़लिक़े जहान की मुक़द्दस ज़ात, आफ़ताबे आलम ताब की तरह है जो हर जगह पर नूर की बारिश करती है और हिजाब, बादलो की तरह है जो जमाले हक़

को देखने की राह में मानेअ हो जाते हैं। यह हिजाब कोई दूसरी चीज़ नही है बल्कि हमारे बुरे आमाल और हमारी तमन्नाऐं ही हैं।

इमामे आरेफ़ान हज़रत अली अलैहिस्सलाम ने क्या ख़ूब फ़रमाया है “इन्नका ला तहतजिब व मिन ख़लक़िका इल्ला अन तहजुबाहुमु अलआमालु दूनका ”[९]

यह हिजाब वह शयातीन हैं जिन्हों ने हमारे आमाल की वजह से हमारे अन्दर नफ़ूज़(घुस) कर के हमारे दिल के चारों तरफ़ से घेर लिया है। जैसा हदीस में भी आया है कि “लव ला अन्ना शयातीना यहूमूना अला क़लूबि बनी आदम लनज़रु इला मलकूति अस्समावात ” यानी अगर शयातीन बनी आदम के दिलों का आहाता न करते तो वह आसमान के मलाकूत को देखा करते।

यह हिजाबात वह बुत हैं जिन को हम नें हवाओ हवस के चक्कर में ख़ुद अपने हाथों से बना कर अपने दिलों में बैठाया है। बुज़ुर्गों का क़ौल है कि “कुल्लु मा शग़लका अनि अल्लाह फ़हुवा सनमुक ” जो चीज़ तुमको अपने में मशग़ूल कर के ख़ुदा से ग़ाफ़िल कर दे वही तुम्हारा बुत है।

बुत साख़तीम दर दिल व ख़न्दीदीम।

बर कीशे बद ब्रह्मण व बौद्धा रा ।।

ऐ अज़ीज़म इब्राहीम की तरह ईमानो तक़वे का तबर लेकर उठो और इन बुतों को तोड़ डालो ताकि आसमानों के मलाकूत को देख सको और मोक़ेनीन में क़रार पा सको जिस तरह जनाबे इब्राहीम (अ.) मोक़ेनीन में हो गये।

"...व लि यकूना मिनल मोक़िनीन "[१०]

हवा व हवस के ग़ुबार ने हमारी रूह को तीरह व तार कर दिया है जो कि बातिन को देखने की राह में हमारी आँख़ों के सामने हायल है। लिहाज़ा हिम्मत कर के उठो और इस ग़ुबार को साफ़ करो ताकि नज़र की तवानाई बढ़े।

यह ताज्जुब की बात है कि अल्लाह तो हम से बहुत नज़दीक है ; लेकिन हम उस से दूर हैं, आख़िर ऐसा क्योँ ? जब वह हमारे पास है फिर हम उस से जुदा क्यों हैं ? क्या यह बिल कुल ऐसा ही नही है कि हमारा दोस्त हमारे घर में बैठा है और हम उसे पूरे जहान में ढूँढ रहे हैं।

और यह हमारा सब से बड़ा दर्द, मुश्किल और बद क़िस्मती है जब कि इसके इलाज का तरीक़ा मौजूद है।

हवाले

[१] सूरए ज़ुख़रुफ़ आयत न. २३

[2] सूरए मुजादिलह आयत न. २२

[3] सूरए मायदा आयत न. १००

[4] सूरए नूर आयत न. ३९

[5] सूरए क़ाफ़ आयत न. १६

[6] सूरए फ़त्ह आयत न. ४

[7] अनआम आयत न. ७५

[8] सूरए बक़रा आयत न. २६०

[9] दुआए अबि हम्ज़ाए समाली

[10] सूरए अनआम आयत न. ७५

9- हिजाबे आज़म

इँसान का वह मुहिम तरीन हिजाब क्या है जो लिक़ाउल्लाह की राह में माने है ?

यह बात यक़ीन के साथ कही जा सकती है कि ख़ुद ख़वाही (फ़क़त अपने आप को चाहना), ख़ुद बरतर बीनी(अपने आप को दूसरों से बेहतर समझना),व ख़ुद महवरी से बदतर कोई हिजाब नही है। इल्में अख़लाक़ के कुछ बुज़ुर्ग उलमा का कहना है कि सालिकाने राहे ख़ुदा के लिए “अनानियत ” सब से बड़ा मानेअ है। और लिक़ाउल्लाह की की मन्ज़िल तक पहुँचने के लिए इस “अनानियत ” को कुचलना बहुत ज़रूरी है लेकिन यह काम आसान नही है क्यों कि यह एक तरह से अपने आप से जुदा होना है।

हाफ़िज़ ने क्या ख़ूब कहा है

तू ख़ुद हिजाबे ख़ुदी , हाफ़िज़ अज़ मयान बर ख़ेज़।

लेकिन यह काम मश्क़, ख़ुद साज़ी , हक़ से मददमाँग ने और औलिया अल्लाह से तवस्सुल के ज़रिये आसान हो सकता है। हाँ यह बात क़ाबिले ग़ौर है कि अल्लाह की मुहब्बत का यह ताज़ा लगाया हुआ पोधा उस वक़्त तक नही फूल फल सकेगा जब तक दिल की सर ज़मीन से ग़ैरे ख़ुदा की मुहब्बत के सबज़े को जड़ से उखाड़ कर न फ़ेँक दिया जाये।

एक वलीये ख़ुदा की ज़िन्दगी के हालात में मिलता है कि अपनी जवानी के दौरान वह नामी गिरामी पहलवानो के ज़ुमरे में आते थे एक दिन यह पेश कश की गई कि इस जवान पहलवान को एक पुराने मशहूरे ज़माना पहलवान के साथ कुश्ती लड़ाई जाये। जब तमाम इँतज़ामात पूरे हो गये और दोनों पहलवान कुश्ती लड़ने के लिए उख़ाड़े में उतर गये तो उस पुराने पहलवान की माँ जवान पहलवान के पास गई और उस के कान में कुछ कह कर पलट गई । उसने कहा था कि ऐ जवान क़राइन से ऐसा लगता है कि तू कामयाब होगा लेकिन तू इस बात पर

राज़ी न हो कि एक ज़माने से हमारी आबरू जो बरक़रार है वह ख़ाक में मिल जाये और हमारी रोज़ी रोटी छिन जाये। यह सुन कर

जवान पहलवान सख़्त कशमकश में मुबतला हो गया एक तरफ़ उसकी अपनी “अनानियत ” व “नामवर शख़्सियतों को शिकस्त देने ” का वलवला दूसरी जानिब उस औरत की बात, आख़िर कार उसने एक फ़ैसला ले ही लिया और अपने फ़ैसले के मुताबिक़ कुश्ती के दौरान एक हस्सास मौक़े पर उसने अपने आप को ढीला छोड़ दिया ताकि उसका हरीफ़ उसको चित कर दे और लोगों की नज़रों में ज़लील होने से बच जाये।

अब ख़ुद उसकी ज़बान से सुनो वह कहता है कि “उसी लम्हे जब मेरी कमर ज़मीन को लगी अचानक मेरी निगाहों के सामने से हिजाबात हट गये और मेरे दिल में हक़ की तजल्लियां नुमायाँ हो गई, और हम को जो कुछ भी दिल की आँखों से देखना चाहिए वह सब मैंनें देखा। ” यह बात सही है “अनानियत ” के बुत को तोड़ देने से तौहीद के आसार नुमायाँ हो जाते हैं।

10- ज़िक्रे ख़ुदा

ऐ अज़ीज़म ! इस राह को तै करने के लिए पहले सबसे पहले लुत्फ़े ख़ुदा को हासिल करने की कोशिश करो और कुरआने करीम के वह पुर माअना अज़कार जो आइम्माए मासूमीन अलैहिम अस्सलाम ने बयान फ़रमाये हैं, उनके वसीले से क़दम बा क़दम अल्लाह की ज़ाते मुक़द्दस से करीब हो, मख़सूसन उन अज़कार के मफ़ाही को अपनी ज़ात में बसा लो जिन में इँसान के फक़्र और अल्लाह की ज़ात से मुकम्मल तौर पर वा बस्ता होने को बयान किया गया है। और हज़रत मूसा (अ.) की तरह अर्ज़ करो कि “रब्बि इन्नी लिमा अनज़लता इलय्या मिन ख़ैरिन फ़क़ीरुन ”[१] पालने वाले मुझ पर उस ख़ैर को नाज़िल कर जिसका मैं नियाज़ मन्द हूँ।

या हज़रत अय्यूब (अ.) की तरह अर्ज़ करो कि-“रब्बि इन्नी मस्सन्नी अज़्ज़रु व अन्ता अर्हमुर राहीमीन ”[२] पालने वाले मैं घाटे में मुबतला हो गया हूँ और तू अरहमर्राहेमीन है।

या हज़रत नूह (अ.) की तरह दरख़्वास्त करो कि----- “रब्बि इन्नी मग़लूबुन फ़न्तसिर ”[३] पालने वाले मैं (दुश्मन व हवाए नफ़्स से) मग़लूब हो गया हूँ मेरी मद फ़रमा।

या हज़रत यूसुफ़ (अ.) की तरह दुआ करो कि- “या फ़ातिरा अस्समावाति वल अर्ज़ि अन्ता वलिय्यी फ़ी अद्दुनिया वल आख़िरति तवफ़्फ़नी मुस्लिमन वल हिक़नी बिस्सालीहीन।[४] ऐ आसमानों ज़मीन के पैदा करने वाले तू दुनिया और आख़ेरत में मेरा वली है मुझे मुसलमान होने की हालत में मौत देना और सालेहीन से मुलहक़ कर देना।

या फिर जनाबे तालूत व उनके साथियों की तरह इलतजा करो कि “ रब्बना अफ़रिग़ अलैना सब्रा व सब्बित अक़्दामना वन सुरना अला क़ौमिल काफ़ीरीना ”[५] पालने वाले हमको सब्र अता कर और हमें साबित क़दम रख और हमें क़ौमे काफ़िर पर फ़तहयाब फ़रमा।

या फिर साहिबाने अक़्ल की तरह अर्ज़ करो कि “रब्बिना इन्नना समिअना मुनादियन युनादी लिल ईमानि अन आमिनु बिरब्बिकुम फ़आमन्ना रब्बना फ़ग़फ़िर लना ज़ुनूबना व कफ़्फ़िर अन्ना सय्यिआतना व तवफ़्फ़ना मअल अबरारि।” [६]

पालने वाले हमने, ईमान की दावत देने वाले तेरे मुनादियों की आवाज़ को सुना और ईमान ले आये, पालने वाले हमारे गुनाहों को बख़्श दे, हमारे गुज़िश्ता गुनाहों को पौशीदा कर दे और हम को नेक लोगों के साथ मौत दे।

इन में से जिस जुमले पर भी ग़ौर किया जाये वही मआरिफ़ व नूरे इलाही का एक दरिया है, हर जुमला इस आलमे हस्ति के मबदा से मुहब्बतो इश्क़ की हिकायत कर रहा है। वह इश्क़ो मुहब्बत जिसने इंसान को हर ज़माने में अल्लाह से नज़दीक किया है।

मासूमीन अलैहिमुस्सलाम के अज़कार , ज़ियारते आशूरा,ज़ियारते आले यासीन, दुआ-ए- सबाह, दुआ-ए- नुदबा, दुआ-ए- कुमैल वग़ैरह से मदद हासिल करो, यहाँ तक कि दुआ-ए अरफ़ा के जुमलात को अपनी नमाज़ों में पढ़ सकते हो। नमाज़े शब को हर गिज़ फ़रामोश न करो चाहे उसके मुस्तहब्बात के बग़ैर ही पढ़ो क्योँ कि यह वह किमया-ए बुज़ुर्ग और अक्सीरे अज़ीम है जिसके बग़ैर कोई भी मक़ाम हासिल नही किया जा सकता और जहाँ तक मुमकिन हो ख़ल्क़े ख़ुदा की मदद करो (चाहे जिस तरीक़े से भी हो) कि यह रूह की परवरिश और मानवी मक़ामात की बलन्दी पर पहुँच ने में बहुत मोस्सिर है।

इन दुआओं के लिए अपने दिल को आमादा कर के अपने हाथों को उस मबदा-ए-फ़य्याज़ की बारगाह में दराज़ करो क्योँ कि उसकी याद के बग़ैर हर दिल मुरदा और बे जान है।

इसके बाद तय्यबो ताहिर अफ़राद (पैग़म्बरान व आइम्मा-ए-मासूमीन अलैहिमुस्सलाम) और इनकी राह पर चलने वाले अफ़राद यानी बुज़ुर्ग उलमा व आरेफ़ान बिल्लाह के दामन से मुतमस्सिक हो जाओ और उन के हालात पर ग़ौर करो इस से मुहाकात (बाहमी बात चीत) की बिना पर उनके बातिनी नूर का परतू तुम्हारे दिल में भी चमकने लगेगा और इस तरह तुम भी उनकी राह पर गाम ज़न हो जाओ गे।

बुज़ुर्गों की तारीख़ पर ग़ौर करना, ख़ुद उनके साथ बैठने और बात चीत करने के मुतरादिफ़ है। इसी तरह बुरे लोगों की ज़िदन्गी की तारीख़ का मुतालआ बुरे लोगों के साथ बैठने के मानिन्द है ! इन दोनो बातो में से जहाँ एक के सबब अक़्लो दीन में इज़ाफ़ा होता है वहीँ दूसरी की वजह से बदबख़्ती तारी होती है।

वैसे तो इमाम रिज़ा अलैहिस्सलाम की ज़ियारत के लिए जितने भी सफ़र किये तमाम ही पुर नूर और पुर सफ़ा रहे मगर इन में से एक सफ़र को मैं इस लिए

नही भूल सकता क्योँ कि उस में मुझे फ़ुर्सत के लम्हात कुछ ज़्यादा ही नसीब हुए और मैंने फ़ुर्सत के इन लम्हात में अपने ज़माने के एक आरिफ़े इस्लामी (कि जिनकी ज़ात नुकाते आमुज़न्दह से ममलू है) के हालात का मुतालआ किया तो अचानक मेरे वुजूद में एक ऐसा शोर और इँक़लाब पैदा हुआ जो इस से पहले कभी भी महसूस नही हुआ था। मैंने अपने आपको एक नई दुनिया में महसूस किया ऐसी दुनिया में जहाँ की हर चीज़ इलाही रँग मे रँगी हुई थी मैं इश्क़े इलाही के अलावा किसी भी चीज़ के बारे में नही सोच रहा था और मामूली सी तवज्जोह और तवस्सुल से आँखों से अश्को का दरिया जारी हो रहा था।

लेकिन अफ़सोस कि यह हालत चन्द हफ़्तो के बाद जारी न रह सकी है, जैसे ही हालात बदले वह मानमवी जज़बा बी बदल गया, काश के वह हालात पायदार होते उस हालत का एक लम्हा भी एक पूरे जहान से ज़्यादा अहमियत रखता था !

और आख़री बात राह के आख़री मानेअ के बारे में है !

रहरवाने राहे ख़ुदा के सामने सबसे मुश्किल काम “इख़लास ” है और इस राह में सबसे ख़तरनाक मानेअ शिर्क में आलूदगी और “रिया” हैं।

यह मशहूर हदीस तमाम रहरवाने राहे ख़ुदा की कमर को लरज़ा देती है कि “ इन्ना अश्शिर्का अख़फ़ा मिन दबीबि अन्नमलि अला सफ़वानतिन सवदा फ़ी लैलति ज़लमाइन ”[७]

और एक हदीस यह भी है कि “ हलका अलआमिलूना इल्ला अलआबिदूना व हलका अलआबिदूना इल्ला अलआलिमूना.....व हलका अस्सादिक़ूना इल्ला अलमुख़लीसूना...व इन्ना अलमोक़िनीना लअला ख़तरिन अज़ीमिन ”[८] यह हदीस इँसान को सख़्त परेशानी और फ़िक्र में डाल देती हैक्योँ कि यह तो उलमा-ए आमेलीन को भी हलाक होने वालों के ज़ुमरे में शुमार करती है और मुख़लेसीन को भी अज़ीम ख़तरे में गरदानती है।

लेकिन अल्लाह की आमों ख़ास रहमत से तमस्सुक उदास दिलों को जिला बख़्श कर एक नई हयात अता करता है। ख़ुदा वन्दे आलम का फ़रमान है कि “ इन्नहु ला यय्असु मिन रवहि अल्लाहि इल्ला अल क़ौमु अलकाफ़िरूना ”[९](काफ़िरों के अलावा कोई रहमते ख़ुदा से मायूस नही होता।)

हाँ यह इख़लास ही है जो इनफ़ाक़ (अल्लाह की राह में ख़र्च करना) के बदले को सत्तर गुणा या इस से भी ज़्यादा कर देता है और बा बरकत ख़ोशे (बालिया)

इख़लास के पानी से ही परवान चढ़ती हैं। “फ़ी कुल्लि सुम्बुलतिन मिअतु हब्बातिन ” [१०] (हर बालि में सौ सौ दाने)

बाराने इख़लास जब दिल की सर ज़मीन पर बरसती है तो ईमानो यक़ीन के मेवों को दुगना कर देती है। “असाबहा वाबिलुन फ़आतत उकुलहा ज़ेफ़ैनि ”[११]

लेकिन इख़्लास पैदा करना बहुत मुश्किल काम है, अगरचे राहे इख़्लास रौशन है मगर फिर भी इस को तै करना बहुत दुशवार है।

जैसे जैसे अल्लाह के सिफ़ाते जमालियह व जलालियह और इल्म व क़ुदरत की मारेफ़त बढ़ती जायेगी हमारा इख़्लास भी ज्यादा हो जायेगा।

अगर हम यह जान लें कि इज़्ज़त ,ज़िल्लत उसके हाथ में है और तमाम नेकियों की कुँजियाँ उसकी मुठ्ठी में है “क़ुल अल्लाहुम्मा मालिकल मुल्कि तुतिल मुल्का मन तशाउ व तनज़उल मुल्का मिम मन तशाउ वतुज़िल्लु मन तशाउ व तुज़िल्लु मन तशाउ बियदिकल ख़ैरि इन्नका अला कुल्लि शैइन क़दीरुन ”[१२] (कहो कि ऐ अल्लाह!ऐ हुकुमतों के मालिक!तू जिसको चाहता है हुकूमत अता करता है और जिस से चाहता है हुकूमत छीन लेता है, जिसको चाहता है इज़्ज़त देता है

और जिसको चाहता है रुसवा कर देता है, तमाम नेकियाँ तेरे हाथ में हैं और तू हर चीज़ पर क़ादिर है।)

इसके बाद शिर्को रिया, ग़ैरे ख़ुदा के लिए अमल, और इज़्ज़त को उसके ग़ैर से हासिल करने की कोई गुँजाइश ही बाक़ी नही रह जाती।

जब हम यह समझ लेंगे कि जब तक उसकी मशियत और इरादा न हो कोई काम नही हो सकता। " व मा तशाऊना इल्ला अन यशा अल्लाह "[१३] तो फिर उसके अलावा किसी दूसरे से उम्मीद नही रखेंगे।

और जब यह समझ जायेंगे कि वह हमारे ज़ाहिर और बातिन से आगाह है "यअलमु ख़इनतल आयुनि व मा तुख़फ़ी अस्सुदूरु " तो अपनी बहुत ज़्यादा मुराक़ेबत करेंगे।

हाँ अगर इन तमाम बातों का हमारे तमाम वुजूद को यक़ीन पैदा हो जाये तो परेशानियों, मुश्किलों और इख़्लास के ख़तरों से सही हो सालिम गुज़र जायेंगे, इस शर्त के साथ कि इस माद्दी दुनिया के ज़र्क़ बर्क़ वसवसों के मुक़ाबिले में हम अपने आप को अल्लाह के सपुर्द कर दें और हमारी ज़बान पर यह कलमें हों कि ऐ

अल्लाह हमें दुनिया और आख़ेरत में एक लम्हे के लिए भी अपने से दूर न रखना। “ रब्बि ला तक्लिनी इला नफ़्सी तरफ़ता ऐनिन अबदन ला अक़ल्ला मिन ज़ालिक व ला अक्सरा ”[१४]

ऐ अज़ीज़म अपने कामों को अल्लाह के सपुर्द करने का मतलब कार व कोशिश को छोड़ कर हाथ पर हाथ रख कर बैठना नही है बल्कि मतलब यह है कि जितना तुम कर सकते हो ख़ुद साज़ी के लिए अंजाम दो और जो तुम्हारी ताक़त से बाहर हो उस को उस पर छोड़ दो, तमाम हालत में अपने आप को उसके सपुर्द कर दो और तुम्हारी ज़बान पर यह कलमें जारी रहने चाहिए -

इलाही क़व्वि अला ख़िदमतिका जवारिही

व अशदुद अला अलअज़ीमति जवानिहि

व हबलिया अलजिद्दा फ़ी ख़शयतिक

व अद्दवामा फ़ी अल इत्तिसालि बिख़िदमतिक।

अम्र बिल मारुफ़ और नही अनिल मुनकर

हज़रत इमाम महदी (अ. स.) की विश्वव्यापी हुकूमत में अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुनकर बहुत व्यापक पैमाने पर किया जायेगा। “अम्र बिल मारूफ़” का अर्थ है लोगों को अच्छे काम करने के लिए कहना और “नही अनिल मुनकर” का अर्थ है लोगों को बुराइयों से रोकना। इस बारे में कुरआने करीम ने भी बहुत ज़्यादा ताकीद की है और इसी वजह से इस्लामी उम्मत को मुंतख़ब उम्मत (चुना हुआ समाज) के रूप में याद किया गया है।[१५]

इसके ज़रिये तमाम वाजेबाते इलाही पर अमल होता है.[१६]. और इसको छोड़ना हलाक़त, नेकियों की बर्बादी और समाज में बुराइयों के फैलने का असली कारण है।

अम्र बिल मअरुफ़ और नही अनिल मुनकर का सबसे अच्छा और सबसे ऊँचा दर्जा यह है कि हुकूमत के मुखिया और उसके पदाधिकारी नेकियों की हिदायत करने वाले और बुराईयों से रोकने वाले हों।

हज़रत इमाम मुहम्मद बाकिर (अ. स.) ने फरमाया :

[اَلمَهدِي وَ أَصْحَابُهُ - يَأْمُرُوْنَ بِالمَعْرُوفِ وَ يَنْهَونَ عَنِ المُنْكِر" 17]

हज़रत इमाम महदी (अ. स.) और उनके मददगार अम्र बिल मअरुफ़ और नही अनिल मुनकर करने वाले होंगे।

बुराइयों से मुक़ाबला

बुराईयों से रोकना जो कि इलाही हुकूमत की एक विशेषता है, सिर्फ़ ज़बानी तौर पर नहीं होगा, बल्कि बुराईयों का क्रियात्मक रूप में इस तरह मुकाबला किया जायेगा, कि समाज में बुराई और अख़लाक़ी नीचता का वजूद बाक़ी न रहेगा और

इंसानी ज़िन्दगी बुराईयों से पाक हो जायेगी।

जैसे कि दुआए नुदबा, जो कि ग़ायब इमाम की जुदाई का दर्दे दिल है, में बयान हुआ है

[اَیْنَ قَاطِعُ حَبَائِلِ الْکِذْبِ وَ الإفْتَرَاءِ، اَیْنَ طَامِسُ آثَارِ الزَّیْغِ وَ الأهوَاءِ"[18 "

कहाँ है वह जो झूठ और बोहतान की रस्सियों का काटने वाला है और कहाँ है वह जो गुमराही व हवा व हवस के आसार को ख़त्म करने वाला है।

अल्लाह की हदों को जारी करना

समाज के उपद्रवी व बुरे लोगों से मुक़ाबले के लिए विभिन्न तरीक़े अपनाये जाते हैं। हज़रत इमाम महदी (अ. स.) की हुकूमत में बुरे लोगों से मुक़ाबले के लिए तरीक़े अपनाये जायेंगे। एक तो यह कि बुरे लोगों को सांस्कृतिक प्रोग्राम के

अन्तर्गत कुरआन व मासूमों की शिक्षाओं के ज़रिये सही अक़ीदों व ईमान की तरफ़ पलटा दिया जायेगा और दूसरा तरीक़ा यह कि उनकी ज़िन्दगी की जायज़ ज़रुरतों को पूरा करने के बाद समाजिक न्याय लागू कर के उनके लिए बुराई का रास्ता बन्द कर दिया जायेगा। लेकिन जो लोग उसके बावजूद भी दूसरों के अधिकारों को अपने पैरों तले कुचलेंगे और अल्लाह के आदेशों का उलंघन करेंगे उनके साथ सख्ती से निपटा जायेगा। ताकि उनके रास्ते बन्द हो जायें और समाज में फैलती हुई बुराईयों की रोक थाम की जासके। जैसे कि बुरे लोगों की सज़ा के बारे में इस्लाम के अपराध से संबंधित क़ानूनों में वर्णन हुआ है।

हज़रत इमाम मुहम्मद तक़ी (अ. स.) ने पैग़म्बरे इस्लाम (स.) से रिवायत नक्ल की जिसमें पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने हज़रत इमाम महदी (अ. स.) की विशेषताओं का वर्णन करते हुे फरमाया हैं कि

वह अल्लाह की हुदूद को स्थापित करके उन्हें लागू करेंगे...[१९]

न्याय पर आधारित फ़ैसले हज़रत इमाम महदी (अ. स.) की हुकूमत का एक महत्वपूर्ण कार्य समाज के हर पहलू में न्याय को लागू करना होगा। उनके ज़रिये पूरी दुनिया न्याय व समानता से भर जायेगी जैसे कि ज़ुल्म व सितम से भरी

होगी। अदालत के फैसलों में न्याय का लागू होना बहुत महत्व रखता है और इसके न होने से सब से ज़्यादा ज़ुल्म और हक़ तलफी होती है। किसी का माल किसी को मिल जाता है !, नाहक़ खून बहाने वाले को सज़ा नहीं मिलती !, बेगुनाह लोगों की इज़्ज़त व आबरु पामाल हो जाती है!। दुनिया भर की अदालतों में सब से ज़्यादा ज़ुल्म समाज के कमज़ोर लोगों पर हुआ है। अदालत में फैसले सुनाने वाले ने मालदार लोगों और ज़ालिम हाकिमों के दबाव में आकर बहुत से लोगों के जान व माल पर ज़ुल्म किया है। दुनिया परस्त जजों ने अपने व्यक्तिगत फ़ायदे और कौम व कबीला परस्ती के आधार पर बहुत से गैर मुंसेफाना फैसले किये हैं और उन को लागू किया है। खुलासा यह है कि कितने ही ऐसे बेगुनाह लोग हैं, जिनको सूली पर लटका दिया गया और कितने ही ऐसे मुजरिम लोग हैं जिन पर क़ानून लागू नही हुआ और उन्हें सज़ा नहीं मिली।

हज़रत इमाम महदी (अ. स.) की न्याय पर आधारित हुकूमत, हर ज़ुल्म व सितम और हर हक़ तलफी को ख़त्म कर देगी। वह जो कि अल्लाह के न्याय के मज़हर है, न्याय के लिए अदालतें खोलेंगे और उन अदालतों में नेक, अल्लाह से डरने वाले और बारीकी के साथ हुक्म जारी करने वाले न्यायधीश नियुक्त करेंगे ताकि दुनिया के किसी भी कोने में किसी पर भी ज़ुल्म न हो।

हज़रत इमाम रिज़ा (अ. स.), हज़रत इमाम महदी (अ. स.) के ज़हूर के सुनहरे मौके की तारीफ़ में एक लंबी रिवायत के अन्तर्गत फरमाते हैं कि

" فَاِذَا خَرَجَ اَشْرَقَتِ الأرْضُ بِنُوْرِ رَبِّهَا، وَ ضَعَ مِيزَانَ العَدْلِ بَيْنَ النَّاسِ فَلا يَظْلِمُ اَحَدٌ اَحَدًا 20)"

जब वह ज़हूर करेंगे तो ज़मीन अपने रब के नूर से रौशन हो जायेगी और वह लोगों के बीच हक़ व अदालत की तराज़ू स्थापित करेंगे, अतः वह ऐसी अदालत जारी करेंगे कि कोई किसी पर ज़र्रा बराबर भी ज़ुल्म व सितम नहीं करेगा।

प्रियः पाठकों ! इस रिवायत से यह मालूम होता है कि उनकी हुकूमत में अदालत में न्याय व इन्साफ़ पूर्म रूप से लागू होगा, जिससे ज़ालिम और ख़ुदगर्ज़ इंसानों के लिए रास्ते बन्द हो जायेंगे । अतः इसका नतीजा यह होगा कि ज़ुल्म व सितम बंद हो जायेगा और दूसरों के अधिकारों की रक्षा होगी

हवाले

[1] सूरए क़िसस आयत न. २४

[2] सूरए अम्बिया आयत न. ८३

[3] सूरए क़मर आयत न. १०

[4] सूरए यूसुफ़ आयत न. ११०

[5] सूरए बक़रा आयत न. २५०

[6] सूरए आलि इमरान आयत न. १९३

[7] बिहारुल अनवार जिल्द १८पेज न. १५८

[8] मुस्तदरक अल वसाइल जिल्द १ पेज न.९९ हदीस ८६, बिहारुल अनवार जिल्द ७० पोज न. २४५

[9] सूरए यूसुफ़ आयत न.८७

[10] सूरए बक़रह आयत न. २६१

[11] सूरए बक़रह आयत न. २६५

[12] सूरए आलि इमरान आयत न. २६

[13] सूरए इँसान आयत न. ३०

[14] बिहारुल अनवार जिल्द १४ पेज न. ३८७ हदीस न. ६

[15] .सूरः ए आले इमरान, आयत न. ११०

[16] . इस अहम वाजिब के बारे में हज़रत इमाम मुहम्मद बाक़िर (अ. स.) फरमाते हैं कि (" ان الامر بالمعروف و النهی عن المنکر --- فریضة عظیمة بها تقام الفرائض"(امر بالمعروف اور نهی عن المنکر ---)

अम्र बिल मारुफ़ और नही अनिल मुनकर ऐसे वाजिबात हैं जिन के सबब तमाम वाजेबात का क़ायम है

(मिज़ानुल हिकमत, मोतरज्जिम, जिल्द न. ८, पेज न. ३७०४)

[17] . बिहार उल अनवार, जिल्द न. ५१, पेज न. ४७

[18] . मफ़ातीह उल जिनान, दुआए नुदबा ।

[19] . बिहार उल अनवार, पेज न. ५२, बाब न. २७, हदीस न. ४

[20] बिहार उल अनवार, जिल्द न. ५२, पेज न. ३२१

फेहरिस्त

दर्से अख़लाक़.....1

सिफ़ाते मोमिन(१).....3

हदीस की शरह.....4

सिफ़ाते मोमिन(२).....9

सिफ़ाते मोमिन (३).....13

सिफ़ाते मोमिन (४).....20

सिफ़ाते मोमिन (५).....25

सिफ़ाते मोमिन (६).....30

सिफ़ाते मोमिन (७).....36

अल्लाह के अच्छे बन्दों के सिफ़ात.....41

पाँच नेक सिफ़तें.....44

खाना और इधर उधर देखना.....50

शियों के सिफ़ात(१).....59

शियों के सिफ़ात(२).....65

शियों के सिफ़ात(३).....70

शियों के सिफ़ात(४) 74

शियों के सिफ़ात(५) 82

बेनियाज़ी 89

हिदायत व रहनुमाई 101

नसीहत व हिदायत इस्लाम की नज़र में 105

एतेमाद व सबाते क़दम 108

गुनाहगार वालिदैन 111

सब्र व तहम्मुल 113

मुश्किलें इंसान को सँवारती हैं 117

घरवालों की अहम ज़िम्मेदारी 121

शुक्रिये व क़द्रदानी का जज़्बा 122

नज़र अंदाज़ करना 130

ख़न्दा पेशानी 137

इस्लाम की नज़र में खुश मिज़ाजी का मक़ाम 138

हुस्ने अख़लाक़ 144

कस्बे रोज़ी 149

हर चीज़ के रीशे (जड़) तक पहुँचना चाहिए 160

मरातिबे कमाले ईमान 168

तवक्कुल और तफ़वीज़ में फ़र्क़ 170

ज़िन्दगी के पाँच दर्स और शुबहात को तर्क करना 173

अक़्ल और अख़लाक 182

दिक़्क़त 188

ग़ौर व फ़िक्र इस्लाम की नज़र में 200

नसीहतें 224
बुराइयों से मुक़ाबला 271
फेहरिस्त 279